Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सारिका
कहानियों और कथा जगत की संपूर्ण पत्रिका
वर्ष :28, अंक :436, अगस्त, 1988

The Times of India
One Hundred and Fifty Years

किशोर प्रेमकथा अंक

प्रकाशक :
रमेश चंद्र

संपादक :
अवधनारायण मुद्गल
उपसंपादक :
सुरेश उनियाल
महेश दर्पण
वीरेंद्र जैन

विभागीय सहयोगी :
बिमला रानी
ज्ञान सिंह
प्रोडक्शन :
हरेंद्र सिंह नेगी
सुनील चौहान
सज्जा प्रबंधक :
लोकेश भार्गव

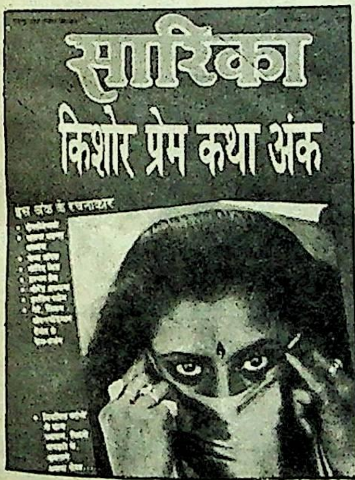

आवरण पारदर्शी : **धर्मवीर जयनर**
आवरण सज्जा : **कला विभाग**
अंक सज्जा : **हरिप्रकाश त्यागी**

कथा रचनाएं

10. एक था लड़का, एक थी लड़की :
ख्वाजा अहमद अब्बास
16. खूबसूरत मगर मजबूर :
हरमन हेस
22. पिया का नाम दिया :
बानो कुदसिया
32. प्रेमावेग
इरविंग स्टोन
34. गुफाएं :
धीरेंद्र अस्थाना
39. रूपहली रातें :
दोस्तोयेव्स्की
43. कसक :
जेम्स जॉयस
60. त्यों त्यों प्रकट होत...:
गोविंद मिश्र
68. बेचारे लोग :
शुभकार कपूर
74. पार्क की बैंच पर चश्मा :
अतुल शर्मा

युवा प्रेम प्रसंग

15. गेटे
31. अब्राहम लिंकन
49. रवींद्रनाथ ठाकुर

विशेष आयोजन

64. रस्किन बांड से अंतरंग साक्षात्कार :
सुधीर मिश्र
72. प्रौढ़ व्यापक और परिक्व अनुभव संसार :
राजकुमार सैनी

अन्य आकर्षण

8. आपकी बात
18. दास्ताने अलफ लैला
46. रहस्य रोमांच
50. अपराध कथाएं
57. धारा के विरुद्ध :
राजेंद्र राव
58. फाइल पढ़ि-पढ़ि जग मुआ :
गोपाल चतुर्वेदी
63. कथा दर्शन :
सुधीश पचौरी
66. किस्से कचहरी के :
दिनेश चंद्र दुबे
77. इस बार का ज्ञानपीठ पुरस्कार :
बाल स्वरूप राही
78. नयी पौद
79. सारिका कथा पहेली
80. कृतियां

कॉपीराइट © 1988. बैनेट, कोलमैन एंड कंपनी लि., विश्वभर में सर्वाधिकार सुरक्षित, बिना पूर्वानुमति के सामग्री का किसी भी रूप में पुनर्प्रस्तुतीकरण वर्जित.

संपादकीय कार्यालय :
10 दरियागंज,
नयी दिल्ली-110002
दूरभाष : 271911
विज्ञापन व प्रसार
7, बहादुरशाह जफर मार्ग
नयी दिल्ली-110002
दूरभाष : 3312277

अन्य कार्यालय
डा. दादाभाई नौरोजी मार्ग
बंबई-400 001

फ्रेजर रोड, पटना

अनुपम चैंबर्स, टोंक रोड
जयपुर

139 आश्रम रोड
अहमदाबाद-1

13-1-2 गवर्नमेंट प्लेस ईस्ट
कलकत्ता-700062

''गंगा गृह'' तीसरी मंजिल
6-डी. नंगामवक्कम हाई रोड
मद्रास-600034

88. महात्मा गांधी रोड,
बंगलूर

407-1, तीरथभवन, क्वार्टर गेट
पुणे-411 002

326, स्टेशन एप्रोच, सडबरी
वैंबले मिडिलसेक्स, लंदन यू.के.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपकी बात

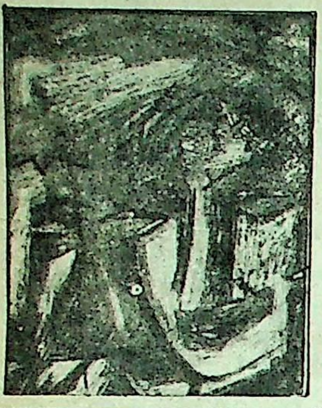

अंक का सौंदर्य

सारिका के नये अंकों की इंतजारी बड़ी उत्सुकता से करता रहता हूं इसलिए कि सारिका से अच्छी कुछ उत्कृष्ट रचनाओं की उम्मीद रहती है– अच्छी रचनाओं का मैं कायल हूं और सारिका इस मानी में कुछ दूर तक रचनात्मकता की भूख को मिटाती है. कभी नयी मौलिक रचनाएं प्रकाशित करती है जिन्हें पढ़कर तबियत खुश हो जाती है, सृजनात्मकता का सहज सौरभ अनायास प्राप्त हो जाता है.

श्रवणकुमार की 'मैं और तुम' गजब की प्रवाहमयी रचना है– बहुत संयत, बहुत गंभीर, बहुत सूक्ष्म फिर भी कितनी अपनी, कितनी आत्मीय-सृजनात्मक ऊर्जा अपने चरम बिंदु अपने चरमोत्कर्ष पर अधीष्ठित लगती है. संक्षिप्ति में सारगर्भिता, रूमानियत में शिष्टता, मैं और तुम के चिर-सनातन संबंधों को उकेरती हुई, परत दर परत उभारती हुई-प्रारंभ से अंत तक पाठक को अपनी लपेट में बहाती हुई और अंत, लगता है, अंत हुआ ही क्यों? क्यों न और बातें चलती रहीं. और हम उसमें, कथा प्रवाह में डूबते रहें. आनंद अस्थाना की 'महाभियोग' भी खूब सुंदर रचना है– कुछ विस्तार अवश्य है पर उतना खटकता नहीं– और डा. नायक का अंतिम अंतर्द्वन्द्व तो कमाल का है, बहुत सूक्ष्म. अस्थानाजी ने शायद एक अनछुए प्रसंग को, एक अस्पृष्ट पृष्ठ को, एक अति सूक्ष्म संवेदनात्मक अंतर्द्वन्द्व को बड़ी दक्षता, कहूं निष्णातता के साथ उद्घाटित, अनावृत्त, भास्कर-भास्मानं किया है. रमेश राजहंस की रचना 'एक चिथड़ा सुख' भी बड़ी मनमोहन, मुग्धकारी आत्मीय रचना है. नवोदित 'रचनाकार ने रचना, रचनात्मकता, रचना-प्रक्रिया पर अपना पूर्ण अधिकार और कौशल दर्शाया है–रचना बड़ी ऊर्जा संपन्न और मोहिनी बन पड़ी है. इसी तरह नये हस्ताक्षर महावीर राजी की रचना 'फेंसी ड्रेस' भी काफी समृद्ध रचना बन पड़ी है. लगता है, लेखक नया नहीं है, रचनात्मकता के क्षेत्र में काफी प्रौढ़-प्रशिक्षित है. इन रचनाओं के आगे अन्य रचनाएं फीकी लगती हैं. यहां तक कि सुरेंद्र अरोड़ा की कहानी 'नाच चल रहा है' भी कुछ जीवंत होती हुई भी बहुत प्रभावित नहीं करती और 'छतरी' और 'चमड़ी के रंग' भी मनमानस से यों ही फिसल जाती हैं. क्योंकि स्थायी प्रभाव नहीं छोड़तीं. देवेंद्र सत्यार्थी, शिवप्रसाद सिंह एवं कैथरीन मेंसफील्ड की रचनाएं अपने-अपने ढंग से काफी प्रभावशालिनी सिद्ध हुई. पर मुझे यह कहने में कोई संकोच नहीं कि प्रथमोल्लिखित चार रचनाएं- इस अंक की शोभा हैं. इस अंक की विशिष्ट सिद्धि.

□ **रवींद्रनाथ ओझा, बेतिया (बिहार)**

विचारों के बेतालों की मुक्ति

अजय कुमार सिंह की कहानी 'कुत्ते' में लेखक ने कुत्ते जैसा सामान्य विषय लेकर मनुष्य का साहस, आक्रोश, पुरूषार्थ तथा सबसे बढ़कर निरीहता जैसे आवेगों को बहुत सूक्ष्मता से चित्रित किया है.

'सुनो परीक्षत सुनो' जैसे कथानकों की आवृत्ति ही तो सारिका को सार्थक करते हैं. कथा प्रतिष्ठित अवतारों के आचरण पर निष्पक्ष और निर्भीक चिंतन करनेवालों को अवलंब देती है.

□ **अमर सिंह, आगरा**

व्यंग्य पर व्यंग्य

कमल लिखित रचना 'वर्षगांठ मनाना' को 'व्यंग्य' का नाम देना व्यंग्य विधा के साथ अन्याय है. इस रचना के वाक्य-प्रयोग बचकाने हैं, व्यंजना का अभाव है.

उदाहरणार्थ- "कहने को तो राजे-रजवाड़े नहीं रहे, फिर भी भारत तो राजाओं के हाथों में ही कैद है" के स्थान पर "कहने को तो राजे-रजवाड़े नहीं रहे, फिर भी भारत तो राजाओं का ही देश है." ऐसा कहने में व्यंग्यार्थ चमत्कारजनक होता.

वस्तुतः व्यंग्य उसे कहते हैं, जहां वाच्यार्थ कुछ और हो तथा व्यंग्यार्थ कुछ और संस्कृत काव्यशास्त्र में व्यंग्य प्रधान काव्य (रचना) को उत्तम काव्य कहा गया है.

'वर्षगांठ मनाना' के लेखक ने प्रायः आधी रचना के बाद से वाच्यार्थ में ही बात कह डाली है और व्यंग्य के विषय 'राजीव गांधी और सरकार' का सीधा-सीधा नामोल्लेख किया है. मेरी दृष्टि में यह व्यंग्य के नाम पर राजीव गांधी और उसकी सरकार पर सीधा आक्षेप है, जो व्यंग्य विधा का अपमान है. व्यंग्य रचना में लेखक को व्यंग्य का विषय, स्थल और वास्तविक अर्थ नहीं बताना पड़ता, वह काम पाठकों का होता है. सारिका जैसी उत्कृष्ट पत्रिका में ऐसी रचना को देने का कारण जान सकता हूं?

□ **सत्येंद्रशर्मा हाजीपुर (बिहार)**

द्विवेदीजी सिद्ध उपन्यासकार हैं

सारिका (मई, 88) में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी पुण्यतिथि पर श्री प्रभाकर श्रोत्रिय के गवेषणात्मक लेख को देखकर प्रसन्नता हुई. लेकिन वे 'पुनर्नवा' के अतिरिक्त आचार्यजी की अद्भुत कल्पना प्रसूत रचनाओं 'बाणभट्ट की आत्मकथा', 'चारूचंद्र लेख' और 'अनामदास का पोथा' को उपन्यास नहीं मानते यह आश्चर्यजनक लगा. वस्तुतः 'बाणभट्ट की आत्मकथा' और 'चारूचंद्र लेख' आख्यायिका धर्मी रचनायें होने पर भी महाकाव्य के सभी गुणों से युक्त युगांतकारी रचनायें हैं, जो आचार्य द्विवेदी को सही अर्थों में सिद्ध (साहित्यकार) रचनाकर्मी घोषित करती हैं.

यदि बाणभट्ट और चंद्रदीधिति पुरुषपुर की ओर चले जाते हैं तथा क्रियाशक्ति निपुणिया की मृत्यु हो जाती है– क्या इसी बजह से महाराज हर्षकालीन भारत के इतिहास के अनछुये पृष्ठों पर रंजक प्रकाश डालनेवाली इस रचना को अधूरा माना जायेगा?

इसी प्रकार 'चारूचंद्र लेख' की मूल कहानी यद्यपि एक जैन कथा से ली गयी है और वह कथानायक राजा सातवाहन और सिद्धयोगिनी रानी चंद्रलेखा के जन-जागरण प्रयासों में समाप्त हो जाती है, परंतु इस शक्तिशाली रचना को समझने के लिए आचार्य द्विवेदी की 'हिंदी का आदिकाल' व्याख्यानमाला को पढ़ना होगा (आ. हजारी प्रसाद ग्रंथावली-3 में संग्रहीत) जिसमें गाहड़वार राजा गोविंदचंद्र और राजा जयचंद्र के सभामंत्री विद्याधर पंडित का महिमामंडित उल्लेख है. स्पष्ट ही राजा गोविंदचंद्र देव 'चारूचंद्रलेख' के कथा नायक हैं. व्याख्यान माला में दानवीर जगडू शाह का भी उल्लेख है, किंतु यह विषयांतर होगा.

'चारूचंद्र लेख' मध्यकालीन भारतीय और हिंदी साहित्य के इतिहास की विस्मयकारी रचना है- ठीक उसी प्रकार जैसे 'बाणभट्ट' हर्षकालीन भारत की. दोनों रचनायें हिंदी साहित्य की क्लासिक श्रेणी की रचनायें हैं. मुझे विश्वास है कि अगले हिंदी साहित्य के इतिहास में उनका आकलन इसी दृष्टि से किया जायेगा.

आचार्य द्विवदी सिद्ध रचनाकार इसलिये भी हैं कि उन्होंने 'पुनर्नवा' 'बाणभट्ट' और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'चारूचंद्र लेख' तीनों रचनाओं में सिद्धों और योगियों की कल्याणकारी शक्तियों की महिमा बताई है– उन्हें महिमान्वित भी किया है. उदाहरण के लिये 'पुनर्नवा' की विध्यावटी के सिद्ध को लीजिये, समुद्रगुप्त के नर्मसखा-गोपालक की प्रिया मृणाल से मिलाया तथा समर्पिता चंद्रा के साथ न्याय किया. इसी प्रकार 'बाण' के आचार्य अघोर भैरव-देवी महामाया और सौगतधर्मी सन्यासी ने कथासूत्र को रोचकता से आगे बढ़ाया है. इतना ही नहीं देवी महामाया के लाखों शिष्यों ने ही उस समय देश के सीमांत की रक्षा की थी. 'चारूचंद्र लेख' में सिद्धों-योगियों के पतनकारी प्रभाव का उल्लेख भी है, किंतु अमोघवज्र देवी विष्णुप्रिया, और अन्याय तांत्रिकों के साथ दिग्भ्रमित रानी चंद्रलेखा के चरित्रों के साथ आचार्यजी ने सिद्ध साहित्य के अनेक रहस्य खोले हैं.

'अनामदास का पोथा' या 'रैक्व आख्यान' भले ही बाद में लिखी गयी रचना है, लेकिन वैदिककालीन भारत की इस उपन्यासिका में आचार्य द्विवेदी ने तत्कालीन ऋषि-समाज की जीवन शैली और विश्वासों पर मनोरंजक दृष्टिपात किया है.

□ **अशोक श्रीवास्तव, विदिशा (म.प्र.)**

सारिका की बात ही कुछ और थी

सारिका कई सालों से पढ़ता आ रहा हूं. अब तो काफी महंगी भी हो गयी है. पहले सारिका पढ़ने को मन करता था. पढ़कर एक सुकून-सा मिलता था. अब हर अंक निराश ही करता है. मई का अंक पूरा पढ़ चुका हूं. कुछ भी ऐसा नहीं लगता जो कुछ छाप छोड़ गया हो मन पर. एक दौर में 'मुआवजा' जैसी कहानी भी छपी थी सारिका में, लगता है अब अच्छी कहानियों का अभाव हो गया है.

'छतरी' को जबर्दस्ती कहानी बनाने की कोशिश की गयी है, सच तो यह है कि यह कहानी है ही नहीं.

'कुत्ते' कहानी में अजयसिंह ने आज के खोखले समाज व लोगों की सोच का अच्छा चित्रण किया है.

□ **आनंद धौलाखंडी, अलमोड़ा (उ.प्र.)**

मेड टु आर्डर कहानियां

'कथा दर्शन' के माध्यम से सुधीश पचौरी ने भारत में रचनात्मक लेखन की अकादमी-शिक्षण की योजना की जानकारी दी है तथा आवाम को ऐसे प्रयोगों से 'बिदकने' को मनाही की है...

अपने समाजवादी (?) राष्ट्र में स्पष्टतौर पर बहुत पहले से ही एक वर्ग विशेष का वर्चस्व बना रहा है जो सिर्फ लेखन ही नहीं, हर क्षेत्र में 'मेड टु आर्डर' की शिक्षा-दीक्षा की वकालत करता है तथा उसे वतन के फरोग के लिए 'मस्ट' मानता है. दरअसल, 'डिमांड और सप्लाई' का सिलसिला आजादी प्राप्त करने के तुरंत बाद ही देश के तथाकथित सुसंपन्न समुदाय के लोगों ने शुरू किया तथा इसका प्रयोग उन्होंने अर्थनीति, राजनीति, कला, वाणिज्य, शिक्षा और पत्रकारिता के क्षेत्र में किया ताकि देश की लगाम उनकी मुट्ठी से बाहर न हो जाये. लेकिन अब जब इन सारे क्षेत्रों में उन्हें यह प्रयोग प्रत्याशित सफलता देता दिखलायी नहीं दिया तो उन्होंने साहित्य के क्षेत्र में इसका प्रयोग कर देश की संस्कृति का ही आमूल चूल परिवर्तन करना चाहा है ताकि वे लेखकों से प्रतिबद्ध लेखन करवा सकें और समाज के आदर्श की 'मांग' के बदले वे अपनी नीतियों की 'पूर्ति' कर सकें.

इसी 'मेड टु आर्डर' के रोग को खुलासा करती हुई कहानी (फेंसी ड्रेस) (नये हस्ताक्षर) की होकर भी अति सशक्त और ताजा रचना है- लेखक को बधाई.

□ **धनेशदत्त पांडेय, मधेपुरा (उ.प्र.)**

जमाना गुजर गया

'दादाजी दंदे', 'गुड़ियाघर', 'मैं और तुम', 'फेंसी ड्रेस' तो सामान्य, किंतु 'सुनो परीक्षित सुनो', और 'एक चिथड़ा सुख' उत्कृष्ट रचनायें लगी. 'सुनो परीक्षित सुनो' में लेखक ने जिस मौलिक सोच को अभिव्यक्ति दी है काबिले तारीफ है. पौराणिक काल के जिन आदर्शों को आज तक आदर्श माना जाता है उनका दूसरा पक्ष कितना घृणित और निंदनीय है. कहानी में खूब उजागर हुआ है. दूसरी कहानी 'एक चिथड़ा सुख' पढ़कर तो ऐसा लगा जैसे बहुत दिनों बाद किसी अच्छी रचना से मुलाकात हुई है.

महेश कटारे 'सुगम', विदिशा (म.प्र.)

प्रतियोगिता परिणाम

आचार्य रामचंद्र शुक्ल हिंदी परिषद, बस्ती ने 'सर्वेश्वर दयाल सक्सेना की स्मृति में अखिल भारतीय हिंदी कहानी प्रतियोगिता का आयोजन किया था. जिसके सभी पुरस्कारों विजेताओं को सारिका परिवार की ओर से बधाई.

निर्णायक मंडल में सर्वश्री राजेंद्र राव, संजीव और आनंद अस्थाना थे. प्रथम पुरस्कार राजेंद्र लहरिया कृत 'देशांतर' पर द्वितीय पुरस्कार प्रमिला भजेजी को 'नेमप्लेट' पर और तृतीय पुरस्कार एन.आर. श्याम को 'पत्र मित्र' के लिए दिया गया.

बधाई

प्रख्यात हिंदी साहित्यकार श्री उपेंद्रनाथ 'अश्क' को महाराष्ट्र उर्दू अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया है.

वर्ष 1987-88 के लिए अहिंदी भाषी लेखकों के द्वारा हिंदी में लिखी पुस्तकों पर पुरस्कार देने की योजना के अंतर्गत हिंदी की प्रतिष्ठित लेखिका राजी सेठ के कहानी संग्रह 'यात्रा-मुक्त' को केंद्रीय हिंदी निदेशालय, भारत सरकार, की विशेषज्ञ समिति ने पुरस्कृत करने का निश्चय किया है.

समकालीन कथा-शिल्पी मंजूर एहतेशाम को वर्ष 1987 के 'श्रीकांत वर्मा स्मृति पुरस्कार' के लिए चुना गया है.

मंजूर एहतेशाम को यह पुरस्कार उनके उपन्यास 'सूखा बरगद' के लिए दिया गया है.

चंद्रकांता को उनके उपन्यास 'ऐलान गली जिंदा है' पर जे. एंड के. एकेडमी ने पुरस्कृत किया है.

उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान ने वर्ष 1984 के लिए हिंदी के शीर्षस्थ कथाकार रामदरश मिश्र को उनकी निबंध पुस्तक 'जहां मैं खड़ा हूं' पर 'पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी नामित पुरस्कार' से सम्मानित करने की घोषणा की है. इसी क्रम में सुप्रसिद्ध उपन्यासकार स्वदेश भारती की औपन्यासिक कृति 'औरतनामा' को 'प्रेमचंद्र नामित पुरस्कार' की घोषणा की है.

अंग्रेजी के सुप्रसिद्ध भारतीय साहित्यकार राजा राव को साहित्य के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान के लिए 25,000 डालर के प्रतिष्ठित 'न्यटाट पुरस्कार' से सम्मानित किया गया है.

प्रो. राजाराव यह पुरस्कार पाने वाले पहले एशियाई साहित्यकार हैं.

सभी पुरस्कार विजेताओं को सारिका परिवार की ओर से बधाई.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जन्म : 7 जून, 1914 पानीपत
निधन :
'इन्कलाब' जैसे चर्चित उपन्यास और 'आवारा', 'मेरा नाम जोकर' जैसी सुप्रसिद्ध फिल्मों के स्क्रिप्ट लेखक व अपने समय के सम्मानित पत्रकार और फिल्म निर्देशक.

ख्वाजा अहमद अब्बास

एक था लड़का एक थी लड़की

एक था लड़का. एक थी लड़की.
लड़के का नाम, मान लीजिये था निर्मल.
लड़की का नाम मान लीजिये, था आशा.

लड़का वाडीबंदर गुड्स ट्रेन डिपो में काम करता था, मगर रहता था थाने में. क्योंकि उससे करीब कहीं सौ रुपये माहवार पर कमरा मिलना असंभव था. उसे महंगाई अलाउंस मिलाकर कुल तीन सौ रुपये तनख्वाह के मिलते थे. सौ रुपये किराया देकर उसके पास सिर्फ दो सौ रुपये बचते थे. जिसमें से अस्सी रुपये उसे घर भेजने होते थे. अपनी बूढ़ी मां और छोटी बहन के गुजारे के लिए, जो उत्तर प्रदेश के एक गांव में रहती थीं. बाकी एक सौ बीस रुपये में निर्मल को गुजारा करना पड़ता था. यह तब ही हो सकता था, कि वह खुद खाना पकाये. सो, उसने राशन-कार्ड बनवा लिया था और दाल-भात पका लेता था या रोटी और कोई सस्ती-सी तरकारी.

सुबह उठ कर पहले चाय बनाकर पीता था. फिर खाना पकाता था. फिर उस खाने को डिब्बे में डाल कर अपने दफ्तर ले

किसे कहते हैं प्यार... और क्या होती है मुहब्बत...? उर्दू के प्रख्यात कथाकार की चर्चित कहानी बता रही है कि जब दो निर्दोष जन मिलते हैं तब क्या होता है?

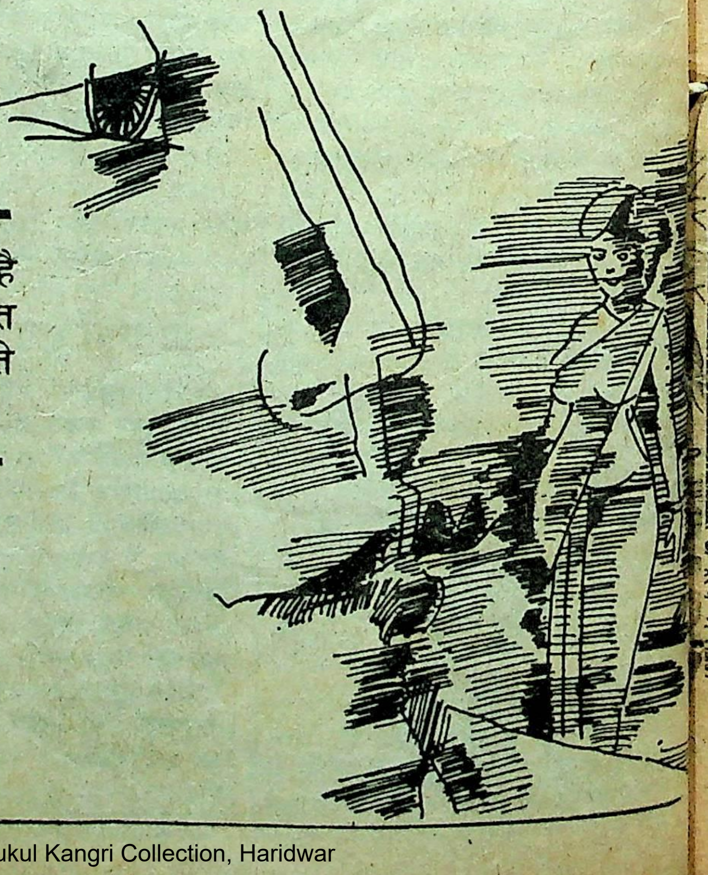

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाता था. शाम को काम तो साढ़े पांच बजे खत्म हो जाता था, मगर घर पहुंचते-पहुंचते रात हो जाती थी. शाम का खाना रात को पकाना पड़ता था. कभी-कभी सवेरे उठने से बचने के लिए दोपहर का खाना भी रात को ही पका लेता था, और उसी को लेकर दफ्तर चला जाता था.

लड़की पंजाब के एक कस्बे से आयी थी. फिल्म में काम ढूंढने के खयाल से. पहले दस दिन तो मां के एक रिश्तेदार के यहां ठहरी. सूरत-शक्ल अच्छी-खासी थी, मगर स्टूडियोओं का चक्कर लगाने पर भी कोई काम न मिला, सिवाय इसके कि एक दलाल ने उससे कहा था कि मैं काम दिलवाये देता हूं, मगर "डायरेक्टर का बिच्छू काटेगा तुम्हें. अगर तैयार हो, तो पांच सौ रुपये माहवार का कंट्रेक्ट करवाये देता हूं." जिस अंदाज से आंख मारकर उस दलाल ने कहा था, कि डायरेक्टर का बिच्छू काटेगा तुम्हें आशा को अंदाजा हो गया था कि यह किस किस्म का जहरीला बिच्छू है, उस वक्त वह ऐसी शर्तों पर काम करने के लिए तैयार नहीं थी. सो, वह वहां से चली आयी और फैसला कर लिया कि अब कभी न जायेगी वहां.

दस दिन के बाद उसके रिश्तेदार की बीवी ने उसे घर से निकाल दिया यह कहकर कि उनके घर में मेहमान रखने के लिए जगह नहीं है. दरअसल उसे इन फिल्मी छोकरियों पर कुछ एतबार नहीं था कि कब उसके पति पर ही डोरे डालना शुरू कर दें.

वह पंद्रह दिन एक एक्स्ट्रा लडकी के यहां रही, जो अकेली एक खोली में रहती थी. वह जब 'नाइट-शूटिंग' के लिए जाती, तो आशा उसके बिस्तर पर सो जाती. जब उसकी 'नाइट-शूटिंग' न होती, तो उसके पलंग के नीचे जमीन पर अपना बिस्तर कर के सो जाती, मगर एक्स्ट्रा लड़की के जो चाहने वाले थे, एक्स्ट्रा और एक्स्ट्रा-सप्लाइर... वह जब आशा पर डोरे डालने लगे, तो

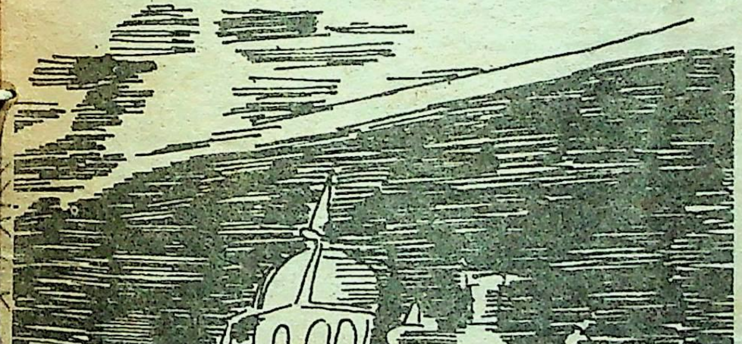

एक्स्ट्रा-लड़की ने भी उस मुकाबले की ताब न लाकर उसे घर से निकाल दिया. बहाना यह बनाया कि उसे संदेह है कि जब वह नहीं होती, तो आशा उसकी लिपस्टिक का इस्तेमाल करती है और उसके तकिये में आशा के सोने से जुएं हो गयी हैं.

जब एक्स्ट्रा-लड़की की खोली उसने छोड़ी, तो दो दिन से उसने खाना नहीं खाया था. घर से चुराकर जो डेढ़ सौ रुपये लायी थी, वह कब के खत्म हो चुके थे. दो-चार दिन अपनी चांदी की चूड़ियां बेचकर उन पर गुजारा किया. अब वह रुपये भी खत्म हो चुके थे. एक दिन तो केले खाकर ही गुजारा कर लिया. अगले दिन पानी पीकर ही सो रही. तीसरे दिन जब एक्स्ट्रा-लड़की ने उससे जाने को कहा और किराये के बदले में उसका बिस्तर और दो साड़ियां रख लीं, तो आशा के पास कोई उपाय न रहा सिवाय उस दलाल के पास वापस जाने के, मगर स्टूडियो चेंबूर में था और खोली परेल में थी. पैदल चलकर जब चेंबूर पहुंची, तो गले में कांटे पड़ चुके थे. आंखों में गढ़े पड़े हुए थे. परेशान बालों में रास्ते की धूल अटी हुई थी. चेहरे पर हवाइयां उड़ रही थीं. अच्छी-खासी भूतनी लगती थी. ऐसी हालत में स्टूडियो के दरबान ने बाहर ही रोक दिया. दलाल जब एक और लड़की को साथ लिये स्टूडियो से बाहर निकला, तो आशा हिम्मत कर के आगे बढ़ी, "नमस्ते जी!" उसने कहा.

दलाल ने उसकी तरफ ऐसे देखा, जैसे पहले कभी देखा ही नहीं था. फिर भी आशा ने कहा, "आपने शायद मुझे पहचाना नहीं. मैं आशा हूं. आप ने कहा था कि काम दिलवायेंगे. मैं अब हर शर्त के लिए तैयार हूं."

दलाल ने उसे झिड़क दिया, "चल, अपना रास्ता ले. मैंने तो तुझे पहले कभी देखा ही नहीं. वायदे का सवाल नहीं पैदा होता." फिर अपने साथ जो लड़की थी, उसे संबोधित कर के कहा, "न जाने कहां से चुड़ैलें आ जाती हैं? ख्वाहमख्वाह एक शरीफ आदमी के गले पड़ती हैं." यह कहा और एक टैक्सी में लड़की को साथ लेकर चला गया.

वह वहां से पैदल चलती हुई फिर परेल पहुंची. एक्स्ट्रा लड़की की खोली पर गयी, मगर वहां ताला पड़ा हुआ था. साथ वालों से पूछा, तो जवाब मिला कि वह कह गयी है कि आज तो मेरी नाइट-शूटिंग है. कल सुबह ही आऊंगी. आशा ने डरते-डरते पूछा, "मुझे चाबी देने को तो नहीं कह गयी है?" पड़ोसिन ने जवाब दिया, "बल्कि कह गयी है कि वह जो लड़की मेरे साथ रहती थी, वह आये, तो उससे कह देना कि अब इधर आने की तकलीफ न करे."

आशा वहां से भी चली आयी. परेल स्टेशन पर आकर प्लेटफार्म पर लगे नल से पानी पिया. फिर बेंच पर बैठी लोकल-ट्रेनों का आना-जाना देखती रही. सोचा, ट्रेन में बैठ जाऊं, मगर टीटी के डर से वहीं बैठी रही. जब साढ़े पांच बजे की 'फास्ट-ट्रेन' आयी, तो वह हिम्मत करके जो मुसाफिरों का रेला डिब्बे के अंदर जा रहा था, उस रेले में शामिल हो गयी. मालूम नहीं, कब और कैसे वह डिब्बे में चढ़ी, जो खचाखच भरा हुआ था. जब उसे होश आया, तो दरवाजे के पास लोहे के डंडे से लगी खड़ी थी. रेल अब चल रही थी, पथराई हुई आंखों से दरवाजे के बाहर ऊंची-ऊंची इमारतों को बिजली के खंबों और सड़कों पर आती-जाती मोटरों-बसों और आदमियों की भीड़ को देखती रही. रेल की रफ्तार अब तेज होती जा रही थी. स्टेशन पर स्टेशन छोड़ती जा रही थी. उसे ऐसा लगा कि रेल के पहियों की आवाज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उससे कह रही है : "बिच्छू. बिच्छू.. बिच्छू.. बिच्छू..."

फिर यह आवाज बदली और अब आहिस्ता होती हुई रेल के पहिये उससे कह रहे थे : "काटेगा.. काटेगा.. काटेगा.. काटेगा!"

किसी स्टेशन पर रेल आधे मिनट के लिए रुकी. कुछ मुसाफिर उतरे. उनसे ज्यादा मुसाफिर चढ़े. भीड़ उतनी ही रही, बल्कि उससे भी ज्यादा हो गयी. करीब खड़े हुए मुसाफिरों के बदन उसके बदन को छू रहे थे. उनकी गर्म-गर्म बदबूदार सांस वह अपने गालों पर महसूस कर सकती थी, मगर उस वक्त प्रतिरोध करने की न उसके पास ताकत थी, न हिम्मत. रेल की रफ्तार अब फिर तेज हो चुकी थी. रेल के पहियों की आवाज अब उससे कुछ और शब्द कह रही थी. बार-बार दुहरा रही थी... मर जा.. मर. जा.. मर जा.. मर जा. मर जा"

आसमान पर अंधेरा बढ़ता जा रहा था. इस अंधेरे में उसे अपने अतीत की झलकियां टिमटिमाते हुए चिरागों की तरह नजर आयीं...

भटिंडा कस्बे की एक गली. उस गली में एक छोटा-सा घर. उस घर में एक छोटी-सी लड़की.

जब वह लड़की पैदा हुई थी, तो उसकी मां ने उसका नाम रखा था, 'आशा'. क्योंकि उसे उस से बहुत-सी उम्मीदें थीं.

लेकिन अब एक और झलकी नजर आयी. उसकी मां बीमार पड़ी थी. बाप शराब पीकर बाहर से आया था. उसने बाप से पूछा था, "बाबा, दवाई ले आये?" हंस कर बाप ने जवाब दिया था, "तेरी मां के लिए दवाई तो नहीं लाया. सच यह है कि भूल गया, मगर अपने अंदर दारु भरवा लाया हूं." यह कह कर उसने एक भयानक कहकहा लगाया, जिससे कई बरस बाद और बारह सौ मील दूर आज भी बंबई में आशा भयभीत हो रही थी.

फिर मां की अर्थी को उठाकर लोग बाहर ले जा रहे थे. जब उसे श्मशान में जलाकर बाप वापस आया, तो आशा रो रही थी. बाप ने उसे समझाया, "चुप रह बेटी! तेरी मां अब दुनिया की सब तकलीफों से मुक्ति पा चुकी है. जहां वह है, वहां कोई तकलीफ, कोई दुख नहीं है. सिर्फ आनंद ही आनंद है."

दस बरस बाद यह शब्द आज रेल में फिर उसे सुनाई दिये. अब रेल के पहियों की आवाज उस से कह रही थी, "मर जा.. मर जा.. मर जा.. मर जा.. मर जा.."

वह सजाए-मौत का हुकम नहीं था. मुक्ति और आनंद पाने का एक सीधा-सादा आसान रास्ता था, मगर अभी एक और झलकी देखनी बाकी थी.

उसकी सौतेली मां, जो उसके बाप से काफी छोटी थी, और जिसका छोटा भाई आशा को देखते ही उस पर रीझ गया था, मगर आशा को वह बिलकुल पसंद नहीं था. आशा मैट्रिक तक पढ़ी हुई थी. उसकी सौतेली मां का भाई, जो उसका सौतेला मामा होता था, मिडिल-फेल था. मुंह पर चेचक के दाग थे. उसकी जबान पर हर किस्म की गालियां रहती थीं. जब आशा ने उससे, अपने सौतेले मामा से शादी करने से साफ इंकार कर दिया, तो एक दिन उसने (जब उसकी बहन और बहनोई दोनों बाहर गए हुए थे) मौके से फायदा उठाकर अपनी सौतेली भांजी पर हमला करना चाहा था. आशा ने शोर मचाकर सारे मोहल्ले को इकट्ठा कर लिया था. और सौतेले 'मामा' को भाग कर एक अंधेरी कोठरी में पनाह लेनी पड़ी थी. उस रात को जब सौतेली मां वापस आयी और उसने यह सब सुना, तो आशा से, जिसकी वजह से, उसके भाई की बदनामी हुई थी, उसे और चिढ़ हो गयी. वह अपने पति से कहने लगी, "किसी न किसी के साथ आशा के हाथ जल्दी से पीले कर दो. इससे पहले कि वह तुम्हारी इज्जत को खाक में मिला दे. चौधरी लक्खू राम कोई ऐसा बूढ़ा तो नहीं है. साठा-पाठा ही है. क्यों न उसका रिश्ता स्वीकार कर लो? वह कई बार कह चुका है."

आशा बूढ़े, पोपले, रंडवे लक्खू राम को जानती थी, जो उसके बाप से भी उम्र में बड़ा था. वह उस रात को घर से डेढ़ सौ रुपये चुराकर रेल से बंबई चली आयी थी.

अब तो उसने लगभग एक महीने तक बंबई और उसकी फिल्मी दुनिया को देख लिया था, बरत लिया था. अब उस पर बंबई का जादू कोई असर नहीं कर सकता था. अब वह भागती, दौड़ती हुई जगमगाती बंबई की भीड़-भाड़ और रौनक को नहीं देख रही थी. अब तो वह सिर्फ धड़धड़ाती हुई रेल के पहियों की आवाज को सुन रही थी, जो उससे अपनी आवाज में कह रही थी : "मर जा.. मर जा.. मर जा.. मर जा.. मर जा..."

आखिर को रेल की आवाज का बुलावा उसकी बुझती हुई संकल्प शक्ति पर हावी हो गया और आशा ने रेल की पटरियों के मजबूत जाल की तरफ छलांग लगा ही दी.

मगर अगले ही क्षण में न रेल की पटरियों ने उसको अपने फौलादी आलिंगन में लिया, न मौत ने उसे मुक्ति और आनंद प्रदान किया. वह इतनी कमजोर हो गयी थी कि बावजूद इस इरादे के कि चलती रेल से छलांग लगा दे, वह बेहोश हो कर वहीं डिब्बे के खुले दरवाजे के अंदर ही गिर पड़ी, जहां दो मजबूत हाथों ने उसे उठा लिया. यह हाथ निर्मल के थे, जो करीब ही खड़ा सोच रहा था कि सामने वाली बदसूरत लड़की शराब पिये हुए है, जो इस तरह झूम रही है या बेचारी को मिरगी की बीमारी है.

मगर थाने के अस्पताल में डाक्टरों ने उसे बताया कि लड़की न शराब पिये हुए है, न उसे मिरगी की बीमारी है, बल्कि वह कई दिन की भूखी है. कमजोरी के मारे बेहोश होकर गिर पड़ी थी. अस्पताल में उसे ग्लुकोज चढ़ाया गया, तो उसने आंखें खोल दीं. फिर दूध का गिलास पिलाया गया, तो बोलने के काबिल हो गयी.

"क्या नाम है तुम्हारा?" निर्मल ने पूछा.

"आशा." उसने आहिस्ता से जवाब दिया.

"कहां की रहने वाली हो?"

"पंजाब की."

"बंबई में कहां रहती हो?"

"कहीं नहीं."

"मेरे साथ चलोगी?"

"चलिये, मगर कहां?"

"जहां मैं रहता हूं. मैं शरीफ आदमी हूं. गुड्स डिपो में क्लर्क हूं. थाने में एक कमरे में अकेला रहता हूं. खुद खाना पकाना पड़ता है. तुम मेरा खाना पका दिया करना. मैं तुम्हें खाना खिला दिया करूंगा. कम से कम पेट में कुछ होगा, तो चलती रेल में बेहोश होकर तो नहीं गिरोगी."

"मुझे स्वीकार है."

और निर्मल पुलिस और अस्पताल वालों की अनुमति से आशा को घर ले आया.

पड़ोसियों ने टेढ़ी आंखों से एक जवान औरत को निर्मल के कमरे में जाते देखा, तो निर्मल ने उससे कहा, "बेचारी गरीब औरत है. भूख से बेहोश होकर रेल में गिर पड़ी थी. मैं खाना पकाने के लिए ले आया हूं."

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"वह तो ठीक है! मगर खाना पका कर सोयेगी कहां?" एक मुंहफट पड़ोसी ने जुमला कसा. निर्मल ने कोई जवाब नहीं दिया.

आशा को एक सूखी डबलरोटी का तोस और एक केला खाने को देकर निर्मल ने रसोई का कोना उसके सुपुर्द कर दिया और स्टोव जलाकर सामने रख दिया. आशा ने पानी में दाल को भिगो कर स्टोव पर पकने के लिए रख दिया और खुद एक थाली में आटा निकालकर गूंधने जमीन पर फसकड़ा मार कर बैठ गयी.

घंटे भर में खाना पक गया.

चार रोटियां और दाल निकालकर उसने निर्मल के सामने एक स्टूल पर कागज बिछाकर रख दिया.

"खाइये!"

"और तुम?"

"मैं बाद में खा लूंगी!"

"अच्छा." कह कर निर्मल ने खाना शुरू किया. आज गर्म रोटियों में से सोंधी-सोंधी खुशबू आ रही थी. दाल में लहसुन का बघार दिया गया था, जिस का कभी निर्मल को खयाल भी न आया था. उसने सोचा, औरत के पकाने में मजा ही अलग आता है. मर्द तो बस यूं ही खाना पका लेते हैं.

उसने खाना खा लिया, तो आशा ने नल पर ले जाकर बर्तन धोये. फिर उन्हें झाड़न से पोंछकर रख दिया.

"मैं हांडी ही में खा लूं?"

"क्यों, क्या प्लेट नहीं है?"

"है, मगर प्लेट धोनी पड़ेगी. हांडी तो वैसे भी मांजनी ही है. दो-दो बर्तन क्यों खराब करूं?"

"अच्छा भई, जैसा तुम्हारा जी चाहे, करो. अब खाना पकाने का डिपार्टमेंट तुम्हारे सुपुर्द है... तुम खाने के बाद बर्तन-भांडे बिना धोये रख देना. सुबह धुल जायेंगे. अच्छा अब मैं सो रहा हूं."

मगर बड़ी देर तक निर्मल न सो सका. बात यह थी कि एक नौजवान औरत के साथ अकेले कमरे में सोने का उसका पहला इत्तफाक था. इसलिए वह लेटा-लेटा कनखियों से आशा को देखता रहा. वह खाना खा रही थी. मगर अब कायदे और करीने से खा रही थी. वैसे नहीं. जैसे वह भूखों की तरह डबलरोटी और केले पर टूट पड़ी थी. खाना खाकर उसने एक उचटती हुई नजर निर्मल के पलंग की तरफ डाली और निर्मल ने फौरन आंखें बंद कर लीं और देर तक मीचे रखीं.

आशा ने बगैर आवाज पैदा किये बड़ी सावधानी से जूठे बर्तन धोये. फिर मांझे. फिर पोंछ कर रख दिये.

फिर उसने चटाई को (जो उसके लिए निर्मल ने पलंग के पास छोड़ दी थी) दीवार के पास सरकाया और उस पर अपने तह किये हुए बाजुओं का तकिया बनाकर लेट गयी, मगर उसको भी आज नींद नहीं आ रही थी. वह भी आज से पहले कभी किसी नौजवान मर्द के साथ एक कोने में न सोयी थी.

निर्मल बड़ी देर तक करवटें बदलता रहा. कभी-कभी जब उसका रुख उधर को होता, तो कनखियों से आशा की तरफ देखने लगता, फिर भी बाहर के बरामदे की रोशनी खिड़की में से आकर आशा के चेहरे पर पड़ रही थी. यह रोशनी का जादू था कि उसकी अपनी कल्पना की कारस्तानी थी, मगर हर बार उसे आशा पहले से ज्यादा खूबसूरत नजर आ रही थी.

जब उसने उसे चलती हुई ट्रेन में खड़ा देखा था, तो वह अच्छी-खासी चुड़ैल दिख रही थी.

जब वह बेहोश हो कर गिर पड़ी थी, और इंसानी हमदर्दी की भावनाओं के अधीन निर्मल ने उसे अपनी बांहों में उठा लिया था, तो वह केवल बेहोश, गरीब और बीमार औरत थी.

अस्पताल में जब उसे ग्लूकोज दिया जा रहा था और सुई लगाने के लिए डाक्टरों को उसकी बांह की नस बड़ी मुश्किल से मिली थी, तो वह सिर्फ एक दुबली-पतली बीमार औरत थी, जिसको देख कर किसी रोमांस या यौन-भावना की उत्तेजना नहीं हो सकती.

जब वह दूध पी रही थी, तो उसने एक भूखे बच्चे की तरह मासूमियत से जल्दी-जल्दी गिलास खाली कर दिया था.

पहली बार जब उसने आशा को एक यौन-दृष्टि से देखा, तो वह जमीन पर फसकड़ा मारे आटा गूंध रही थी.

अजीब बात यह थी (और यह निर्मल ने न किसी कहानी में पढ़ा था, न किसी उपन्यास में) कि जब वह रोटी खा रहा था, तो उसकी नरमी और गरमी में उसे उस लड़की के जिस्म की खुशबू आयी, जिसने अपने हाथों से आटा गूंधा था और रोटियां पकायी और सेंकी थीं.

और उस समय रात के ग्यारह बज रहे थे और वे दोनों एक अकेले कमरे में बंद थे. न उनको कोई देख रहा था, न देख सकता था... क्या उसे पनाह देने के बाद निर्मल का कोई हक नहीं था? क्यों नहीं था?

बीमार प्रेमी

नीना गर्ग

एक साहब को जाने क्यों यह वहम हो गया कि उनकी पत्नी किसी और व्यक्ति से प्रेम करती है. उनका व्यवहार रोज़-ब-रोज़ चिड़चिड़ा होता चला गया. पति द्वारा अपनी उपेक्षा पत्नी को सहन नहीं हुई. उसे लगा, कहीं कुछ गड़बड़ है. वह अपने पति को एक मनोवैज्ञानिक चिकित्सक के पास ले गयी और उसे वस्तु-स्थिति से परिचय कराया. चिकित्सक ने पत्नी से बाहर जाने को कहा. तन्हाई में उसने रोगीपति के समस्त हालात मालूम किये और गंभीरता से विचार करने लगा. "हूं!" देर बाद चिकित्सक ने झुकी गर्दन ऊपर उठायी, पूछा, "आपको कैसे पता चला कि आपकी पत्नी किसी और मर्द से प्रेम करती है?"

"बस, अनुमान है मेरा!" पति ने कहा, "देखिए महोदय! आपको शायद गलतफहमी हुई है. आपकी पत्नी नेक और चरित्रवान स्त्री है."

"नहीं डॉक्टर!" वह ऊंचे स्वर में बोला, "मुझे विश्वास है कि मेरी पत्नी किसी गैर-पुरुष से प्रेम की पींगे बढ़ा रही है."

चिकित्सक ने भरसक प्रयास किया कि उसका रोगी समझ जाये, किंतु वह अपने विश्वास पर अड़ा रहा. चिकित्सक ने फिर आने को कह उससे विदा ली.

रास्ते में पत्नी ने पति से पूछा, "शायद मेरे बारे में अब तुम्हारा संदेह समाप्त हो चुका होगा."

"हां डार्लिंग!" पति ने ठंडी सांस लेते हुए कहा, "इसमें मैं तुम्हारा कोई कुसूर नहीं मानता. कुसूर तो उस डॉक्टर का है जिसने तुम्हारी और प्रेम का हाथ बढ़ाया और वह भी बंद कमरे में. तभी पूछ रहा था कि आपको कैसे पता चला कि आपकी पत्नी किसी गैर-मर्द से प्रेम करती है?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोग तो लड़कियों को इस से कम हमदर्दी देकर भी अपना जिसी मतलब निकाल लेते हैं. उसे इतना सोचने-विचारने की क्या जरूरत थी.

वह हल्के से अपने पलंग पर बैठ गया. अंधेरे में उसकी आरजू भरी निगाहें चटाई पर लेटी लड़की के जिस्म पर लगी हुई थीं.

"क्यों जी, नींद नहीं आ रही?"

आशा की अप्रत्याशित आवाज ने जैसे निर्मल के मन का चोर पकड़ लिया हो. वह शर्मिंदा होकर फिर लेट गया.

"हां, नींद नहीं आ रही.. आज बहुत गरमी है न!" उसने बहाना बनाया, "सोचा था, सुराही से पानी लेकर पी लूं, मगर मुझे नहीं मालूम था कि तुम भी जाग रही हो."

आशा ने उठ कर गिलास भरा और निर्मल को दे दिया. गिलास देते वक्त उसकी उंगलियां निर्मल के हाथ को छू गयीं और निर्मल के तन-बदन में बिजली-सी कौंध गयी. निर्मल को पूरा गिलास पीना पड़ा.

आशा निर्मल से गिलास वापस ले कर चली गयी.

फिर अपने पलंग पर लेट कर निर्मल करवटें बदलने लगा.

"अजी, ओ!"

"हूं." निर्मल ने हुंकारा भरा.

"अगर नींद नहीं आ रही, तो कोई बात ही करो."

"बात करने को क्या है? मैंने तो कोई बात करने के काबिल काम ही नहीं किया."

"तुम्हारे मां-बाप क्या करते हैं?"

"मेरे बाप तो रेलवे में कर्मचारी थे. रिटायर हुए और मर गये. अब एक बूढ़ी मां है और एक छोटी बहन. उनकी खातिर मैंने कालेज छोड़कर रेलवे ही में नौकरी कर ली, मगर बंबई में काम करना पड़ रहा है. यहां तो किराये ही में इतना निकल जाता है कि घर सिर्फ अस्सी रुपये भेज पाता हूं. कोशिश कर रहा हूं कि झांसी डिवीजन में बदली हो जाये. तुम्हारे घर में कौन-कौन हैं? क्या भाग कर आयी हो बंबई?"

"सब हैं, और कोई भी नहीं है. एक बाप है, जिन्हें नशे में यह भी याद नहीं रहता कि उनकी कोई बेटी भी है. एक सौतेली मां है, जो एक बूढ़े आदमी के हाथ में मुझे बेचना चाहती थी. एक उसका भाई है. मेरा सौतेला मामा. जो अपनी भांजी के साथ मुंह काला करना चाहता था.. सो, मैं डेढ़ सौ रुपये चुराकर घर से भाग आयी थी, फिल्मी जादू से चकाचौंध हो कर, मगर यहां आ कर मालूम हुआ कि बेसहारा लड़कियों के लिए कोई जगह नहीं है यहां, सिवाय फारस रोड के. असल में सारा बंबई ही मुझे एक लंबा-चौड़ा फारस रोड (वेश्या-बाजार) ही लगा. कल रेल से छलांग लगाकर खुदकुशी करने की ताकत भी नहीं थी. बेहोश हो गयी! वहां से तुम उठा कर मुझे यहां ले आये बस इतनी-सी कहानी है मेरी!"

निर्मल ने कभी एक खूबसूरत, खुश-पोशाक और अमीर लड़की से इश्क किया था, जो उसके कालेज में पढ़ती थी, मगर इश्क दिल ही दिल में रहा और उस लड़की ने एक बड़े गवर्नमेंट अफसर के बेटे से शादी कर ली. उसके बाद से उसने ब्रह्मचार्य को अपनाने का निश्चय कर लिया था. 'इस तरह अपनी मां और बहन की सेवा भी कर सकता हूं.' उसने अपने मन को सांत्वना दी थी, मगर उस लड़की ने आ कर उसकी जिंदगी का सारा प्रोग्राम ही अस्त-व्यस्त कर दिया था.

"अजी हो!"

"हूं!"

"क्या. सो गये?"

"नहीं."

"फिर कुछ बात तो करो!"

"तुम रोटी बहुत अच्छी पकाती हो. इतना मजा खाने में कभी नहीं आया, जितना मजा आज मिला है."

"धन्यवाद!"

"कहां तक पढ़ी हो?"

"मैट्रिक पास किया है."

"मैट्रिक पास खाना पकाने वाली को तो तनख्वाह नहीं दे सकता मैं."

"तनख्वाह देने को कौन कह रहा है?"

"फिर?"

"फिर क्या? कल मैं चली जाऊंगी यहां से."

"जाने को कौन कह रहा है?"

"तुम्हारा अंदाज कह रहा है. तुम कुछ खुश नहीं हो मेरे आने से. शायद मेरे आने से तुम्हारी जिंदगी का प्रोग्राम गड़बड़ हो रहा है?"

"तुम्हें कैसे मालूम?"

"औरतों को ऐसी बातें अंदाजे से मालूम हो जाती हैं."

"मगर अब ऐसा कुछ नहीं है. प्रोग्राम बदल गया है. बुखार उतर गया है."

"अब क्या प्रोग्राम है?"

"झांसी बदली कराने की कोशिश करूंगा. वहां हम तीन सौ रुपये में आराम से गुजारा कर सकते हैं."

"हम कौन?"

"मैं और तुम.. अगर तुम्हें झांसी चलना स्वीकार हो, तो?"

"वहां क्या करूंगी? तुम्हारा खाना पकाना होगा?"

"वहां खाना तो पकाना होगा और सब भी करना होगा!"

"मसलन क्या?"

"घर का सब काम करना होगा. मां की सेवा करनी होगी. बहन की देखभाल करनी होगी!"

"और इतने काम के बदले में तनख्वाह क्या दोगे?"

"जो कुछ मुझे मिलेगा, वह सब तुम्हारे सुपुर्द कर दूंगा."

"एक पकाने वाली पर इतना भरोसा?"

"पकाने वाली नहीं, आशा, तुम्हें घरवाली बनाना चाहता हूं."

दीवार की तरफ से लड़की के आहिस्ता-आहिस्ता रोने की आवाज आयी.

"आशा, तुम्हें बुरा लगा? जल्दबाज हूं न! इतनी जल्दी मन की बात कह दी?"

"नहीं जी," उसने रोना बंद कर के कहा, "मैं तो इसलिए रो रही हूं कि आज तक मेरे साथ इतनी हमदर्दी किसी ने नहीं की."

"यह हमदर्दी नहीं है आशा!"

"फिर क्या है?"

"इस को कहते हैं प्यार! इसको कहते हैं मोहब्बत. इसको कहते हैं. घर बसाना."

"एक था लड़का..."

"एक थी लड़की..."

इस कहानी का तो सुखांत हो गया या हमने कर दिया, मगर ऐसी दूसरी कहानियों का क्या होता है? □

प्रस्तुति : सुरजीत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किशोर गेटे की प्रेमिकाएं

गेटे एक अत्यंत चारू व सुहाने किशोर थे. उनकी चारूता अत्यंत सम्मोहक थी, विशेष रूप से बच्चों के लिये, जो घंटों उनके पास खेलते रहते थे, और किशोरियों के लिये, जो उन्हें देखते ही अपना आपा खो बैठती थीं.

अपनी पढ़ाई के दिनों में वे एक धर्मगुरु की पुत्री फ्रायदेरीख से प्रेम लिप्त थे. यह उनके जीवन का पहला प्रेम था. दोनों को एक दूसरे से 'प्रथम दृष्टि में प्रेम' हो गया था. उन दिनों किशोर गेटे की सारी अनुभूतियां, सारा व्यक्तित्व फ्रायदेरीख में ही केंद्रित था. आरंभ में दोनों का जीवन प्रेम की दपक से प्रदीप्त हुआ, मगर धीरे-धीरे प्रेम की दीवानी सीमोल्लंघन करने लगी. कहते हैं कि इस प्रसंग के चालीस वर्ष बाद भी अपनी आत्मकथा 'डिक्टेट' करते समय, इस प्रेम-प्रसंग का वर्णन करते समय उनकी वाणी प्रेमोल्लास में कांपने लगती थी.

दोनों के बीच वर्ग-भेद उन कारणों में मुख्य था, जिसने दोनों को शीघ्र ही 'प्रेम की इस दीवानगी' से मुक्त कर दिया. वस्तुतः यह 'दीवानगी' स्वयं गेटे ने ही प्रेम की प्रगाढ़ता को अनुभव करने के लिये, निर्मित की थी. फिर भी, दोनों ने एक दूसरे से विदा लेते समय, महसूस किया था कि वियोग की पीड़ा के कांटे दोनों के दिलों में बहुत गहरे चुभ चुके थे. विदाई के क्षणों में, दोनों एक दूसरे से कुछ कह भी नहीं पाये, फ्रायदेरीख की आंखें नम थीं, और गेटे का हृदय विषाद से भारी था. दोनों ही जानते थे कि भविष्य में उनका दुबारा मिलना संभव नहीं है.

इस विदाई के बाद, गेटे ने अपनी प्रेमिका की मनोव्यथा को, 'जो उनके लिये अपनी व्यथा से कहीं अधिक पीड़ादायक थी, अभिव्यक्त करने के लिए एक मर्मस्पर्शी गीत भी लिखा था.

प्रेम से रिक्त होना, किशोर गेटे के लिये, प्रेम की पीड़ा से कहीं अधिक पीड़ादायक था. अतः जैसे ही फ्रायदेरीख उनके जीवन से विदा हुई, वैसे ही उसका स्थान उन्होंने कार्लोटवफ़ नाम की एक नवयुवती को दे दिया, जिसके साथ उनकी भेंट एक नृत्य-समारोह में हुई थी. यह जानते हुए भी कि कार्लोट की मंगनी केस्नर नाम के एक नवयुवक से हो चुकी है, और कार्लोट उनसे विवाह करने के लिये कभी तैयार नहीं होगी, वे उसे उसी प्रगाढ़ता और दीवानगी के साथ प्रेम करने लगे, जिसके साथ वे फ्रायदेरीख को करते थे. उनके प्रेम का स्थल था—वेल्ज़र नाम का एक कस्बा.

कार्लोट के भावी पति केस्नर को, जो काफ़ी हद तक उदार और सहनशील था, गेटे का अपनी-भावी पत्नी से प्रेम जताना बिल्कुल पसंद नहीं था. उसने कार्लोट से कहा कि वह गेटे से मिलना-जुलना कम करे. फलस्वरूप, जैसा कि गेटे की डायरी से प्रतीत होता है, ''कार्लोट ने मुझे आज साफ़ साफ़ बता दिया कि मैं उससे मित्रता से अधिक की आशा नहीं कर सकता. यह सुनकर मेरा मुंह पीला पड़ गया, और मैं खिन्न होकर उसके पास से चला आया.''

अब गेटे के सामने इस के अलावा, कोई और विकल्प न था कि वे अपनी प्रेमिका कार्लोट के जीवन से हमेशा-हमेशा के लिए दूर चले जायें. कई महीनों तक 'क्या करूं, क्या न करूं' की स्थिति में रहने के बाद, अंत में उन्होंने मन कड़ा करके उससे दूर जाने का निश्चय कर ही लिया. उन्होंने एक पत्र लिखकर, कार्लोट को अपने इस निश्चय की सूचना दी. कहते हैं कि यह पत्र पढ़कर कार्लोट बहुत रोयी थी.

वेल्ज़र से फ्रेंकफर्त आने पर कई सप्ताह बाद, किसी ने उन्हें बताया कि वेल्ज़र में उनके एक परिचित युवक-येरुशलेम ने प्रेम में निराश होकर आत्महत्या कर ली है. उन्होंने केंसर-प्रेम में अपने प्रतिद्वंद्वी को पत्र लिखकर, तुरंत इस कांड का पूरा विवरण भेज दिया, और जैसा कि गेटे ने अपनी आत्महत्या में स्वीकार किया है, ''यह विवरण 'द सॉरोज ऑफ़ बर्थर' के कथानक का आधार बना.''

गेटे की जीवनी से हमें पता चला है कि प्रेम में निराश होकर, वे या तो कविता करने लगते थे, या अन्य किसी नवयुवती या युवती से प्रेम करने लगते थे. हर सुंदर नवयुवती को देखकर उन्हें 'प्रथम दृष्टि में प्रेम' हो जाता था.

जब 'सॉरोज ऑफ़ बर्थर' के लेखन की योजना गेटे के मन में बन रही थी, तभी उन्होंने तीसरी बार अपने को प्रेम के जाल में फंसा पाया. इस नये प्रेम के बारे में उन्होंने अपनी डायरी में लिखा, ''बड़ी सुखद अनुभूति होती है वह, जिसमें कोई ऐसी मनःस्थिति में प्रेम में पड़ता है, जब विगत प्रेम का सूर्य पूरी तरह अस्त न हुआ हो, और एक नया प्रेमावेग मन में हिलोरें मारने लगा हो. सूर्यास्त के समय, जब कोई चंद्रमा को उदय होते देखता है, तो दो दीप्तियों की आभा मन को अपूर्व आनंद प्रदान करती है.''

जिस युवती के कारण कवि गेटे के मन में काव्यमयी उपमा ने जन्म लिया, उसका नाम था—मैक्सीमिलियेन द लॉ रोश. उसकी मां को लिखे एक पत्र में गेटे ने लिखा था, ''मैं आपकी पुत्री मैक्स के बिना नहीं रह सकता. मैं आजीवन उसे प्यार करता रहूंगा, यह आश्वासन आपको देना चाहता हूं.''

पता नहीं, इस बात का पता कि उनकी तीसरी प्रेमिका मैक्स का विवाह ब्रेंतानो नाम के एक व्यापारी से तय हो चुका है, गेटे को कब लगा, लेकिन यह तय है कि विवाह के बाद भी, उसने अनेक मधुर क्षण मैक्स के साथ व्यतीत किये थे. ब्रेंतानो केस्नर की भांति उदार और सहनशील नहीं था, और उसने गेटे के घर पर आने पर पाबंदी लगा दी. इस प्रकार अंत हुआ इस तीसरे प्रेम का.

गेटे के उपन्यास 'द सॉरोज ऑफ़ बर्थर' के प्रकाशन के बाद, उसे मिली अप्रत्याशित लोकप्रियता के कारण कार्लोट और केस्नर ने गेटे को एक पत्र लिखकर इस बात पर अप्रसन्नता व्यक्त की थी कि केस्नर को उपन्यास में एक मूर्ख और अयोग्य पति के रूप में चित्रित किया गया है, और कार्लोट को एक ऐसी स्त्री के रूप में पेश किया गया है, जो विवाहिता होते हुए भी, अपने भूतपूर्व प्रेमी से, आजीवन प्रेम करती रहती है. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खूबसूरत मगर मजबूर

नोबेल पुरस्कार विजेता जर्मन कथाकार हरमैन हेस से भारतीय पाठक उनकी 'सिद्धार्थ' नाम की अनुपम साहित्यिक कृति से परिचित हैं. यहां प्रस्तुत है उनकी एक लंबी कहानी 'यूथ, ब्यूटीफुल, यूथ' का एक अंश, जो किशोर-प्रेम के हर्ष और विषाद, दोनों को दर्शाता है.

विदेश से छुट्टी पर कुछ दिनों के लिये घर लौटने पर मुझे कई ऐसे अनुभव हुए, जो पहले कभी नहीं हुए थे.

जब मैं विदेश नहीं गया था, मेरे चचा मॉथस मुझसे बहुत अप्रसन्न रहा करते थे. उन्होंने मेरे बारे में यह धारणा बना ली थी कि मैं कभी कुछ नहीं कर पाऊंगा. मगर, अब जब कि मैं सफल होकर लौटा था, तो वे मुझसे खुश ही नहीं, बेहद खुश थे. मुझे आश्चर्य होता था रकि पहले बेरुखी से पेश आने वाले मेरे चाचा अब मेरे प्रति इतने मधुर कैसे हो गये?

छुट्टी का पहला दिन मैंने अपने घर की एक-एक चीज से नये सिरे से परिचित होने में लगाया. पुरानी चीजें तो मुझे नयी दिखायी दे ही रही थीं, घर में बहुत-सी नयी चीज़ें भी आ गयी थीं, जिनसे परिचित होना मुझे अच्छा लग रहा था.

बाग में गया, तो पाया कि उसके रख-रखाव पर, मेरी ग़ैरहाजिरी में ज्यादा ध्यान नहीं दिया गया था. बाग से मुझे बहुत प्रेम था, और बचपन में मेरा ज्यादातर वक्त वहीं गुज़रता था. मैं सारे दिन, उसकी हालत सुधारने में लगा रहा, और शाम को जब घर आया, तो काफी गंदा हो गया था. स्नान करके जैसे ही, अपने कमरे की ओर जाने लगा, मुझे एक सुपरिचित मीठा और खिलखिलाता हुआ स्वर सुनायी पड़ा. मुड़कर देखा, तो पाया कि हेलन मेरी बहन से बात कर रही थी. मेरी बहन की यह सहेली कभी मेरी प्रेमिका थी, और इतने दिनों के बाद उसे देखकर मुझे जैसी सुखानुभूति हो रही थी, उससे तय हो गया कि मेरे हृदय के किसी कोने में वह अभी तक बसी हुई है.

जब उसने मुझसे हाथ मिलाया, तो मैंने उससे पूछा, "मुझे पहचानती हो?"

"क्यों नहीं? लोते ने बताया था कि तुम आये हुए हो. उसने मुस्कराते हुए कहा. मैंने गौर किया कि वह पहले से अधिक सुंदर और मोहक लग रही थी. लेकिन, जैसे ही मैंने पाया कि मेरा औपचारिक अभिवादन करके वह मेरी मां की तरफ मुखातिब हो गयी है, मैं भी वहां से चलने लगा. जब वह अपने घर वापस जाने लगी, तो मैंने उसके सामने बड़े नाटकीय ढंग से झुककर कहा, "गुड नाइट, मिस हेलन! क्या आप अपने घर जा रही हैं?"

"और कहां जायेगी, बेचारी?" मेरी बहन ने आश्चर्य से कहा.

मैं चुप रह गया. और, हेलन को जाते देखता रहा. न मालूम क्यों, अब मुझे हेलन सुंदर नहीं, बदसूरत लग रही थी, मीठी-प्यारी नहीं, तुनकमिजाज लग रही थी. मुझे अपने ऊपर आश्चर्य हो रहा था कि कभी ऐसी लड़की मेरी प्रेमिका भी थी. वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आंखों से ओझल हुई, तो मुझे लगा कि वह मेरे जीवन से भी विदा हो गयी है. मैं ऐसी लड़की के द्वारा अपनी जवानी... खूबसूरत जवानी नष्ट नहीं करने दूंगा.

अगले कुछ दिन हंसी-खुशी में बीते. रोज पार्टियां, मौज-मजा, पिकनिक और नाच-गाना. पुराने दोस्तों और नये परिचितों से पहचान का सुख. मुझे इन दिनों में हेलन की याद एक बार भी न आयी. उसकी याद मेरे मन में मिट चुकी थी.

लेकिन, खूबसूरती की तरह हंसी-खुशी भी ज्यादा समय तक नहीं टिकती. जल्दी ही, हंसी-खुशी और उत्तेजना के दिन समाप्त हो गये. समय नीरसता से गुजरने लगा कि एक दिन, इस नीरसता को भंग करते हुए, मेरी बहन लोते ने मुझे बताया कि उसकी सखी अन्ना पास के नगर से आ रही है, और कुछ दिन हमारे-साथ रहेगी.

अना... हेलन, की भांति कभी वह भी मेरी-प्रेमिका थी. सच तो यह है कि मेरी बहन की हर सखी कभी न कभी मेरी प्रेमिका रह चुकी थी. भले ही कुछ मामलों में यह प्रेम एकतर्फा था.

अन्ना हेलन की भांति सुंदर और आकर्षक तो नहीं थी, लेकिन उसकी आवाज, चाल ढाल और तरीके में कुछ था, जो उसे विश्वसनीय बनाता था. शायद यही कारण था कि मेरी मां ने, जो किसी को घर पर रखने के लिये आसानी से तैयार नहीं होतीं, उसे देखते ही सहर्ष अपना लिया था, और बड़े प्रेम से उसका स्वागत भी किया था.

सदा शांत, प्रसन्न और विक्षुब्ध रहने वाली अन्ना आते ही मेरे मन में दुबारा उतरना शुरू हो गयी. वह कभी किसी बात का बुरा नहीं मानती थी. उसकी इस आदत को देख कर, मैंने यह मान लिया कि जिसका मन किसी भी बात से न दुखता हो, वह कभी किसी का दिल नहीं दुखायेगी. मैं उसकी ओर से निश्चित सा था कि वह मेरी प्रेम-चायना को कभी अस्वीकार नहीं करेगी.

एक दिन मेरी बहन ने अपनी सब सखियों को घर पर लंच के लिए बुलाया. तब मुझे अन्ना और हेलन दोनों को एक साथ देखने का मौका मिला. मैंने देखा कि हेलन जितनी कृत्रिम थी, अन्ना उतनी ही अकृत्रिम. जहां हेलन का सौंदर्य उत्पन्न करता था, वहां अन्ना का सौंदर्य शांति और तृप्ति प्रदान करता था. एक शराब की भांति उत्तेजक थी, दूसरी शीतल जल की भांति संतोषणीय. इस वैषम्य की अनुभूति के बावजूद, जब हेलन विदा होने लगी, तो न जाने किस अज्ञात आकर्षण से मैं उसकी ओर खिंच आया. मेरे दिये गुलाब के फूल को उसने मुस्कराते हुए स्वीकार किया. तभी, मुझे अन्ना की याद आयी. मैंने उसे भी गुलाब का एक फूल दिया, और उसने भी उसे मुस्कराते हुए स्वीकार किया.

अगले दिन, लोते ने बताया कि हेलन की मंगनी हो चुकी है, और एक-दो महीने में विवाह हो जायेगा. सुनते ही न मालूम क्यों, सब कुछ धुंधला-सा और विवादपूर्ण लगने लगा. मैं सारे दिन उदास रहा. मगर, फिर यह उदासी शीघ्र ही अपने आप छंट भी गयी. जीवन में मजा आने लगा.

तीसरे दिन, अन्ना ने कहा, "कस्बे में सर्कस आया है."

"अच्छा! देखना है तुम्हें?"

"हां! मां अकेले नहीं जाने देंगी. तुम चलो तो..."

हम दोनों सर्कस गये. वह तो बच्चों की तरह ताली बजा-बजाकर सर्कस के खेल देखती रही मुझे बस यही अहसास था कि वह मुझसे सही बैठी है. एक नयी कामना मन में जाग उठी.

मेरी छुट्टी खत्म होने पर आ रही थी, और अन्ना के जाने की तारीख भी निकट आ गयी थी. जब जाने में कुछ घंटे ही रह गये, तो हिम्मत जुटाकर, मैंने एकांत में उससे कहा, "जाने से पहले, तुमसे कुछ कहना चाहता था. बात यह है कि..."

"मुझ पर रहम करो, हरमन, बस, आगे कुछ मत कहो. मैं खुद तुम्हें नहीं बता सकती कि जो तुम चाहते हो, वह क्यों नहीं हो सकता? लोते को मालूम है, वह बता देगी. मेरे मुंह से सुनकर तुम उदास और दुखी हो जाओगे, और मैं विदा लेने से पहले तुम्हें सुखी देखना चाहती हूं. मैं चाहती हूं कि हम दोनों सच्चे मित्रों की भांति खुशी-खुशी एक दूसरे से अलग हों."

"मैं.... कह नहीं सकता... कोशिश करूंगा."

"तो, तुम खुशी-खुशी नहीं जाना चाहते. तो, फिर अभी ही सुन लो कि वजह क्या है... मेरी स्थिति तुम्हारी जैसी ही है, हरमन. कोई है, जिसे मैं अपना बनाना चाहती हूं, लेकिन वह मेरा नहीं होना चाहता. तुम्हारी तरह, मैं भी मजबूर हूं. बस, और कुछ न कहलवाओ मुझसे."

"इसके बावजूद, अन्ना, मुझे तुम्हारी मित्रता की बहुत जरूरत है, और रहेगी. जहां तक मेरा प्रश्न है, मैं आजीवन तुम्हारा मित्र रहूंगा. मुझे याद रखना, एक मित्र के रूप में."

अन्ना रोने लगी. रोते रोते उसने कहा, "मैं भी आजीवन तुम्हारी मित्र रहूंगी." मैं उसके प्रति कृतज्ञ हो आया. स्वयं असहज होकर भी उसने मुझे सहज बना दिया था. वह सदा मेरी मित्र रही.

बड़ी खूबसूरत थी, जवानी, लेकिन साथ ही कितनी मजबूर! □

प्रस्तुति : आदित्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दास्ताने अलफ लैला उर्फ किस्सा हजार रातें

गुजरे जमाने में हिंदुस्तान और चीन महाद्वीपों के बीच स्थित सासन नाम का एक राज्य था. उसका राजा बड़ा शक्तिशाली था, और उसकी विशाल सेना के कारण उसके पड़ोसी राजा उससे कांपते थे. उसके दो बेटे थे, एक लंबा, और दूसरा नाटा. राजा ने अपना विशाल राज्य इन दोनों बेटों में बांट दिया था. राज्य का ज्यादातर हिस्सा बड़े बेटे शहरयार के हिस्से में आया जो बहुत बहादुर और माना हुआ घुड़सवार था. छोटे भाई शाहजमान को समरकंद-अल-अम का राजा बनाया गया.

दोनों भाइयों ने बीस साल तक अपने-अपने राज्यों पर राज्य किया. उनकी रिआया के लोग अमन-चैन से रहते थे और अपने अपने राजाओं की खैर के लिए अल्लाह-ताला से दुआ करते थे.

फिर, एक दिन बड़े भाई शहरयार के दिल में अपने छोटे भाई शाहजमान को देखने की ख्वाहिश हुई. उसने अपने वजीर से कहा, "तुम फौरन रवाना हो जाओ और मेरे छोटे भाई को अपने साथ लेकर ही वापस लौटना."

"आपका हुक्म सर-आंखों पर, आलीजाह," कहकर वजीर फौरन समरकंद-अल-अजाम की तरफ रवाना हो गया.

समरकंद-अल-अजाम के महल में पहुंचकर वजीर ने अपने आने की खबर राजा शाहजमान तक पहुंचायी और यह भी कहलवा भेजा कि वह किसके हुक्म से और किस मकसद से आया है.

राजा शाहजमान ने अपने भाई के वजीर को बुला भेजा और उसकी सब बातें सुनकर कहा, "मेरे बड़े भाई का हुक्म सर-आंखों पर. मैं अभी आपके साथ चलने की तैयारी करता हूं." उसने अपने वजीर को बुलाकर कहा, "मेरे वापस लौटाने तक मेरी जगह तुम मेरी सल्तनत की बागडोर संभालोगे." इसके बाद उसने सैकड़ों [illegible], खच्चरों, सिपाहियों, गुलामों वगैरह के साथ अपने भाई की राजधानी की ओर कूच किया.

लेकिन, रात को अपने तंबू में आराम करते वक्त उसे याद आया कि वह महल में एक जरूरी चीज भाई को देने वाली कीमती भेंट भूल आया है. उसने काफिले को रुकवा दिया और तेजी से अपने महल में वापस गया. पर, उसने वहां जो दृश्य देखा, उसने उसे स्तब्ध कर दिया. उसने देखा कि उसकी बीवी अपने पलंग पर लेटी है और एक हब्शी गुलाम उसका आलिंगन कर रहा है. उसकी आंखों के सामने अंधेरा छा गया और वह सोचने लगा, यदि मेरे जाने के कुछ घंटों बाद ही इस व्यभिचारिणी ने यह कमीनी हरकत की है, तो मेरे महीनों गैरहाजिर होने पर इसका क्या हाल होता? उसने म्यान से तलवार निकाली और दोनों की गर्दनें धड़ से अलग कर दीं. इसके बाद वह वापस अपने तंबू में आ गया और अपने काफिले से आगे बढ़ने को कहा. यथासमय, वह अपने बड़े भाई के महल में पहुंच गया.

शहरयार अपने छोटे भाई को देखकर बहुत खुश हुआ. उसने हुक्म दिया कि उसके भाई के आने की खुशी में राजधानी को दुल्हन की तरह सजाया जाये. मगर, शाहजमान अपने महल में हुए कांड की वजह से बहुत खिन्न और उदास था. उसके भाई ने उसके आमोद-प्रमोद के लिए जितने साधन जुटाये थे, उनमें से कोई भी उसकी होंठों पर मुस्कराहट नहीं ला सका. वह हमेशा मुंह लटकाये रहता था और हमेशा उसी घटना के बारे में सोचता रहता था.

शहरयार समझा कि उसकी उदासी की वजह यह है कि वह अपने बीवी-बच्चों की याद में खोया रहता है, इसलिए उसने इस बारे में उससे बात नहीं की. उसका खयाल था कि दो-चार दिनों में उसका मन यहां लगने लगेगा, और तब उससे और दूसरों से खुशी खुशी बातें करने लगेगा.

लेकिन, जब कुछ दिन और गुजर जाने पर भी शाहजमान की उदासी दूर नहीं हुई तो उसके बड़े भाई ने हिम्मत करके उससे

एक से बढ़कर एक दिलचस्प दास्तानों का मनोरंजक सिलसिला है— 'दास्ताने अलफ लैला उर्फ किस्सा हजार रातें'. किस्सागोई के अद्भुत चमत्कार प्रस्तुत करने वाले अज्ञात रचनाकार की विश्वप्रसिद्ध कृति 'अरेबियन नाइट्स' पिछले दिनों सुर्खियों में तब आयी जब एक अरब देश ने इस पर प्रतिबंध लगाने की मांग की...पर जल्द ही विश्वव्यापी विरोध की वजय से यह मांग वापस ले ली गयी. सभी आयु-वर्गों के पाठकों को बांधकर रख लेने वाले इस लंबे सिलसिले की पहली कड़ी में पढ़िए दो भाइयों और उनकी बीवियों के विश्वासघात व बाद में घटने वाली मनोरंजक घटनाओं के साथ पशु-पक्षियों की भाषा जानने वाले एक अमीर किसान व उसके पशुओं की दास्तान...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूछा, "भाई, तुम जबसे यहां आये हो, मैंने तुम्हें हमेशा उदास और चिंतित मुद्रा में ही देखा है. किसी चिंता ने तुम्हारी हंसी-खुशी और तुम्हारे बदन की ताकत सोख कर रख ली है. क्या मैं जान सकता हूं कि तुम्हें कौन-सी चिंता है?"

शाहजमान ने कहा, "भाईजान, आप बजा फरमाते हैं. यह सच है कि मैं एक चिंता की गिरफ्त में हूं. मगर वह चिंता मेरी अपनी है, और मैं उसका बयान किसी से भी नहीं कर सकता. आप से भी नहीं. आपको यह सुनकर बुरा तो लगेगा मगर मुझे माफ करें, मैं मजबूर हूं."

"खैर, जैसी मर्जी. मगर मेरी एक बात मानो. मैं कल शिकार पर जा रहा हूं. तुम भी मेरे साथ चलो. हो सकता है, वहां के माहौल में तुम्हें अपनी चिंता से निजात मिल जाये. तुम चाहोगे तो वहां तुम्हारी दिलबस्तगी के और इंतजाम भी कर दिये जायेंगे."

"शुक्रिया, भाईजान! मगर, फिलहाल मुझे अपने पर ही छोड़ दें. मेरी अंदरूनी तकलीफ इतनी गहरी है कि शिकार पर जाने पर भी दूर नहीं होगी."

निराश, उदास शहरयार अकेला ही शिकार पर गया.

अपने बड़े भाई के जाने के बाद, शाहजमान महल के अपने कमरे में अकेला रह गया. उस कमरे की सब खिड़कियां बाहर महल के हरे-भरे और लंबे-चौड़े बाग की ओर खुलती थीं. चिंताग्रस्त शाहजमान एक खिड़की के पीछे बाग की ओर अनमने भाव से देख रहा था कि उसे एक विचित्र दृश्य दिखाई दिया.

महल के एक दरवाजे से बीस हब्शी दासों और बीस हब्शी दासियों ने बाग में प्रवेश किया. उनके बीच में थी, उसकी भाभी, उसके बड़े भाई की बीवी, जो काले दास-दासियों के बीच एक चित्ताकर्षक रत्न की भांति जगमगा रही थी.

ये सब लोग हंसते-किलकते हुए बाग के बीच स्थित एक तालाब के पास पहुंचे और अपने वस्त्र उतारकर, जलक्रीड़ा करने लगे. अचानक, उसकी भाभी, उसके बड़े भाई की बीवी, कामावेश में आकर, "मसूद, ओ मसूद, इधर आ!" चिल्लाने लगी.

मसूद एक बलिष्ठ और आकर्षक हब्शी युवक था. उसने अपनी पुकार सुनी तो आकर रानी से लिपट गया और रति-क्रिया में निमग्न हो गया.

यह देखकर सब हब्शी युवतियां भी हब्शी युवकों से लिपट गयीं और रति-क्रिया का आनंद लेने लगीं.

यह नजारा देखकर शाहजमान ने मन ही मन कहा, 'या अल्लाह! शुक्र है तेरा! कम से कम मैं अपने बड़े भाई से तो कम बदनसीब हूं. मैं बेकार फिक्र में मुब्तिला हो रहा था. असल में, फिक्र तो मेरे बड़े भाई को करनी चाहिए.'

यह विचार मन में आते ही उसके भीतर छाये गम और उदासी के सारे बादल, देखते ही देखते, अपने आप छंट गये, और उसका मन हल्का हो गया. उसने जी भरकर शराब पी, लजीज खाना मंगाकर उस पर टूट पड़ा.

शाम को जब शहरयार शिकार से वापस लौटा, तो उसे यह देखकर बहुत खुशी हुई कि उसका भाई बहुत खुश नजर आ रहा है और मजे ले-लेकर खूब शराब पी रहा है, और दस्तरखान से अलग होने का नाम ही नहीं ले रहा है. उसे बड़ा ताज्जुब हुआ. उसने शाहजमान से इस हैरतअंगेज तब्दीली की वजह पूछी.

"भाईजान! आपने पूछा है तो मैं बताता हूं कि मैं जब यहां आया था, तब उदास क्यों था, और अब कुछ देर से खुश और बेफिक्र क्यों हूं." शाहजमान ने कहा, " मैं जब अपने काफिले और आपके वजीर के साथ आपके महल की तरफ रवाना हुआ था तो रात को अपने तंबू में आराम करते हुए अचानक मुझे याद आया कि मैं महल में वह कीमती उपहार तो भूल ही आया जो मैंने आपको देने के लिए एक व्यापारी से ऊंची कीमत पर खरीदा था. लेकिन जब मैं महल में पहुंचा तो मैंने अपनी बीवी को एक काले गुलाम के आगोश में पाया. मैंने दोनों का वहीं कत्ल कर दिया और चुपचाप उपहार के साथ अपने तंबू में लौट आया. लेकिन इस वाकये के बाद मेरा मन उदास और गमगीन हो गया. इतने सालों के बाद आपसे मिलकर मुझे खुशी होनी चाहिए थी, मगर मुझे कोई खुशी नहीं हुई, क्योंकि मेरा मन हमेशा उस वाकये के बारे में ही सोचता रहता था. लगता था, हंसी-खुशी हमेशा के लिए मेरी जिंदगी से विदा हो गयी है. लेकिन, तभी मुझे एक ऐसा अजीबोगरीब वाकया देखने को मिला कि मेरी हंसी-खुशी वापस लौट आयी."

"कैसा अजीबोगरीब वाकया था यह?"

"नहीं भाईजान, मुझे माफ करें. मैं उसके बारे में कुछ न बता पाऊंगा."

"मैं बेचैन हूं उस वाकये के बारे में जानने के लिए, और प्रार्थना करता हूं कि..."

"प्रार्थना करके आप मुझे शर्मिंदा न करें, भाईजान! मैं आपको वह वाकया, जैसे मैंने देखा था, ठीक वैसे ही सुना देता हूं." और जो उसने देखा था, वह वैसा का वैसा ही सुना दिया.

सारी बात सुनकर गहरे सोच में डूब गया. कुछ देर बाद उसने कहा, "बेहतर होता कि मैं यह वाकया अपनी आंखों से देख पाता!"

"आप देख सकते हैं. आप फिर कल शिकार पर जाने का ऐलान कीजिये, मगर जाइये मत. इस कमरे में मेरे पास छिप जाइयेगा और फिर देखियेगा कि क्या होता है?"

अपने भाई का सुझाव मानकर शहरयार ने महल में और उसके बाहर यह ऐलान करा दिया. तड़के ही चंद सिपाही तंबू और शिकार का सारा सामान लेकर जंगल की ओर रवाना हो गये. राजा भी उनके साथ गया. उसने अपने तंबू के बाहर पहरा देने वाले काले हब्शी गुलामों से कहा, "कोई भी, किसी भी हालत में, इस तंबू के अंदर न आने पाये."

तंबू के अंदर अपना वेश बदलकर शहरयार बाहर आया, और अपने महल में पहुंचकर अपने भाई के कमरे में दाखिल हुआ. वहां वह एक ऐसी खिड़की के पीछे बैठ गया, जहां से बाग का सारा नजारा अच्छी तरह दिखाई देता था.

करीब एक घंटे के बाद, बीस-बीस हब्शी दास-दासियों से घिरी शहरयार की बीवी बाग में आयी और अपने प्रेमी मसूद के साथ जल-क्रीड़ा करने लगी.

राजा शहरयार ने यह नजारा देखा तो अपना धीरज खो बैठा और अपने भाई से कहने लगा, "हम दोनों को अब राज-पाट छोड़कर अल्लाह के बताये हुए रास्ते पर चल देना चाहिए. अब हम अपने राज्यों को तभी वापस लौटेंगे, जब हमें अपने जैसा या हमसे ज्यादा कोई बदकिस्मत आदमी मिल जायेगा. नहीं तो ऐसी जलालत की जिंदगी से तो मरना अच्छा." दोनों भाई एक गुप्त द्वार से महल के बाहर आ गये. शाहजमान को अपने भाई का सुझाव सही लगा था.

एक दिन और एक रात तक चलते रहने के बाद दोनों खारे समुद्र के निकट स्थित एक सुनसान चरागाह के बीचोबीच लगे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक पेड़ के नीचे आकर रुके. चरागाह में ताज़ा और मीठे पानी का एक चश्मा था, जिसमें से पानी पीकर दोनों ने अपनी प्यास बुझायी और घास पर लेटकर आराम करने लगे.

करीब एक घंटे बाद, समुद्र अशांत हो उठा, और उसमें से काला धुंआ उठकर आसमान और चरागाह की ओर बढ़ने लगा. धुएं के इस बबंडर को देखकर दोनों भाई डर गये और अपनी जान बचाने की खातिर, पेड़ पर चढ़ गये.

तभी उन्होंने आश्चर्य से देखा कि काले धुएं का बबंडर एक विशाल-काय जिन्न में बदल गया है और उसके सर पर एक बक्सा है.

जिन्न धीरे-धीरे चलता हुआ उस पेड़ की ओर बढ़ने लगा, जिस पर दोनों भाई चढ़े हुए थे. अंत में जिन्न पेड़ के नीचे आकर खड़ा हो गया. फिर उसने सर पर रखा बक्सा उतारा, और उसका ढक्कन खोला. बक्से में एक तिजोरी थी. उसने उसे भी खोला. तिजोरी के खुलते ही उसमें से एक हसीना निकली, जिसकी उजली धूप ज़ैसी सुंदरता देखकर, दोनों भाइयों की आंखें चकाचौंध हो गयीं.

जिन्न भी कुछ समय तक उसके हसीन और परी जैसी चेहरे को देखने के बाद, बोला, ''मुझे भूली तो नहीं है न! मैं वह हूं, जिसने तेरी शादी के दिन तेरा अपहरण किया था. मैं कुछ देर आराम करूंगा.'' कहकर वह हसीना के घुटनों पर सर रखकर सो गया.

जिन्न के सो जाने के बाद हसीना की निगाह, पेड़ पर चढ़े दोनों राजाओं पर पड़ी. उन्हें देखते ही उसने जिन्न का सिर अपने घुटनों से हटाकर नीचे जमीन पर रख दिया और पेड़ के नीचे खड़ी होकर इशारे से दोनों भाइयों से कहने लगी. ''नीचे आ जाओ. इस जिन्न से मत डरो.''

''दोनों भाइयों ने एक बार फिर जिन्न के दैत्याकार शरीर को देखा और इशारे से हसीना से कहा, ''अल्लाह ताला तुम्हें खुश और कुशल रखें. मगर हमें माफ करो.''

''मैं तुमसे प्रार्थना करती हूं कि तुम दोनों मुझ पर मेहरबानी करके नीचे आ जाओ और अगर तुम नीचे नहीं आये तो मैं जिन्न को जगा दूंगी. और मेरे कहने पर वह तुम दोनों को जिंदा नहीं छोड़ेगा. जल्दी से सोच लो, क्या करना है.''

जैसे ही, दोनों भयभीत भाई पेड़ से नीचे उतरे, उस हसीना ने उन दोनों को उसके साथ अलग अलग प्रेम करने के लिए मजबूर

इसके बाद उस हसीना ने दोनों भाइयों को अपने बारे में बताते हुए कहा, ''इस दुष्ट जिन्न से मेरी शादी के दिन मेरा अपहरण किया था. पहले उसने मुझे एक तिजोरी में कैद किया और फिर उस तिजोरी को एक बक्से में बंद करके उस पर सात जंजीरें लगा कर ताला लगाया. वह यह बक्सा सर पर लिये सारी दुनिया में घूमता है और सोचता है कि मैं उसे छोड़कर कहीं नहीं जा सकती, और कुछ भी नहीं कर सकती. मैं अभी तक इससे आजाद होने में तो कामयाब नहीं हुई हूं, लेकिन, इसकी कैद में रहते हुए भी मैंने अनेक पुरुषों को अपने को भोगने का अवसर दिया है. उनकी संख्या तुम्हें मिलाकर 570 तक पहुंच चुकी है. मैंने तुम्हें ये सब बातें इसलिए बतायीं, ताकि तुम दोनों भाइयों को यह पता चल जाये कि औरत मन में जो ठान लेती है, उसे करके ही रहती है, और दुनिया की कोई भी ताकत उसे ऐसा करने से नहीं रोक सकती.''

हसीना की यह बात सुनकर शहरयार ने अपने भाई से कहा, ''हमें ऐसे आदमी की तलाश थी जो औरत से विश्वासघात की सजा पाने के मामले में हमसे भी ज्यादा बदनसीब हो. तो, इस ताकतवर जिन्न के रूप में ऐसा बदनसीब आदमी हमें मिल गया. अब हमें अपने-अपने राज्यों को वापस लौट जाना चाहिए.''

अपने महल में लौटने पर, शहरयार ने सबसे पहले अपनी बीवी के साथ उन सब हब्शीं दास-दासियों का कत्ल करवाया, जिन्होंने उसकी बीवी के साथ जल-क्रीड़ा की थी. इस पर भी, उसकी क्रोधाग्नि ठंडी नहीं हुई और अपने वजीर को बुलाकर उसे हुक्म दिया, ''तुम्हें कहीं से भी हर शाम को मेरे लिए एक कुमारी को लाना है. मैं रात भर उसे भोगकर, सुबह को उसका कत्ल करवा दूंगा. जाओ, आज से ही अपने काम में जुट जाओ.''

बेचारा वजीर तीन साल तक अपने राजा शहरयार के लिए उसकी प्रजा के परिवारों में से प्रति दिन एक कुमारी कन्या लाता रहा. लेकिन, तीन साल के बाद, स्थिति यह हो गयी, कि उसे कुमारी कन्याएं मिलनी बंद हो गयीं, क्योंकि ऐसे सब परिवार, जिनमें कोई कुमारी कन्या थी, अपने राजा का राज्य छोड़कर भाग गये थे.

वजीर अब बड़ी चिंता में पड़ा, क्योंकि अब खुद उसकी जान पर बन आयी थी. उसे डर था कि कुमारी लड़कियों के न मिलने पर, राजा कहीं उसे कत्ल न करवा दे.

वजीर की चिंता का एक कारण यह भी था कि खुद उसके घर में उसकी दो जवान, अनब्याही बेटियां मौजूद थीं. बड़ी का नाम शहरजाद था, और छोटी का दुन्याजाद. शहरजाद एक पढ़ी-लिखी, चतुर और बुद्धिमती नवयुवती थी. इतनी कम आयु में भी उसने इतिहास, पुरा-कथाओं और लोक-कथाओं का रुचिपूर्वक अध्ययन किया था. उसके पास ऐसी कथाओं की एक हजार के करीब पुस्तकें थीं, जिनमें गुजरे जमानों के राजाओं, सम्राटों, यात्रियों और साधारण लोगों की कहानियां थीं. उसे कहानियां पढ़ने और सुनने के अलावा कहानियां सुनाने का भी शौक था. कहानी सुनाने का उसका ढंग ऐसा रोचक और हृदयग्राही था कि श्रोता मंत्रमुग्ध-सा सुनता ही रह जाता था.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने पिता को चिंतित देख, शहरजाद ने उनसे उनकी चिंता का कारण पूछा. वजीर ने सारी घटना शुरू से आखिर तक सुना दी. शहरजाद ने कहा, "मेरे पास एक उपाय है, जिससे, मैं समझती हूं आपकी चिंता तो दूर हो ही जायेगी, राज्य के वे सब परिवार भी, जिनमें कुमारी कन्या या कन्याएं मौजूद हैं, चिंतामुक्त हो सकेंगे."

"वह क्या उपाय है?" वजीर ने पूछा.

"आप अल्लाह का नाम लेकर मेरी शादी राजा शहरयार से कर दीजिये. आगे जो कुछ करना है, वह मुझे करना है."

"मगर कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारा हाल वही हो जाये जो कहानी के गधे, बैल और अमीर किसान का हुआ था. लो, सुनो वह कहानी."

अमीर किसान उसके गधे और बैल

यह कहानी एक ऐसे अमीर किसान और व्यापारी की है, जिसके पास अल्लाह का दिया हुआ सब कुछ था—दौलत, लाभदायक व्यापार, सोना उगलती कृषि-भूमि, प्रेमल पत्नी और स्वस्थ-सुंदर बच्चे. खुदा के फ़ज़ल से वह पशु-पक्षियों की बोली भी समझ लेता था.

"उसके पास दर्जनों पशु-पक्षी थे, जिनकी वह अच्छी देखभाल करता था, और जरूरत के मुताबिक काम भी लेता था. एक दिन उसने देखा कि उसका बैल उसके गधे के पास जाकर उससे कुछ कह रहा था. वह चुपके से उनके पास जाकर उनकी बातें सुनने लगा. बैल गधे से कह रहा था, "यार, तुम्हें तो रहने के लिए बड़ी आरामदेह जगह मिली हुई है. खाना भी भरपेट और सेहत बढ़ाने वाला मिलता है. मालिक तुमसे ज्यादा काम भी नहीं लेते. एक हम हैं, सारे दिन धूप में खेत जोतते हैं, और खाना भी कामचलाऊ ही मिलता है."

"अपनी तारीफ सुनकर गधा बहुत खुश हुआ, और उसने बैल को सलाह दी, "कल से तुम अपने मालिक को यह बताओ कि तुम बहुत सख्त बीमार हो, खेत पर जाते ही जमीन पर गिर पड़ना, और खाने से इंकार कर देना. तब, मालिक को तुम्हें आराम से रखने के अलावा, अच्छा खाना देने को भी मजबूर होना पड़ेगा." थोड़ी देर बाद, जब मालिक ने बैल को चारा दिया, तो उसने नहीं खाया. बड़ी मुश्किल से वह खेत में गया और वहां जाते ही गिर पड़ा. तब उसने अपने नौकर से कहा, "इस बैल को जो बीमार लगता है, गधे की जगह बांध दो और गधे से जमीन जुतवाओ."

"शाम को जब गधा थका-मांदा अपनी जगह पर लौटा तो वहां बैल को आराम करते देखकर उसकी तबीयत बड़ी कोफ्त हुई और उसे पछतावा होने लगा कि उसने बैल को नेक सलाह क्यों दी थी? उधर बैल बहुत खुश था. जब अगले दिन भी गधे को सारे दिन खेत में जुतना पड़ा, तो उसके मन में एक विचार आया. उसने बैल से कहा, "आज मालिक तुम्हारे बारे में नौकरों से बात कर रहे थे और कह रहे थे कि यदि बैल जल्दी ठीक नहीं होता है तो उसे कसाई को बेच देना ही ठीक होगा." बैल यह सुनकर बहुत घबराया और मालिक के पास जाकर बोला, "मालिक, मैं अब ठीक हूं. और काम पर जाने के लिए तैयार हूं." बैल की यह बात सुनकर मालिक को हंसी आ गयी और वह हंसता ही चला गया, क्योंकि हंसी रुकने में ही नहीं आ रही थी.

"इतना क्यों हंस रहे हो?" उसकी बीवी ने पूछा. उसने उत्तर दिया, "जो सुना और देखा है, उसके कारण हंस रहा हूं. मगर, तुम्हें वह कारण बताऊंगा तो मर जाऊंगा."

तुम्हें बताना ही होगा कि तुम क्यों हंस रहे हो? नहीं तो मैं तुम्हें चैन से नहीं बैठने दूंगी, भले ही तुम मरो या जिंदा रहो. मैं अच्छी तरह जानती हूं कि तुम मुझ पर हंस रहे हो."

अंत में शौहर ने ही कहा, "ठीक है, अपनी इस बीवी के सुख की खातिर मैं इसे अपनी हंसी का भेद बताकर मरने को तैयार हूं." यह कहकर, वह अपनी आखरी इबादत करने चला गया मालिक के इस निश्चय का समाचार जब उसके प्रिय पशु-पक्षियों को मिला तो वे सब चिंतित हुए और इस बारे में बात करने लगे. एक ताकतवर मुर्गा कुत्ते से कहने लगा, "मेरी पचास बीवियां हैं, और मेरा उनसे कोई झगड़ा नहीं होता, क्योंकि जब उनमें से कोई बेकार की जिद करने लगती है तो मैं उसकी पिटाई करके उसे सही रास्ते पर ले आता हूं. मालिक को भी ऐसा ही करना चाहिए." मालिक को मुर्गे का सुझाव सही और मौजूं लगा. उसने पेड़ की कुछ टहनियां तोड़ीं, और कमरा बंद करके उनसे अपनी बीवी को धुनना शुरू कर दिया. बीवी को फ़ौरन अकल आ गयी और वह अपने शौहर से माफी मांगने लगी. मुझे लगता है, तुम्हारी जिद (शहरयार से शादी करने की) दूर करने के लिए मुझे भी तुम्हारी पिटाई करनी पड़ेगी." शहरजाद ने हंसकर अपने वालिद से कहा, "मुर्गे के नुस्खे को मुझ पर न आजमाएं. मैं जैसा कहती हूं, वैसा ही करें." वजीर समझ गया कि बेटी उससे कहीं ज्यादा अक्लमंद है.

वजीर के जाते ही शहरजाद ने अपनी बहन को बुलाया और कहा, "मेरी शादी राजा शहरयार से होने जा रही है. मैं तुझे भी अपने साथ महल में ले जाऊंगी. वहां तुझे, जैसा मैं बताती रहूं, वह करना होगा. रात को जैसे ही हम दोनों, सब कामों से निपटकर, सोने के लिए जाने लगें तो तू वहां आकर मुझसे कहना, 'दीदी, तुम रोज सोने से पहले मुझे एक नयी कहानी सुनाया करती थीं. आज भी सुनाओ न, एक नयी कहानी. तुम तो जानती ही हो कि तुम्हारी कहानी सुने बिना मुझे नींद नहीं आती.' फिर मैं राजा से पूछकर तुझे एक नयी कहानी सुनाऊंगी. मेरी इस बात को याद रखना, भूल न जाना."

उधर, शहरयार को वजीर की बड़ी लड़की शहरजाद के साथ शादी के प्रस्ताव की बात वजीर के मुंह से सुनकर बड़ी खुशी हुई. उसने फौरन शहरजाद को बुला भेजा. विवाह की रस्म पूरी होने पर, शहरजाद ने रोते-रोते राजा से कहा, "कल सुबह तो मुझे मरना ही है. अगर आप मेरी आखिरी ख्वाहिश पूरी करने को राजी हों, तो मेहरबानी करके मेरी छोटी बहन दुन्याजाद को बुलवा भेजें, ताकि मैं उससे आखिरी बार मिल लूं."

जब तक दुन्याजाद महल में आये शहरयार ने शहरजाद का कौमार्य भंग कर दिया था और वह सोने के लिए जाने लगा. तभी, दुन्याजाद आ गयी और उसने अपनी बहन से वही कहा, जो उसने उसे कहने को कहा था. शहरजाद ने कहा, "मैं कहानी सुनाने को तैयार हूं. बशर्ते कि राजा साहब को उसमें कोई एतराज न हो." कहानी सुनने की ख्वाहिश शहरयार को भी थी, इसलिए उसने फौरन हां कह दी.

और, पहली रात को शहरजाद ने अपनी बहन और शहरयार को एक व्यापारी और एक जिन्न की कहानी सुनानी शुरू कर दी, जो इस प्रकार थी... □

अगले अंक में जारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बानो कुदसिया
सुप्रसिद्ध पाकिस्तानी कथाकार

पिया का नाम दिया

न जाने कब से कैसर की बुनियाद में पानी पड़ रहा था. देखने में तो वह बड़ा सेहतमंद दरख्त नजर आता, लेकिन अंदर से मिट्टी पोली हो गयी. दरख्त बजाहिर सरो-कद था, पर टहनियों को अंदर ही अंदर यह पैगाम मिल गया कि किसी लम्हे भी दरख्त का तना तेवरा कर नई कोंपलों समेत जमीन पर गिर सकता है.

पिया-कुछ ऐसी हिरनी जैसी आंखों वाली नहीं थी लंबे कद की भी नजर नहीं आती थी रंगत भी उनाबी-शहाबी न थी, लेकिन बरसन-हार बादलों की तरह उसका वजूद बड़े वायदों के साथ भरा हुआ था. वह कब बरसेगी? मेंह लगातार होगा कि कुनमुन, कुनमुन झड़ी लगेगी? खुश्क अकाल से चटके हुए बंजर इलाके पर शीतल फुहार बन कर गिरेगी कि ठहरे तालाब पर अनगिनत भंवरों की शक्ल में जज्ब हो जायेगी?

जिस रोज पहली बार कैसर के दिल को खोंच लगी, वह एक फैशनेबल बेकरी में खड़ा था. सामान वह ज्यादा बंधवा चुका था और पैसे उसके मामा ने कम दिये थे. केक, पेस्ट्री के डिब्बों पर नजर डाल कर जब राजदारी से वह अपने बटुए की परत खोलने लगा, तो उस वक्त पिया शीशे का वह दरवाजा खोल कर अंदर दाखिल हुइ, जिस के बाहर वाली तरफ 'पुश' लिखा था.

अचानक खिड़की खुल जाने पर हवा के झोंके से जैसे मुंह से एक आह-सी निकलती है, ऐसे ही कैसर के होंठों से बड़ी हकली, बड़ी अज्ञात-सी सीटी नजराने के तौर पर निकली. पिया के लिए कैसर बिजली का खंबा था, जिस में अचानक शाम ढले बत्ती जल गयी.

वह लापरवाही से आगे बढ़ी. काउंटर पर एक कुहनी टिका कर अपना चेहरा हाथ के प्याले में धरा, एक पांव जमीन पर जमाया और दूसरे पांव के पंजे को पीछे खड़ा कर झुलाती हुई बोली, "जीयोजप है?"

इन में न जाने खुदा ने क्या खूबी दे रखी है कि जब यह चाहें मौसम बदल सकती हैं. सर्दियों में लू चलने लगे और गर्मियों में बर्फखाने-सी सर्दी महसूस हो. अंधेरी रात जगमगा उठे और पूर्णमासी की रात अंधेरी हो जाये..

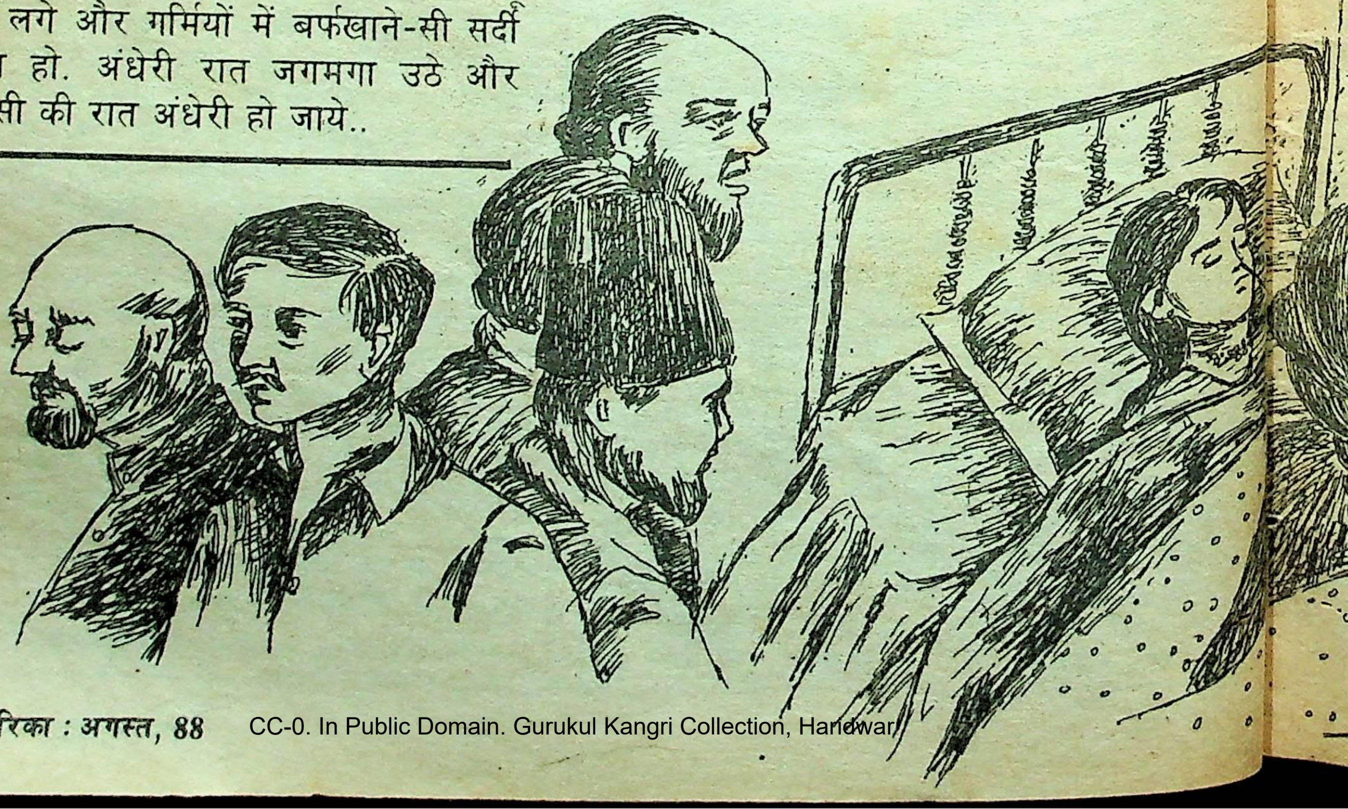

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"जी, किस कदर?"

"क्वार्टर पाउंड!"

कैसर पांच-पांच, दस रुपये के नोट और रेजगारी जमा करता रहा. फिर उसने ब्लैक-फोरस्ट केक वापस कर दिया, क्योंकि सामान उसने ज्यादा पैक करवा दिया था और पैसे मामा ने कम दिये थे. इस सारी कार्रवाई के दौरान वह अधझुकी मुंदी-मुंदी-सी आंखों से पिया को देखता रहा. पिया ने शाकिंग-पिंक रंग का लबादा-नुमा कुछ कमीज, कुछ फ्रॉक, कुछ सर्कट-सा पहन रखा था. लंबी हील वाली कोट शूज के अंदर शाकिंग पिंक जुराबों में धागे उखड़ जाने की वजह से लंबी उधड़न बन गयी थी. कंधों पर दुपट्टा न था. मेंहदी रंगे स्याह बालों में अंगारा-सी चमक जरूर थी.

जब पिया जीयोजप लेकर और कैसर चार डिब्बे उठाये बेकरी से निकला, तो कैसर ने पुश वाला दरवाजा खोला, पिया के गुजरने का इंतजार किया. पिया ने मुस्करा कर 'थैंक यू' कहा, और सीढ़ियां उतर गयी. उसके बाद वे दोनों अपनी-अपनी कार में सवार हो कर गाड़ियां बैक करने लगे, क्योंकि सामने सड़क के ऐन बीच में कोई अफरातफरी का मारा अपनी सफेद गाड़ी पार्क कर गया था. कार बैक करते हुए कैसर ने पिया की गाड़ी का माडेल, कार का नंबर और गरदन मुड़ी लड़की को देखा. मेन सड़क पर पहुंचते-पहुंचते स्टीयरिंग को फेरने वाले कैसर के हाथ भीग चुके थे. विंड-स्क्रीन के सामने लगे हुए शीशे में अब पिया की कार नजर न आती थी, क्योंकि वह पिछले मोड़ पर ही मुड़ गयी थी. अब अनगिनत कारों के बावजूद कैसर को सड़क खाली-खाली नजर आयी. दिल ही दिल में कैसर ने सोचा. इन लड़कियों में न जाने खुदा ने क्या खूबी दे रखी है, जब भी यह चाहें, मौसम बदल सकती हैं. सर्दियों में लू चलने लगे और गर्मियों में बर्फखाने जैसी सर्दी महसूस हो. अंधेरी रात जगमगा उठे और पूर्णमासी की रात अंधेरी हो जाये. वह कार चलाता हुआ सोच रहा था कि इस

कमजोर जिस को बनाने वाले ने बड़ा ही ताकतवर बनाया है. दूर बैठी औरत मर्द को ऐसे खींच सकती है, जैसे लोहेचून को मिकनातीस... कुछ अपने आप से नाखुश और कुछ ऊपर वाले से गिलागुजार करता वह घर में दाखिल हुआ.

"इतनी देर लगा देते हैं कुक्कू?.. कुछ खयाल नहीं है तुम्हें. ए लेवल इम्तिहान ऐसे तो नहीं दे दोगे. सब तुम्हारी शिकायत करते हैं. बड़ा टाइम वेस्ट करना आता है तुम्हें!" पेस्ट्री, पेटीज़ के डिब्बे उसने खामोशी से मामा को पकड़ा दिये. जब से वह शेव करने लगा था, उसके ताल्लुकात मामा से उखड़ गये थे. कभी दोस्तों के सामने मामा मिठार-मिठार कर बातें करने लगतीं. कभी पांच-दस मेहमानों के सामने शेम-शेम-वाली गुफ्तगू के साथ उसका दिल छलनी कर देती. जब वह दिल लगा कर पढ़ता, तब बहुत झिड़कियां पड़तीं. जब पढ़ना छोड़ कर स्कवाश खेलना शुरू कर देता, तो मामा दिलदारियों के साथ उसे अपने आप से बांध लेती. इस झकझोरी की लंबी दास्तानें, अब्बू तक पहुंची. मामा घंटों अपनी सहेलियों के साथ कुक्कू को डिसकस करती. रोती. कसमें खाती. अपने बाल नोचती. मामा को कहीं अंदर यकीन हो चुका था कि उसका कैसर नालायक है. वह अपने बाप की तरह कभी जिंदगी बना नहीं सकता और जो ऊंचा टारगेट मामा ने कैसर के लिए दिल में सोच रखा था, उस तक पहुंच नहीं सकता.

पिया को बेकरी की दुकान पर देखने के बाद कैसर अपने वजूद की झड़न के साथ घर में दाखिल हुआ, क्योंकि सारा वजूद तो वह पिया को नजराना दे आया था. शायद यह खब्त आधे घंटे के बाद वी.सी.आर. पर कोई फिल्म देखते हुए खत्म हो जाता, लेकिन कभी-कभी बाकयात खुद ही संगीन शक्ल अपना लेते हैं. वह शिथिल-सा नंगे पांव कालीन पर फिर रहा था. उसके कानों में मामा की आवाज थी. जब फोन की घंटी बजी, उसने कार्डलेस उठाया, तो उस पर दो सहेलियां आपस में गुफ्तगू कर रही थीं. पिया कह रही थी, "हाय, पता है आंटी, मेरे लिए शाकिंग पिंक स्टाकिंग्ज लायी थीं.. एक तो सिली आते ही फट भी गया. मैंने बेकरी में नोटिस किया था. हां.. बाबा गयी थी जीयोजप्ज लेने..."

इन दोनों लड़कियों की क्रॉस-टॉक पर अगर कैसर गुजार कर लेता, तो शायद खैरियत गुजरती, लेकिन वह तो बीच में कूद पड़ा, और आग, जिसको वह समझता था कि सर्दी पड़ जायेगी, और भड़क उठी. अब पिया और वह, टेलीफोनी दोस्त बन गये. पहलेपहल तो पिया की तरफ से फोन आने लगे. वह बड़ी मिन्नतों-समाजतों से नंबर पूछता, लेकिन कज-रफ्तार ने कभी अपना नंबर न बताया. हमेशा यही कहती, "भई, मैं खुद फोन करूंगी."

इन दिनों सारा वक्त कैसर का दिल फोन की घंटी के साथ बंधा रहता. कहां तो घंटी बजती रहती, लेकिन वह करीब न फटकता. मामा गुसलखाने में चिल्लातीं, "भई कुक्कू, फोन क्यों नहीं देखते!" वह फिर भी फोन की तरफ न बढ़ता और अब कार्डलेस ही उसके कमरे में रहने लगा. यहां तक कि नहाते वक्त भी फोन उसके साथ जाता. उसकी ख्वाहिश होती कि पिया रात को फोन करे, लेकिन पिया कहती, "कुक्कू, मैं कैसे रात को फोन कर सकती हूं. अम्मी मुझे जान से मार डालेंगी!"

"अच्छा, रात को एक बजे... तुम्हें पता है, मेरे पास एक दिया है. मैंने उसका नाम पिया रखा है. मैं रात को पूरे एक बजे उसे टेलीफोन के पास रख कर जलाता हूं. जब तक वह जलता है, मैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीता रहता हूं... जब वह बुझने लगता है, तो मैं इंतजार नहीं करता. सिर्फ जीना बंद कर देता हूं.''

''हाय, नहीं! मैं बाजी के कमरे में सोती हूं.''

''चलो, आज रात... सिर्फ एक बार!''

होते-होते रात के पिछले पहर लंबे-लंबे फोन होने लगे. आवाज दोनों की प्यारी थी और दोनों यही चाहते थे कि तारीफ उस आवाज की होती रहे. हौले-हौले उन फोन की बदौलत वे एक दूसरे के यों वाकिफ बन गये, जैसे मुद्दतों साथ रहे हों. न तो पिया का इरादा कैसर से मिलन का था, और न शदीद ख्वाहिश के बावजूद कैसर पिया को मुलाकातों पर मजबूर करना चाहता था.

अपर क्लास के नौजवानों की तरह कैसर में भी डंक नहीं था. वह सांप, बिच्छू, बर्रिया सब कुछ था, लेकिन उस में काटने, खुखियाने, धोल-धप्पा मारने की खूबी नहीं थी. अंग्रेजी भाषा और मैनर्ज ने उसकी बोल-चाल में एक लाचारी-सी पैदा कर दी थी. बहसों ने उस में गीली लकड़ी का सुलगाव पैदा कर दिया था. जिस कदर ए लेवल की पढ़ाई जानलेवा थी, उस कदर वह अपने आप को इस मेहनत के अयोग्य पाता था. वह अंदर ही अंदर कहीं शायर था. आशिक था. नाकाम इंसान था. वह अपनी मां की आरजुओं को समझता जरूर था, लेकिन दुनियावी तौर पर कामयाब होने की उस में खूबी न थी. इकलौता होने की वजह से वह मामा का कमरतकिया था और जानता था कि अगर दुनियावी तरक्की के इस जीने पर न पहुंच सका, तो मामा-खड़ी-खलोती मर जायेगी, लेकिन गले पड़ी पढ़ाई का सौदा वह कर न सकता था. इसलिए अब वह पढ़ने बैठता, तो कापियों पर खूबसूरत कटे बालों वाली लड़कियों की तसवीरें बनाता रहता. यह तसवीरें गूंगी थीं, लेकिन कैसर उनकी जबान समझता और बोलता था. खिड़की में खड़े-खड़े हवाई जहाजों को देखने के बहाने वह एक आवाज के गिर्द बड़े-बड़े ख्वाब बुनता रहता. उसके चेहरे पर हलकी-सी सुर्खी और आंखों में खुमार उतर आता. यही दिन थे, जब वह खुद-कलामी का शिकार हुआ... हर वक्त उसके अंदर बैठी हुई शाकिंग पिंक लड़की बातें करती रहती. वह तार तोड़ देता, तो फिर फोन की घंटी बजने लगती और वह तमाम सवाल नये सिरे पूछे जाते, जिन का जवाब दोनों तरफ रटा जा चुका था.

लेकिन पिया की एहतियात और कैसर की शराफत के बावजूद वे दोनों एक दिन फिर बाजार में मिल गये. पिया 'फोन' के इंतजार में थी और कैसर मामा के लिए कुछ दवाएं खरीद कर दुकान से बाहर निकल रहा था. पहली ही नजर में उन दोनों ने एक दूसरे को पहचान लिया. अपनी-अपनी शिक्षा-दीक्षा की वजह से उन्होंने उस हादसे को मामूली साबित करने की कोशिश की, लेकिन अंदर ही अंदर कैसर को लगा, जैसे जशने-ताजपोशी में उसे तख्त पर बिठाया जा रहा है. पिया बलश नहीं करना चाहती थी. कैसर हकलाने के मूड में न था. इसलिए पिया मुंह परे कर के कोन खाती रही और कैसर दुकानों के बोर्ड पढ़ता हुआ मौसम के बारे में बातें करता रहा. दोनों के कदम गुलबर्ग के उस बाजार में जम गये थे. पिया दिल में हैरान थी कि वह जिसे मामूली टेलीफोन दोस्ती समझती रही है, वह तो एक ऐसी बीमारी है, जिसका इलाज वह नहीं जानती. कैसर सोच रहा था कि लड़कियों के कदम लेने में जो जिल्लत वह समझा करता था, जिल्लत का वही एहसास तो असल जिंदगी है.

सिपाही अनगिनत बार ट्रैफिक के इशारे बदल चुका था, लेकिन वे अपनी-अपनी कार की चाबियां हाथ में लिये वहीं खड़े थे. कैसर ने कनखियों से पिया की तरफ देख सोचा कि शक्ल तो इस लड़की की बड़ी मामूली है. थ्रेडिंग की वजह से जिल्द भी खराब हो चुकी है. फिर मैं क्यों इस ज़ालिम-मज़लूम-नुमा के हुज़ूर खड़ा हूं. पिया सोच रही थी कि अगर अभी कालेज की कोई दोस्त आ गयी और मुझे कैसर की जान-पहचान करानी पड़ी, तो क्या बात 'सेफ' रह सकेगी? इन दोनों ने अपने-अपने रास्ते जाने की कोशिश की. वे एक कार में एक तरफ तो जा रहे थे, लेकिन बिलकुल भिन्न दिशाओं का सफर उनके लिए काबिले-कबूल न था. फिर पता नहीं कौन-सी ताकत थी, कैसे हल्लाशेरी थी, एक दूसरे की नजदीकी की कैसी प्यास थी, जो उन दोनों को रेस्तोरां के अंदर ले गयी. आमने-सामने बैठ कर बातें करते हुए बड़ा वक्त गुज़र गया. न उन दोनों में से किसी ने सामने धरे कोक को हाथ न लगाया, न बरगर खाया और दवाइयों में से बचे पैसे काउंटर पर अदा कर के कैसर घर आ गया.

कहते हैं, पहले पहल सैलब महज उंगली भर सूराख करता है. फिर सीसा-पिलाई दीवार भी काम नहीं आती. अगर किसी तरह यह मुलाकात ही न होती तो शायद कुछ बच-बचाव हो जाता, लेकिन अब भूसे में तेल डाल कर जलती तीली दिखाई जा चुकी थी. मुलाकातें होने लगीं. कैसर प्राईवेट तौर से 'ए' लेबल का इम्तिहान दे रहा था. पिया थर्ड ईयर में थी. वह अकेला ट्यूशन पढ़ने जाता था. पिया अकेली कालेज के लिए रवाना होती थी. कुछ लोग शायद यह समझें की अगर मिलने-मिलाने न भी दिया जाता, तो भी दोनों तरफ त्राहि-त्राहि होती रहती.

मामा भी आखिर एक मनसूबा रखती थी. उसे भी अपने एकमात्र कमरतकिये को कहीं किसी ऊंची मंजिल पर पहुंचाना था. एक रोज ट्यूशन पर जाते हुए कैसर को मामा ने पकड़ लिया.

''कुक्कू, ठहरो...''

''जी, मामा...''

''मुझे जो बताओगे, सच बताना...''

''जी मामा...''

''तुम सयैद आसिफ अली की बेटी से मिलते रहे हो.. मेरी इजाजत के बगैर..'' किसी ने कैसर पर तिरपाल डाल कर उस पर रस्सी बांध दी.. उसका दम घुटने लगा.

''तुम्हें पता है, उनका स्टेटस क्या है? तुम्हें मालूम है, तुम्हारे जैसे लड़कों को उनका बाप चपरासी भी नहीं रखे...''

पहली बार उसके कानों में अपने बंदीवास की असली हालत खुली, ''हमें क्या एतराज हो सकता है, अगर वह लोग मान जायें... लेकिन उन लोगों को मानने के लिए कुछ होना चाहिए.. कुछ बनना पड़ेगा. तुम्हारा क्या खयाल है? एक ए लेवल की तैयारी करने वाले लड़के से वह अपनी बेटी ब्याह देंगे? तुम आम जिंदगी में एक बड़े अफसर के बेटे हो.... लेकिन कुक्कू वह लैंडलार्ड है. कारखानेदार है. किस मुसीबत में फंस गये हो तुम. ध्यान से पढ़ाई करो....''

कैसर ने जवाब देना चाहा. कुछ अपनी सफाई में, कुछ पिया की सच्चाई में. लेकिन उस वक्त मामा ने कोने में पड़ा हुआ रेकट इतनी जोर से सोफे के बाजू पर मारा कि रेकट के ऐन दरम्यान में पटाके की आवाज आयी और जाली वाला हिस्सा लटक गया.

''तुम्हें क्या पता, अमीरजादियों के पास तुम्हारे जैसे खिलौने बहुत... मारी तो मैं जाऊंगी, जिस का एक ही एक बेटा है... मारी तो मैं जाऊंगी कैसर...'' मामा सिर के बाल नोचती, गले से ऊंट जैसी आवाज़ें निकालती सीढ़ियां चढ़ गयीं.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहली बार उसकी मोहब्बत के शगूफे ने दुनिया की हवा चक्खी. अब तक वह अंदर किसी अंधेरे में मिनी-प्लांट की तरह पल रहा था. अब उसे समझ में नहीं आ रहा था कि पिया को पाने तक लंबा सफर जैसे तय होगा. जबकि पढ़ाई का सफर वह तय ही नहीं कर सकता. वह तो सारा दिन पिया के नाखूनों, उसके हाथों की लकीरों को देखता रहता है. कान की लौ पर बैठे हुए टॉप्स उसकी निगाह से ओझल नहीं होते. हंसते समय सामने वाले दोनों दांतों के हलके से शिगाफ में से जो खुशदिली से मुस्कराती है, वही उसके पीछे सुबह-शाम रहती थी. यह नहीं कि वह ट्यूशन पढ़ने नहीं जाता था. वह नहीं कि वह पहरों दरवाजा बंद कर के किताबें खोले अक्षरों की चीटामीटी नहीं देखता था, पर कुछ लोग अंदर ही अंदर आशिक होते हैं. कैफियतों में रहते हैं. दुनिया के एतबार के नाकाम इंसान होते हैं. जिस रोज मामा के स्कवाश का रेकट तोड़ कर अपने सिर के बाल नोचे, उस दिन के बाद से कैसर खौफज़दा हो गया. वह पिया से मिलने पर पढ़ाई को तरजीह देने लगा. उसने टेलीफोन की घंटी भी सुनने से कई बार दिल से इंकार किया. लेकिन अंदर इतनी चौमुखी लड़ाई लड़ने के बावज़ूद जो चीज़ उसे कूट रही थी, वह यही थी कि आखिर उस मोहब्बत में जलने-भस्म होने का फायदा? वह भला सयैद आसिफ अली की बेटी को क्या दे सकता है? मोहब्बत का मिनी-प्लांट दुनिया की धूप कब तक बर्दाश्त कर सकता है. वह अजीब दुविधा में फंसा रहता. दिल पर मोहब्बत की बालादस्ती थी. पढ़ाई पर मामा का राज चलता था. बाप से वह यूं ही निगाहें चार करने का आदी न था. कभी आठ आठ घंटे पढ़ता रहता. कभी तीन-तीन दिन किताब को हाथ न लगाता. हर बार नया टाइम-टेबुल बनता. नयी कसमें खायी जातीं, लेकि प्रोग्राम पर अमल करना उसके बस की बात न थी.

उन ही दिनों जब वह अपने खयाल में पिया नामक ब्राउन लड़की को भुला चुका था, वह उसे अचानक फाइन वीडियो शाप में मिल गयी. पिया काउंटर पर खड़ी, कुहनी रखे, हाथ के प्याले में चेहरा जमाये, एक पांव फर्श पर जमा कर दूसरा पैर पंजे पर उठाये खड़ी थी. तभी कैसर कुछ फिल्में वापस करने वीडियो शाप में दाखिल हुआ.

"हाए! तुम अपने आप को समझते हो!" पिया ने सरे आबरू चढ़ा कर पूछा.

"मैं?... कुछ नहीं..!"

"मैं तुम्हारे जैसे लड़के के मुंह पर थूकती भी नहीं...."

इसके बाद कैसर उसे कुहनी से पकड़ कर घसीटता हुआ दुकान के बाहर ले आया. वे दोनों पिया की कार के पास पहुंचे. पिया ने कई बार कार स्टार्ट की, लेकिन कैसर ने कार में से उतरने से इंकार कर दिया. कैसर ने बहुत मिन्नतें कर के पिया को मनाने की कोशिश की, लेकिन पिया ने मन जाने पर रजामंदी प्रकट न की.... जब दोनों तरफ से बहुत गर्मी-सर्दी हो गयी, तो आखिर पिया ने कहा, "चलो, घर चलो.... एक बार यह टंटा भी खत्म हो. किसी तरह तुम शक्ल दिखा आओ. बाकी सब मैं संभाल लूंगी...."

कैसर के गुबारे में से गैस निकल गयी. वह कार में निकल कर ड्राइवर के दरवाजे की तरफ आ गया और दोनों हाथ पिया के कंधों पर रख कर बोला, "नहीं पिया..... मैं तुम्हारे घर नहीं आ सकता.. सॉरी!"

"क्यों?..."

माना मेरे अब्बू बहुत बड़े सरकारी अफसर हैं... लेकिन हमारे पास कुछ नहीं है. बंगला सरकारी है. कार-सरकारी है... और मैं अभी ए लेवल का इम्तिहान भी दे नहीं पाया."

"मैं इंतजार कर लूंगी कैसर!"

"तुम्हारा इंतजार कितने साल... कब तक....?" पिया के होठों पर आंसुओं के आगमन के असार थे.

"जब तक तुम कहो..."

"मेरी मां मुझे कुछ बनाना चाहती है. मैं कुछ बन नहीं सकता.. पिया..."

"चलो, मैं गुजारा कर लूंगी कुक्कू..."

"गुजारा करना इतना आसान भी नहीं होता पिया... और फिर मैं क्यों तुम्हें वह तकलीफें दूं, जिन का अभी तुम्हें ठीक से पता भी नहीं है..."

"और कुछ न हुआ तो हम जमीनों पर चले जायेंगे कुक्कू.. मेरी जमीन हम दोनों के लिए काफी है..."

"नहीं पिया... मैं अम्मी के सिवा किसी के पाकेट-मनी नहीं ले सकता!"

"तुम्हें मालूम है कि अम्मी मेरी शादी कर देंगी?... तुम मेरे साथ चलो.... बाकी मैं संभाल लूंगी कैसर.... सब मेरी जबान से डरते हैं. तुम चलो तो सही... सब जानते हैं. जो मैं चाहती हूं, कर के रहती हूं."

बिजली के खंबे का बल्ब फ्यूज हो गया और वह अपनी जगह से हिल न सका. पिया के चेहरे पर पता नहीं कब के रुके हुए आंसू बहने लगे. उसने धक्के से गाड़ी को स्टार्ट किया और मोड़ काट गयी. पढ़ने का जो ताजा-ताजा अहद उसने किया था, वह उस कार के साथ रवाना हो गया.

अस्पताल की सीढ़ियां चढ़ते वक्त कैसर को पता न था कि इतनी बड़ी बात भी हो सकती है. वह समझता था कि पिया के घर वालों ने उसे डराने धमकाने, नोटिस देने के लिए अस्पताल में तलब किया है. भला पिया जिस के दरम्यानी दो दांतों के बीच खुशदिली रहती है, यों अपनी जान ले सकती है? लेकिन जिस वक्त वह प्राईवेट कमरे में दाखिल हुआ, कमरे में दबी-दबी सिसकियों का शोर था. न जाने पलंग के इर्द-गिर्द कौन औरतें थीं, लेकिन जिस लड़की को वह जानता था, उसके चेहरे पर चादर थी और पांयते कंबल से एक पांव बाहर था, जिस पर शापिंग पिंक स्टाकिंग थी.

कैसर ने दोनों हाथों में उस पांव को पकड़ लिया. स्लीपिंग-पिल्ज ने उस जानदार पांव को भी चिरनिद्रा में सुला दिया था. पता नहीं कब से कैसर की बुनियाद में पानी गिर रहा था. बजाहिर तो वह सेहतमंद दरख्त था, लेकिन अंदर से मिट्टी पोली हो चुकी थी. उसे डर था कि कहीं सब के सामने वह तेवरा कर गिर न पड़े.

सरकारी गाड़ी की विंड-स्क्रीन पर खिजां-मारे पत्ते गिर रहे थे. कहीं से बरसन-हार बादल आसमान पर इकट्ठे हो गये थे और इक्का-दुक्का बूंदें भी शीशे पर पड़ने लगी थीं. कैसर सोच रहा था कि उस मां के लिए क्या कर सकूंगा, जबकि मैं पिया के लिए उसके घर तक न जा सका.... विंड-स्क्रीन उसके आंसुओं से धुंधला रही थी. अंग्रेजी भाषा और मैनर्ज ने उस में लाचारी पैदा कर दी थी. मामा की झिड़कियां सह-सह कर वह बर्जदिल हो चुका था... □

अनुवाद : सुरजीत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाराज कृष्ण काव

प्रेम विभाग

प्रथम दृश्य

सभी : गुड मार्निंग, सर

सचिव : गुड मार्निंग. बैठिए, बैठिए. (कुर्सी खींचते हैं) सब लोग आ गये हैं क्या?

उप सचिव : (बहुत हलीमी और अधेड़पन के साथ) जनाब, सब आ गये हैं. (फुसफुसाकर) मगर सर, मीटिंग किस विषय पर है, यह सभी पूछ रहे हैं. एजेंडा तो हमने कोई सर्कुलेट नहीं किया.

सचिव : (फुसफुसाहट) कोई बात नहीं. मैं अभी बताता हूं. (सबसे) आज की एमरजेंसी बैठक मैंने बहुत कम नोटिस पर इसलिए बुलाई है कि हमें फौरन एक नये विभाग की स्थापना करने का हुक्म हुआ है.

संयुक्ता सचिव (एक महिला) : नया विभाग, सर? क्या पुराने विभाग कम हैं, सर?

सचिव : कम ज्यादा का सवाल नहीं है, मिसेज दादा. यह तो मुख्य मंत्री जी घोषणा कर चुके हैं.

उप सचिव : ओह, घोषणा कर चुके हैं. तब तो सर हमारे पास कोई ऑपशन नहीं है.

मिसेज दादा : मगर सर, घोषणा घोषणा में भी तो फर्क होता है. कई घोषणाएं तो जनता के कंजपशन के लिए की जाती हैं. क्या आप संतुष्ट हैं कि मुख्य मंत्री जी इस घोषणा को कार्यान्वित करना चाहते हैं.

सचिव : जी हां, बिल्कुल डेफिनिट. मुझे उन्होंने ट्रंककाल से बताया कि वह तुरंत, आज ही नये विभाग को गठित हुआ देखना चाहते हैं.

मिसेज दादा : आज सर? आज कैसे हो सकता है?

सचिव : हो क्यों नहीं सकता? जब मुख्य मंत्री जी का आदेश है तो सकने न सकने का सवाल ही नहीं है. होना होगा.

उप सचिव : यस सर. हो जाएगा, सर. कौनसा विभाग सेटअप करना है सर?

सचिव : प्रेम विभाग.

सब : प्रेम विभाग!!

सचिव : जी हां, प्रेम विभाग. प्रेम का विभाग. मिस्टर हॉजी.

उप सचिव : यस सर.

सचिव : वह टेप रिकार्डर ऑन कर दीजिए और यह टेप इसमें डाल दीजिए.

श्री हॉजी : राइट सर.

सचिव (सबसे) : जब मुख्य मंत्री जी का फोन आया तो मैंने तुरंत लोक संपर्क (अधिकारी से कहा कि मुझे स्पेशल मेसेंजर द्वारा उनके भाषण का टेप भेज दें. यह वही टेप है.

एक अवर सचिव : सर, यही तो आपमें गुण है. क्या फुर्ती है सर? बाकी लोग तो अभी सोच रहे होते. आपने एक्शन ले लिया.

दूसरे अवर सचिव : आप बड़े डायनामिक हैं सर.

सचिव : (फूलकर) : नहीं, नहीं, ऐसा तो नहीं. मगर हां, मैं किसी चीज में देर नहीं होने देता.

श्री हॉजी :टेपरिकार्डर तैयार है सर.

सचिव : तो चालू कर दीजिए.

(सब खामोश हो जाते हैं. मुख्य मंत्री की आवाज भाषण देते हुए).

मुख्य मंत्री : हमें इस देश से गरीबी को हटाना है. मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि मेरी सरकार इसके लिए कटिबद्ध है. (तालियां)

एक अंतिम बात. सरकार के पास बहुत शिकायतें आयी हैं, प्रेम के बारे में. कुछ लोगों ने कहा है कि शुद्ध प्रेम तो कहीं मिलता ही नहीं. प्रेम में मिलावट आ गई है. हम जानता चाहते हैं कि यह कौन लोग हैं

> प्रहसनों पर आधारित यह स्तंभ आप नियमित रूप से हर माह पायेंगे. 'प्रेम विभाग' में पढ़िये कि प्रेम को बढ़ावा देने के लिए क्या कुछ किया जा सकता है!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो प्रेम में मिलावट कर रहे हैं. क्या यह वही लोग नहीं हैं जो सरकार की हर बात पर विरोध करते हैं. वही लोग नहीं हैं जो देशद्रोही हैं.

मिसेज दादा : इनको हर जगह देशद्रोही ही नजर आते हैं.

सचिव : शशश्. सुनिए, सुनिए.

मुख्य मंत्री : हमें पता लगा है कि कुछ लोग प्रेम की मोनोपली कर बैठे हैं. मुझे सी.आई.डी. की गुप्त रिपोर्ट मिली है कि कोई फरहाद है, कोई मजनू है, कोई रोमियो है. ये लोग हैं जिन्होंने प्रेम पर एकाधिकार किया हुआ है. हमारी सरकार मोनोपली के खिलाफ है. हम नहीं बरदाशत कर सकते हैं कि प्रेम कुछ लोगों की बपौती बनकर रह जाए. हम चाहते हैं कि वह जनता जर्नादन तक पहुंचे, गरीब आदमी तक पहुंचे, कॉमन मैन को उपलब्ध हो.

उप सचिव : बहुत अच्छा बोल रहे हैं, सर.

सचिव : आप नोट्स ले रहे हैं ना? यह सरकार का पॉलिसी स्टेटमेंट हैं.

मिसेज़ दादा : हां, हां, सर! मुख्य मंत्री अगर जम्हाई भी लें तो पॉलिसी स्टेटमेंट हो जाता है.

सचिव : अच्छा, अच्छा, अब सुनिए तो.

मुख्य मंत्री : इसलिए मैं बहुत खुशी से यह घोषणा करता हूं कि प्रेम पर नियंत्रण रखने, मिलावट रोकने, एकाधिकार समाप्त करने और उसे जनसाधारण तक पहुंचाने के लिए सरकार एक नये विभाग का गठन करेगी. (तालियां) कल से ही यह विभाग काम करना चालू करेगा. (तालियों की गड़गड़ाहट) जय हिंद. (थोड़ी देर टेप पर शोर आता है, फिर क्लिक के साथ ही टेप बंद हो जाता है).

श्री हॉजी : क्या बढ़िया बोलते हैं. सर!

पहला अवर सचिव : गजब का जादू है. मगर हमारे सर तो इनसे भी अच्छा बोलते हैं.

दूसरा अवर सचिव : उस दिन आपका रेडियो पर टॉक सुना था सर, क्या विद्वता थी, क्या शब्दों का चयन था. मजा आ गया.

मिसेज़ दादा : यह प्रेम विभाग की स्थापना मुख्य मंत्री की एक और बेवकूफी मालूम होती है. अरे प्रेम पर भी कभी कोई काबू पा सका है.

सचिव : अच्छा, सुनिए भी. विभाग की स्थापना तो करनी ही करनी है. यह निर्णय सही है या ठीक, यह देखना हमारा काम नहीं है.

उप सचिव : सर, एक तो प्रेम निर्देशक होंगे.

सचिव : जी, वह तो होंगे ही. विभाग के अध्यक्ष. आगे बढ़िये.

पहला अवर सचिव : उसके नीचे, सर, एक उपनिदेशक (व्यापारिक प्रेम) चाहिए. वह ऐसे प्रेम का निर्देशन करेंगे जो व्यावसायिक अथवा व्यापारिक हो.

सचिव : व्यापारिक प्रेम? यह क्या बला है?

दूसरा अवर सचिव : कुछ लोगों का व्यवसाय ही प्रेम है, सर! है ना सर? (फुसफुसाहट) यह मिसेज दादा के सामने क्या बताएं, सर? मतलब वैश्याओं आदि से है.

सचिव : ओ, अच्छा, अच्छा. हां, हां, वह तो होना ही पड़ेगा.

श्री हॉजी : दूसरा उपनिदेशक (रोमांटिक प्रेम) कहलाएगा, सर.

पहला अवर सचिव : उनके नीचे प्रत्येक जिले में एक-एक जिला प्रेम अधिकारी होगा.

दूसरा अवर सचिव : हर पंचायत में एक प्रेम सेवक होगा.

मिसेज दादा : प्रेम सेवक? वह किसके लिए चाहिए?

श्री हॉजी : प्रेमियों की सेवा के लिए मैडम. उन्हें आहें भरने के लिए फालतू ऑक्सीजन, आहों को ठंडा करने के लिए बर्फ, रोने के लिए नमकीन पानी अथवा ग्लिसिरीन और सोने के लिए नींद की गोली मुहय्या करेगा.

पहला अवर सचिव : गिरेबा चाक करने के लिए कुछ कुत्ते भी देने होंगे.

दूसरा अवर सचिव : और माशूक की गली में घूमने के लिए एक अदद चप्पल भी.

सचिव : यह भी सुझाव तो ठीक हैं मगर खर्चे का भी तो ध्यान रखिए. मेरे विचार में अभी राज्यस्तर का स्टाफ ले लेते हैं. बाकी स्तरों को थोड़ा सोचकर फैसला करेंगे.

श्री हॉजी : यस, सर.

पहला अवर सचिव : यह बढ़िया आईडिया है, सर.

दूसरा अवर सचिव : ब्रिलियेंट, सर, ब्रिलियेंट.

सचिव : तो फिर, निदेशक किसे बनाया जाए? आज ही बनाना होगा.

पहला अवर सचिव : सर, श्री हॉजी क्या इसके लिए उपयुक्त नहीं रहेंगे?

सचिव : क्यों, हॉजी साहब, कर लेंगे आप यह काम भी?

श्री हॉजी : हां, कर लूंगा सर. जैसा हुक्म होगा, सर.

दूसरा अवर सचिव : हॉजी साहब तो सर काम के लिए मना नहीं करेंगे. मगर जनाब को सोचना चाहिए सर. कुछ अतिरिक्त विशेष वेतन तो मिलना ही चाहिए, सर.

मिसेज दादा : प्रेम का निर्देशन भी और विशेष वेतन भी.

सचिव : नहीं, अतिरिक्त वेतन तो देना ही पड़ेगा. अच्छा आप अभी अधिसूचना जारी कर दीजिए. फिर निर्देशक के पद का कार्यभार भी ग्रहण कर लें. मगर आज ही

श्री हॉजी : राइट सर. उपनिदेशक कौन बनेंगे सर?

सचिव : आपका महकमा है. आप सुझाव दीजिए.

श्री हॉजी : मेहरबानी, सर. अगर गुस्ताखी माफ हो तो मेरा निवेदन है कि.....

मिसेज दादा : चार्ज दोनों अवर सचिवों को दिया जाए, क्योंकि दो-दो विशेष वेतन पहले से ही ले रहे हैं. एक और हो जायेगा. क्या परेशानी है?

सचिव : तो ठीक है. दोनों को चार्ज दीजिए.

श्री हॉजी : थैंक्यू सर.

(दूसरा दृश्य)

मुख्य मंत्री : ठीक है, यह तो हो गया. अगली मद ले लीजिए, चीफ सेक्रेटरी साहब.

चीफ सेक्रेटरी : अगली मद प्रेम नियंत्रण व निर्देशन अधिनियम, 1984 का प्रारूप है.

मुख्य मंत्री : जी.

चीफ सेक्रेटरी : सचिव (प्रेम) को मैंने बुलाया है, वह इसका ब्यौरा आपके सामने रखेंगे. लीजिए, आ गये.

मुख्य मंत्री : क्या बिल बनाया है, सचिव महोदय?

सचिव (प्रेम) : सर, मुख्यतः तीन-चार बातें हैं. पहला, प्रेम का राष्ट्रीयकरण.

मुख्य मंत्री : राष्ट्रीयकरण? क्या मतलब!

सचिव (प्रेम) : मतलब यह सर कि जिस बात पर हमारा कोई नियंत्रण नहीं उसे हम रेगुलेट कैसे करेंगे. मिलावट कैसे रोकेंगे, चोरबाजारी कैसे खत्म करेंगे, एकाधिकार कैसे नष्ट करेंगे.

मुख्य सचिव : बात तो ठीक है.

मुख्य मंत्री : मगर आप करेंगे क्या?

सचिव (प्रेम) : सर, इस कानून द्वारा सरकार की आज्ञा के बगैर प्रेम करना अपराध माना जाएगा. प्रदेश के सारे प्रेम पर सरकार का अधिकार हो जाएगा.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुख्य मंत्री : आप सारे प्रेम को लेकर रखेंगे कहां?

सचिव (प्रेम) : सर, प्रेम को लेने की स्कीम अभी नहीं बनाई है. फिलहाल तो हम उसे लोगों के पास ही रहने देंगे, मगर अधिकार हमारा होगा, नियंत्रण हम करेंगे.

मुख्य सचिव : क्या प्रक्रिया अपनाएंगे इसके लिए, सी.एम. यह जानना चाहते हैं?

सचिव (प्रेम) : सर, हमारे दफ्तर जिला स्तर तक खोले जा रहे हैं. जिस भी स्त्री या पुरुष को प्रेम करने की इच्छा हो, वह हमें निर्धारित फॉर्म पर आवेदनपत्र दे सकता/सकती है.

मुख्य मंत्री : सादे कागज पर?

सचिव : नहीं, सर. छपे हुए फॉर्म पर.

मुख्य मंत्री : कोई फीस?

सचिव : हां, सर. हर आवेदन के साथ 500 रुपये.

मुख्य मंत्री : 500 रुपये कुछ ज्यादा लगते हैं. इसको थोड़ा घटा दीजिए. गरीबों को भी प्रेम करने का अधिकार होना चाहिए.

सचिव (प्रेम) : तो 400 कर दीजिए, सर.

एक और मंत्री : देखिए, सचिवजी, आप ब्यूरोक्रेट्स तो जनता से बहुत दूर हैं. यू आर आउट ऑफ टच. मेरे विचार में गरीबों से 5 रुपये लें या बिल्कुल ही कुछ नहीं.

सचिव (प्रेम) : सर, आप बजा फरमाते हैं. मगर यह भी तो देखिए कि योजना किस तरह सेल्फ सर्पोटिंग बन सकती है. सारे अमले का खर्चा तभी पूरा होता है यदि हम 500 रुपये प्रति केस से लें. 5 रुपया लेने से तो 2 करोड़ रुपये की हानि होगी. बाकी आप मालिक हैं.

मुख्य मंत्री : मेरा खयाल है, गरीबों के लिए 100 रुपये रख दें.

सचिव (प्रेम) : जी बेहतर.

मुख्य सचिव : अच्छा, आप प्रेम की इजाजत किस प्रकार के केसों में देंगे और किन में नहीं.

सचिव (प्रेम) : इसके लिए नीति बनाई जा रही है. एक तो आयु बेमेल नहीं होनी चाहिए. हम स्त्री-पुरुषों की आयु-तालिकाएं गजट में छपवाएंगे. चालीस वर्ष का पुरुष केवल 36.5 और 39.5 वर्षों के बीच की महिला से प्रेम कर सकेगा.

मुख्य मंत्री : अच्छा, और?

सचिव (प्रेम) : दूसरा वर्गीकरण आय पर आधारित है सर. जैसे 1000 रुपये आय वाला मर्द केवल 650 से 950 रुपये आय वाली औरत से प्रेम करने का हकदार होगा.

दूसरा मंत्री : ऐसा क्यों? अगर कोई उच्च वर्ग का व्यक्ति किसी निम्न वर्ग की स्त्री से प्यार करना चाहे तो सरकार को उसमें क्या आपत्ति है?

मुख्य सचिव : चलने दीजिए, सर. ज्यादा छूट देते हैं तो कानून को दृढ़ता से लागू करना असंभव हो जाता है.

मुख्य मंत्री : और क्या नीति बनाई है?

सचिव (प्रेम) : सर, अगर कोई व्यक्ति किसी भिन्न राज्य, धर्म, भाषा अथवा वर्ण के व्यक्ति से प्रेम करता है और इसे साबित करने के लिए किसी गजेटिड अफसर या मैजिस्ट्रेट से प्रमाणपत्र देता है तो उसे ईनाम के तौर पर एक ट्रांजिस्टर रेडियो, पचास निरोध के पैकिट और 250 रुपये दिये जायेंगे.

मुख्य मंत्री : यह तो बहुत अच्छा है. इससे राष्ट्रीय एकता की भावना बढ़ेगी.

सचिव (प्रेम) : सर, इस भावना को और बढ़ावा देने के लिए यह प्रस्ताव है कि जो व्यक्ति इस प्रकार का प्रेम जितने व्यक्तियों से करेगा, उसी अनुपात में इनाम की राशि भी बढ़ाई जायेगी.

मुख्य मंत्री : बढ़िया सुझाव है. यह कर लीजिए. वैसे आपका नियंत्रण किस प्रकार रहेगा?

सचिव (प्रेम) : सर, बहुत सोच-समझकर इसका तरीका निकाला है. शुरू में आवेदक प्रेमारंभ - घोषणा करेगा. इसकी एक प्रति भेजकर हम दूसरी पार्टी को भेजकर उसकी टिप्पणी मंगायेंगे.

दूसरा मंत्री : बाकी पांच कॉपियों का आपने क्या करना है.

सचिव (प्रेम) : सर, वे तो चाहिए होती हैं. एक मुख्यालय, दूसरी ज़िला कार्यालय, तीसरी रिकार्ड, चौथी अकाउंटस और पांचवीं अनुसंधान-कक्ष के लिए.

मुख्य सचिव : इतनी कॉपीज तो सर, होनी ही चाहिए.

मुख्य मंत्री : ठीक है.

सचिव (प्रेम) : दूसरी पार्टी का स्वीकारात्मक उत्तर आने पर यदि प्रेम नियमानुसार ठीक पाया जाये तो सक्षम अधिकारी उनका अनुमोदन कर देंगे. मगर प्रेम कैसा चल रहा है, कितना है, कोई मिलावट या शिकायत तो नहीं, इस बारे में दोनों पार्टीज जिला प्रेम अधिकारी को मासिक रिपोर्ट भेजेंगी.

मुख्य सचिव : मासिक रिपोर्ट का आइडिया अच्छा है.

अन्य मंत्री : रिपोर्ट अगर त्रैमासिक हो जाए तो शायद कागजी कार्यवाही कम हो जाएगी.

मुख्य सचिव : जनाब, मासिक रिपोर्ट का अपना ही चार्म है.

मुख्य मंत्री : मासिक ही रहने दीजिए. आगे क्या होगा?

सचिव (प्रेम) : सर, यदि प्रेम ठीक-ठाक चला तो उसके अंत होने पर एक फाइनल रिपोर्ट दोनों पार्टीज दे देंगी.

मुख्य सचिव : उसकी भी छः कॉपीज ले रहे हो ना?

सचिव (प्रेम) : यस, सर.

मुख्य सचिव : वेरी गुड!

सचिव (प्रेम) : फाइनल रिपोर्ट आने पर, सर, हमारी फाइल पूर्ण हो जाएगी. उसे कवर चढ़वाकर, सिलवाकर, पेज नंबर ढलवाकर दाखिल दफ्तर कर दिया जाएगा.

मुख्य मंत्री : लेकिन अगर कोई शिकायत आयी तो?

सचिव (प्रेम) : उस सूरत में हमारे प्रेम इंस्पेक्टर मौके पर जाकर तफ्तीश करेंगे, सही स्थिति का जायजा लेंगे और अपनी रिपोर्ट भेजेंगे.

मुख्य मंत्री : और अगर रिपोर्ट में कोई गड़बड़ी साबित होनी बताई जाए?

सचिव (प्रेम) : तो, सर, अधिनियम की धारा (75) की उपधारा (4) के खंड (क) के उपखंड (I) के दूसरे परंतुक के तहत मुजरिम के खिलाफ कार्यवाही होगी.

आस्था

गिरजे की एक भिक्षुणी बहुत बड़ा अनाथालय खोलना चाहती थी.

उस समय उसके पास सिर्फ तीन रुपये थे, और वह उसी पूंजी से अनाथालय का काम शुरू कर देना चाहती थी.

कुछ लोगों ने उसे सलाह दी, "पहले काफी सारा धन इकट्ठा कर लीजिये, फिर अनाथालय का काम शुरू कीजिये. भला तीन रुपयों से क्या कुछ हो सकेगा?"

भिक्षुणी ने सहज भाव में कहा, "बेशक तीन रुपयों से मैं कुछ नहीं कर सकती, लेकिन ईश्वर और तीन रुपये पास होने पर मेरे लिए कोई काम असंभव नहीं है. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुख्य सचिव : क्या कार्यवाही?

सचिव (प्रेम) : प्रेम संबंध तुड़वा दिया जाएगा. मगर ऐसा करने से पहले दोनों पार्टीज को 15 दिन का वक्त देना होगा ताकि वह अपना स्पष्टीकरण दे सकें.

मुख्य मंत्री : भई, सचिव महोदय, वाह. जवाब नहीं है अधिनियम का और आपकी ड्राफ्टिंग एबिलिटी का. कोई चीज भी तो नहीं भूले हैं आप.

अन्य मंत्री : लेकिन, सर, एक बात मैं पूछना चाहता था. अधिनियम में प्रेम की फाइनल रिपोर्ट भी आ गयी और संबंध तोड़ने की बात भी. क्या कोई प्रेम संबंध विवाह में परिणत नहीं होंगे? उसके बारे में विभाग ने क्या प्रावधान रखा है?

सचिव (प्रेम) : सर, यह प्रश्न मुझसे न पूछा जाये. मैं तो केवल प्रेम विभाग का सचिव हूं.

मुख्य सचिव : मैं अभी विवाह विभाग के सचिव को मंत्रिमंडल के सामने प्रस्तुत करता हूं. (घंटी बजती है)

चपड़ासी : यस सर.

मुख्य सचिव : देखो, जरा विवाह सचिव को बुलाओ.

चपड़ासी : बहुत अच्छा, सर.

मुख्य सचिव : वह अभी आ जायेगी सर. अगर इजाजत दें तो मैं अगले आइटम को ले लूं. (सचिव (प्रेम) से) आप जा सकते हैं. आपका बिल अनुमोदित हुआ.

(तीसरा दृश्य)

युवक : मेरा खयाल है हमारी मंजिल आ गयी. वह रहा आफिस का बोर्ड.

युवती : खुश होने से पहले नजदीक जाकर देख लें. दो घंटे से आफिस ढूंढते-ढूंढते मैं तो परेशान हो गयी.

युवक : यही है. यह देखो, मोटे अक्षरों में लिखा है – 'जिला प्रेम अधिकारी कार्यालय'.

युवती : पता नहीं, वह दफ्तर में होंगे या नहीं. दौरे पर न चले गये हों?

युवक : तुम फ्रिक क्यों कर रही हो? अभी सब पता लग जायेगा. (चपड़ासी से) क्यों जनाब, साहब बैठे हैं?

चपड़ासी : पता नहीं.

युवक : पता नहीं क्यों? आप उनके चपड़ासी नहीं हैं?

चपड़ासी : चपड़ासी? और उनका? अरे मिस्टर, अपना रस्ता नापो. मैं क्लास फोर आफिसर हूं. उनके आने-जाने का हिसाब नहीं रखता.

युवक : यह सरकारी दफ्तर नहीं है? आप सरकारी कर्मचारी नहीं हैं? इस तरह से खुशामद करने का क्या मतलब है? हमें साहब से काम है और हम अंदर जा रहे हैं.

चपड़ासी : वहीं खड़े रहिए. अगर जबरदस्ती की तो बुरा होगा. यह तख्ती नहीं देखते? सरकार ने पब्लिक से मिलने का टाईम मुकर्रर किया हुआ है.

युवती : चार से सवा चार बजे?

चपड़ासी : जी.

युवती : देखो भइया, इनकी बात का बुरा मत मानना. हम दूर से आये हैं. आखिरी बस दो बजे वापिस जाती है. यहां रात ठहरना नहीं चाहते. आपकी मेहरबानी होगी अगर साहब से मिलवा दो.

युवक : यह क्या कर रही हो? इसकी खुशामद करने से मतलब?

युवती : तुम चुप रहो. (धीमे से) काम कराना है या नहीं?

चपड़ासी : बहनजी, इस वक्त साहब किसी से नहीं मिलते, लेकिन आपकी बात सुनकर मुझे लगता है कि आपका केस औरों से भिन्न है. अगर मैं साहब से बात कर लूं तो शायद वे आपको दो मिनट दे सकें.

युवती : बड़ी मेहरबानी होगी.

चपड़ासी : अरे, बहिनजी, क्या जमाना आ गया है? मेरे पिताजी अंग्रेज के वक्त में कलक्टर साहब के अर्दली होते थे. मजाल थी कि कोई खाली हाथ आता. यहां के जमींदार जागीरदार भी आते तो पिताजी को इनाम दे जाते.

युवक : हां, भई, तब हम गुलाम थे. अब हम आजाद हैं. अब इनाम को रिश्वत कहते हैं.

युवती : तुम चुप रहो! क्लास फोर अफसर साहब, आपका नाम क्या है?

चपड़ासी : जरनैल सिंह.

युवती : जरनैल सिंह जी, आप बजा फरमाते हैं. अंग्रेजों को जमाना बहुत बढ़िया था. (नोट की सरसराहट) इस महंगाई के जमाने में चाय-पानी के लिए कुछ...

चपड़ासी : अरे, बहिनजी, यह क्या कर रही है? मैं पैसे को हाथ नहीं लगाता. मैं अपनी ईमानदारी के लिए मशहूर हूं.

युवती : रख लीजिए ना.

चपड़ासी : हाथ नहीं लगाऊंगा. अच्छा, आप जोर करती हैं तो जेब में डाल दीजिए. (नोट की सरसराहट)

आप लोग यहीं रुकिए. मैं साहब से आपकी सिफारिश कर आता हूं. (जाता है)

युवक : तुम्हें इसको रिश्वत देने की क्या जरूरत थी?

युवती : तुम अपने आदर्शों को घर पर रखो. जिंदगी आदर्शों से नहीं चलती.

युवक : क्या मतलब?

युवती : मतलब यह कि अगर चपड़ासी ही आपको घुसने न दे तो क्या कर लोगे?

युवक : तुमने मुझे रोक दिया वरना मैंने उसे धमका लिया होता.

युवती : अरे, जाओ, जाओ. यह इतनी आसानी से नहीं धमकते.

चपड़ासी : चलिए, साहब बुला रहे हैं. बड़ी मुश्किल से माने.

युवती : बहुत मेहरबानी (अंदर जाती है)

युवक : नमस्कार, सर.

अधिकारी : (व्यस्त स्वर में) नमस्कार. अभी जरा बैठिए, मैं कुछ जरूरी काम कर रहा हूं.

युवक : (धीरे से) लगता है अपनी पत्नी को पत्र लिख रहे हैं. बहुत जरूरी काम है.

युवती : (धीरे से) अब चुप भी करो. सुन लेंगे.

युवक : सुन ले. क्या होगा? यह अपने पत्र घर पर नहीं लिख सकता?

युवती : ओफ्फोह! तुम यहां से निकलवाओगे.

अफसर : (घंटी बजाते हैं) जरनैल सिंह!

चपड़ासी : जनाब!

अफसर : यह चिट्ठी अभी पोस्ट कर आओ.

चपड़ासी : अच्छा सर!

अफसर : और सुनो!

चपड़ासी : यस सर.

अफसर : हैडक्लर्क साहब को भेजो.

चपड़ासी : राइट सर.

युवक : सर

अफसर : क्या है?

युवक : सर, हमें प्रेमारंभ घोषणा प्रपत्र का छपा हुआ फार्म चाहिए.

अफसर : तो मैं क्या करूं? आप प्रेम सेवक से क्यों नहीं लेते?

युवक : हमारे क्षेत्र के प्रेम सेवक का पद 6 मास से खाली है, सर.

अफसर : तो क्या हुआ? हम उसे भरने का प्रयत्न कर रहे हैं. दो-तीन महीने में कोई न कोई आ जायेगा.

युवक : तभी हम सीधे यहां आ गये, सर.

अफसर : यह आपने ठीक नहीं किया. अगर हम जिला आफिस से फार्म देने लगे तो फिर हम अपना काम कैसे करेंगे? सारा दिन फार्म नहीं बांटते रहेंगे.

युवक : वह तो ठीक है, सर, मगर इन हालात में...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युवती : कुछ कर दीजिए सर. ... स्पेशल केस.

हेडक्लर्क : आपने बुलाया, सर?

अफसर : हां. वह विधानसभा प्रश्न हो गया?

हेडक्लर्क : कौन सा सर?

अफसर : वही भूतपूर्व सैनिकों के आरक्षणवाला.

हेडक्लर्क : सर, मैं वह फाइल लाया हूं. प्रश्न यह है. क्या माननीय प्रेम मंत्री बताने का कष्ट करेंगे कि पिछले 5 वर्षों में कितने भूतपूर्व सैनिकों ने प्रेमारंभ घोषणा प्रपत्र भरे, कितनों को प्रेम करने की अनुमति मिली, कितनों को नहीं मिली. क्या सरकार कुल स्वीकृतियों में भूतपूर्व सैनिकों के लिए कोटा आरक्षित करने का विचार रखती है?

युवक : सर, मेरे पिताजी भूतपूर्व सैनिक हैं.

हेडक्लर्क : आपकी बात नहीं हो रही.

अफसर : इनको एक फार्म चाहिए.

हेडक्लर्क : फार्म तो सर, आउट ऑफ स्टॉक हैं.

अफसर : देखिए, फार्म आउट ऑफ स्टॉक हैं. आप कुछ दिन बाद ट्राई कर लीजिए.

युवक : कब तक आने की उम्मीद है सर?

अफसर : क्यों, हेडक्लर्क साहब?

हेडक्लर्क : सर, मैं क्या कह सकता हूं? प्रिंटिंग एंड स्टेशनरी डिपार्टमैंट को हमने अपना इनडेंट भेज रखा है. आ ही जायेंगे, कुछ दिनों में.

अफसर : सुन लिया आपने? कुछ दिन बाद आइये.

युवक : मगर ,सर...

अफसर : मगर क्या? आप देखते नहीं कि मैं कितना बिजी हूं. भूतपूर्व सैनिकों के प्रेम का विधान सभा प्रश्न आपने सुन लिया. इसके इलावा पंद्रह और प्रश्न हैं. विधान सभा के सदस्य जानना चाहते हैं कि पिछले पांच वर्षों में कितना प्रेम हुआ. प्रत्येक प्रेमसेवक के क्षेत्र का ब्यौरा मांगते हैं.

हेडक्लर्क : विधानसभा क्षेत्रों की जानकारी भी मांगी है, सर. श्री क्रोधी जानना चाहते हैं कि रूलिंग पार्टी के हल्कों में प्रेम किस प्रतिशत से बढ़ा है और उनके हल्के में विरोधी पक्ष के एम.एल.ए. होने के नाते भेदभाव क्यों किया जा रहा है.

अफसर : कई सदस्य यह पूछ रहे हैं कि गरीबी की रेखा से नीचे कितने परिवारों के बीच प्रेम को बढ़ावा देने के लिए सरकार क्या पग उठा रही है.

युवती : मैं एक हरिजन परिवार से हूं.

हेडक्लर्क : आपकी बात थोड़ी हो रही है? ... नहीं ...

अफसर : माईनोरिटीज कमीशन की एक चालीस पन्ने की प्रश्नसूची मिली है. उनको जिज्ञासा है कि मुसलमानों, सिखों, बौद्धों, जैनियों आदि में प्रेम की क्या व्यवस्था है.

युवक : लेकिन हमारा क्या होगा?

अफसर : लेकिन हमारा क्या होगा?

युवती : लेकिन वह तो अभी है ही नहीं.

हेडक्लर्क : इस पर हमारा नियंत्रण नहीं है. जब आ जायेगा, आपको दे देंगे.

युवक : तब तक हम क्या करें?

अफसर : घर जाकर अपना काम कीजिए.

युवती : क्या यह नहीं हो सकता है कि हम सादा कागज पर आवेदन दे दें?

हेडक्लर्क : सर, आपने सुना?

अफसर : माई गुडनेस, यह आप कैसी बात कर रही हैं. आवेदन छपे फार्म पर होना चाहिए यह तो अधिनियम का प्रावधान है.

हेडक्लर्क : राम, राम, राम. आप हमें सस्पेंड कराना चाहती हैं?

अफसर : आप को नहीं पता कि प्रत्येक छपे हुए फार्म पर अलग-अलग नंबर होता है? यदि ऐसा न हो तो फार्म गुम हो सकते हैं. फार्म को कोई अनधिकृत व्यक्ति बेच सकता है.

युवक : सर, यह तो ठीक है. मगर जब हम दोनों यहां मौजूद है तो फार्म की क्या जरूरत है?

हेडक्लर्क : क्यों जरूरत क्यों नहीं?

अफसर : रिकार्ड कैसे रहेगा?

हेडक्लर्क : प्रश्नों के उत्तर देंगे?

अफसर : आंकड़े कैसे जमा करेंगे?

हेडक्लर्क : सरकार के खजाने में जो फीस जमा होनी है, उसका हिसाब कैसे पूरा होगा?

युवक : मगर, जनाब, मैं आपके सामने खड़ा हू. मैं सौ रुपये फीस लाया हूं. यह वह लड़की है जिससे मैं प्रेम करता हूं. आप हमें इजाजत दे सकते हैं. अगर कुछ पूछना है तो इससे पूछ सकते हैं.

अफसर : आप नासमझ हैं. सरकार का काम ऐसे नहीं चलता.

हेडक्लर्क : आपने प्रेम करना है तो अलग छपे हुए फार्म पर आवेदन देंगे. सौ रुपये हम नहीं ले सकते. वे सरकारी खजाने में जमा होंगे.

अफसर : मैं इन मोहतरमा से सीधी बात नहीं कर सकता. आपके फार्म की एक कॉपी इनके पते पर जायेगी. इनकी लिखित स्वीकृति आयेगी. फिर हम आयु तालिका, आय तालिका और नियमों के प्रावधान ...देखकर फैसला करेंगें.

युवती : आप मुझसे यहीं लिखित स्वीकृति ले लीजिए.

अफसर : लेकिन मुझे कैसे मालूम है कि आप आप ही हैं.

युवती : क्या मतलब?

अफसर : मैं तो आपको नहीं जानता.

युवती : मगर मैं इनसे प्रेम करती हूं.

हेडक्लर्क : प्रेम करती है? यह क्या बात हुई?

अफसर : आपका मतलब शायद यह है कि प्रेम करना चाहती हैं.

युवती : जी नहीं, करती हूं.

युवक : मैं भी इससे प्रेम करता हूं.

हेडक्लर्क : सर, यह अपने जुर्म का इकबाल कर रहे हैं.

अफसर : आपको पता नहीं कि सक्षम अधिकारी की इजाजत के बगैर प्रेम करना कानूनी अपराध है?

युवक : सर, मैं तो सच्चाई बयान कर रहा हूं.

हेडक्लर्क : यह बार-बार वही बात दोहरा रहे हैं. यह तो कानून की ऐलानिया खिलाफवर्जी कर रहे हैं.

अफसर : अब बात बर्दाश्त से बाहर हो गयी है. जरनैल सिंह!

जरनैल सिंह : यस, सर.

अफसर : इधर आओ.

जरनैल सिंह : सर?

अफसर : इन दोनों को दफा 15(3) में गिरफ्तार कर लो.

जरनैल सिंह : जी, बहुत बेहतर.

युवक : सर, हमें गिरफ्तार न करें. हम प्रेम नहीं करेंगे.

युवती : सर, हमसे बड़ी गलती हुई. फिर कभी न होगी.

अफसर : ले जाओ इन्हें.

युवक : सर, हमें पता नहीं था कि प्रेम करना गुनाह है.

युवती : सर, हमें छोड़ दीजिए. हम आपस में शादी कर लेंगे, प्रेम कभी नहीं करेंगे.

अफसर : मैं अपना फैसला नहीं बदल सकता. आप चाहते हैं तो अपील कर लीजिए.

युवक : (दूर होती आवाज) सर, हमें छोड़ दीजिए.

युवती : (दूर होती आवाज) सर, हम कान पकड़ते हैं.

जरनैल सिंह : (दूर होती आवाज) चलिए, चलिए. यहां शोर न मचाइए. साहब बिजी हैं. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिंकन की प्रेमानुभूति

जब लिंकन से उसकी पहली भेंट हुई तो सबसे पहले उसकी सादगी ने उसे छुआ... वह अनजाने में लिंकन के प्रति आकर्षित और समर्पित हो गयी थी. क्यों? यह सोलह वर्ष की उस किशोरी को स्वयं ज्ञात नहीं था...

एक नवयौवना के रूप में स्प्रिंगफील्ड (अमरीका) की मेरी को इस बात का पूरा एहसास था कि वह अत्यंत रूपवती और मोहक है.

अनेक परिचित तथा अपरिचित नवयुवक उस पर फिदा थे, जान देते थे. उसकी सुंदरता तथा बुद्धिमत्ता से प्रभावित होकर अनेक प्रतिष्ठित अमरीकी परिवारों के लोग उसे अपने घर में पुत्रवधु के रूप में लाने को लालायित थे. इनमें से अनेक नवयुवकों के प्रति वह भी आकर्षित हुई थी, लेकिन यह आकर्षण अस्थायी था. क्षणिक प्रेम से अधिक नहीं था. कारण जब कभी प्रेम की बात उठती, उसका अवचेतन मन उसे सावधान कर देता कि उसके जीवन में कुछ समय बाद एक ऐसा प्रेम आयेगा, जिसकी शीतल छांह में जाकर वह जीवन के सब सुख-दुख भूल जाया करेगी. मगर उसके चेतन मन को कतई पता न था कि उसके जीवन में ऐसा प्रेम लेकर कौन आयेगा, उसका हुलिया कैसा होगा, वह किस बहाने उसके जीवन में आयेगा, कब आयेगा, आदि आदि. कुछ स्पष्ट नहीं था, लेकिन इस अस्पष्टता के बावजूद, यह प्रत्याशा बड़ी सुस्पष्ट थी कि उसके मन में बंद दरवाजे पर कोई न कोई अपरिचित दस्तक अवश्य देगा और एक बार दस्तक देने के बाद हमेशा हमेशा के लिये उसका अपना और परिचितों से ज्यादा परिचित बन जायेगा.

सोलह वर्ष की मेरी को जब से यह एहसास हुआ था, वह उत्सुक्तापूर्वक और बड़ी आतुरता के साथ उसकी प्रतीक्षा करती रहती थी.

और जब उसका आगमन हुआ तो वह स्तब्ध रह गयी. अरे, ऐसे जीवन-साथी की कल्पना तो नहीं की थी, उसने!

उसका एक चचेरा भाई था—जॉन स्टुअर्ट. हंसमुख. मिलनसार. हमदर्द. और पेशे से वकील. वकालत उसने कुछ समय पूर्व ही शुरू की थी.

एक शाम वह मेरी के घर आया तो उससे बोला, "वह तुम्हारी सहेली के परिवार का मुकद्दमा था न, जो तुमने मुझे दिलवाया था....."

"हां, हां, क्या हुआ उसका?"

"अभी तो वह शुरू भी नहीं हुआ. तुम्हें यह सूचित करने के लिये आया था कि मेरी गैरहाजिरी में उसे मेरा दोस्त देखेगा."

"मगर तुम कहां जा रहे हो?"

"मैं वाशिंगटन जा रहा हूं, कांग्रेस के अधिवेशन में भाग लेने के लिये."

"तुम्हारा यह दोस्त.... कौन है? क्या मैंने उसे देखा है?"

"देखोगी कहां से, जब वह अपने को दिखाना ही नहीं चाहता. और सुंदर लड़कियों से तो वह खास तौर पर दूर रहता है. मगर है बड़ा जहीन और भरोसेमंद आदमी. मैंने उसे अपना सहायक वकील बनाया है, मगर मुझे उम्मीद है, वह मुझे जल्दी ही पीछे छोड़ देगा. लेकिन ईमानदार. इसी ईमानदारी की वजह से लोगों ने उसे इतनी कम उम्र में विधायक बनाया. अब वह...."

जॉन के जाने के बाद भी उसके ये शब्द मेरी के कानों में गूंज रहे थे— "हम सब धनी और साधन-संपन्न लोग जिस पुख्ता जमीन पर खड़े हैं, उससे मीलों नीचे

स्थित एक खड्ड से अपनी जिंदगी शुरू करके कर्मठ और ईमानदार लिंकन, अपने श्रम के बल पर हमारे बीच खड़ा हो सका है. मगर, वह एकाकी और उदास बन गया है, क्योंकि वह अपने को अनाकर्षक और कुरूप समझता है, और मानता है कि उसे कभी किसी लड़की का प्यार नसीब नहीं होगा. लड़कियों से दूर भागने का उसका शायद यही कारण है. बड़ी मुश्किल से यहां आने को राजी हुआ है."

इन शब्दों की वजह से, वह अनजाने में लिंकन के प्रति आकर्षित और समर्पित हो गयी थी. क्यों? यह सोलह वर्ष की उस किशोरी को स्वयं ज्ञात नहीं था.

जब लिंकन से उसकी पहली भेंट हुई तो उसकी सादगी ने सबसे पहले सीधे उसके हृदय को छुआ.

दोनों ने साथ-साथ खामोशी में चाय पी और फिर देर तक खामोश ही रहे. इसलिए नहीं कि उनके पास कहने को कुछ न था, बल्कि इसलिए कि अब दोनों के बीच किसी बातचीत की जरूरत ही नहीं रह गयी थी. शब्द इसीलिए अर्थहीन हो गये थे.

विदा लेते समय मेरी ने मुस्कराते हुए अपना दायां हाथ आगे बढ़ाते हुए कहा, "मुझे आप अच्छे लगे. उम्मीद है, मैं भी आपको बुरी नहीं लगी हूंगी. क्या आपको मेरी दोस्ती कबूल है?"

"आप पहली लड़की हैं, जिसने मुझमें इतनी दिलचस्पी दिखायी है."

मेरी अवाक् रह गयी. लिंकन क्या यह सचमुच कह रहे हैं, या वह महज़ कल्पना कर रही है कि उन्होंने अभी-अभी ऐसा कहा है!

क्षण भर के लिए लिंकन की आंखों में आंखें डालते हुए मेरी ने कहा, "मुझे तो यह अनुभूति हो रही है कि... सब अनुभूतियां होनी बंद हो गयी हैं! क्या... क्या... इसी को प्रेमानुभूति का नाम देते हैं कविगण?"

लिंकन के जाने के बाद अपनी सबसे प्यारी और घनिष्ठ सखी एलिजबेथ से मेरी ने कहा, " पता नहीं मुझे क्या हो गया है? सब लोग, सारा परिवेश नया-नया-सा... खिला-खिला-सा लगता है! सब मुझे प्यारे लगने लगे हैं और मैं सबकी प्यारी हो गयी हूं."

"तू किसी से प्रेम करने लगी है, शायद!" एलिजबेथ ने हंसते हुए कहा. □

प्रस्तुति : आदित्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेमावेश

"तो तू स्कूल नहीं जायेगी!" सिनेटर टॉप वेंटन ने अपनी चौदह साल की पुत्री जैसी से पूछा.

"नहीं जाऊंगी, कभी नहीं जाऊंगी, ऐसे स्कूल में जहां की अध्यापिकाएं औरतें नहीं, जल्लाद हैं."

"ठीक है. मैं भी देखता हूं कि तू कब तक अपनी ज़िद पर अड़ी रहती है." कहकर गुस्से में भुनभुनाते हुए सिनेटर बाहर चले गये. एकमात्र पुत्री पर इससे ज्यादा क्रोध वे नहीं कर सकते थे. उधर उनके जाते ही ज़िद्दी और गुस्सैल जैसी ने कैंची से अपने लंबे बालों को काटकर बहुत छोटा कर लिया और फिर अपने पिता की लाइब्रेरी में आकर बैठ गयी. गुस्से में वह अपने पिता से जरा भी कम न थी.

मगर, यह क्या? लाइब्रेरी में, जहां किसी को नहीं होना चाहिए था, एक तरुण, सेना की वर्दी में, उसके पिता की प्रतीक्षा कर रहा था. मिनटों में ही बातूनी जैसी ने इस शर्मीले तरुण फ्रीमोंत के बारे में सब कुछ जान लिया.

तभी उसके पिता आ गये, और उन्हें देखते ही वह अंदर चली गयी. वह तरुण भी उनसे पांच-सात मिनट बात करके चला गया, मगर जैसी पर न जाने क्या जादू कर गया कि उसके जाते ही वह अपने को काफी बदला महसूस करने लगी.

संयोग ऐसा हुआ कि उसी लाइब्रेरी में दो वर्ष बाद, जब जैसी की आयु सोलह वर्ष थी, उसकी भेंट फ्रीमोंत से तब हुई, जब वह पहले की भांति ही उसके पिता की प्रतीक्षा कर रहा था. इस बार दोनों में बातचीत जरा खुलकर हुई.

"थोड़ा आशिकाना मिजाज है मेरा. जिस कागज पर मुझे नक्शे बनाने चाहिये थे, उस पर मैं एक सुंदर लड़की का चित्र बना रहा था कि शिक्षक ने देख लिया. बस, आउट."

"कौन थी वह लड़की?"

"उसका नाम सेसिला था. हम दोनों एक दूसरे से प्यार करने लगे थे. जब मैं अठारह का था और वह सोलह की. मैं उसकी सुंदर आंखों के अलावा उसकी मोहक हंसी पर फिदा थी. लगे हाथ यह बता दूं कि सेसिला की वजह से ही मैं स्कूल से निकाला गया था."

"उसकी वजह से? जरा विस्तार से बताइये," जैसी का मन ईर्ष्या से उबल रहा था और वह बड़ी मुश्किल से नियंत्रण रखे हुए थी.

"असल में हम दोनों का स्वभाव एक सा था. हम दोनों को पढ़ाई से नहीं नहीं के बराबर और आवारागर्दी करने और गप्पें लड़ाने का बेहद शौक था. चूंकि हम दोनों को समय से घर लौटने की बंदिश थी, इसलिए यह काम हम पढ़ाई के वक्त में ही कर सकते थे, और करते थे. हमारी शिकायत हुई. बतौर सज़ा, मुझे वह स्कूल भी छोड़ना पड़ा और वह शहर भी. सेसिला के पिता नगर के प्रभावशाली व्यक्तियों में से थे. उसे न स्कूल से निकाला गया, न उस शहर से."

"जो प्रेम करे, उसे सज़ा भुगतने को भी तैयार रहना चाहिये. अच्छा, यह बताइये, आपको यह पश्चाताप नहीं होता कि आपने एक मामूली लड़की की ख़ातिर..."

"सेसिला मामूली लड़की नहीं थी..खैर, आगे कहिये."

"... एक मामूली लड़की की ख़ातिर, जो आपकी निगाहों में गैर मामूली थी, इतनी बदनामी मोल ली."

एक क्षण, जैसी को गौर से देखने के बाद, फ्रीमोंत ने कहा, "देखिये, प्रेम के प्रति मेरा दृष्टिकोण आम लोगों से अलग है. मेरा मानना है कि प्रेम की ख़ातिर जितनी जोखिम उठायी जायेगी, उतना ही वह रोमांचक... दुखद... और दृढ़ बनेगा. मेरा एक दोस्त है — हैरियट विलियम्स. वह भी ऐसे ही खयालों का है. आप उसकी प्रेम-कहानी सुनना चाहेंगी?"

"अवश्य! मुझे सब प्रेम-कहानियों में दिलचस्पी है."

"हां तो, मेरा यह दोस्त हैरियट विलियम्स एक रूसी लड़की से

विश्वविख्यात अमरीकी उपन्यासकार इरविंग स्टोन ने अपने उपन्यास 'इममॉरटल वाइफ' की रचना, जिस सत्यकथा को आधार बनाकर की है, वह दर्शाती है कि पति-पत्नी का प्रेम अमर होने के साथ-साथ आवेशपूर्ण और संवेगशील भी हो सकता है.

प्यार करने लगा. लड़की भी उसे प्यार करती थी. दोनों कम-उम्र थे. मेरा दोस्त उन्नीस का और वह रूसी लड़की सत्रह साल की. दोनों को बहुत समझाया-धमकाया गया. समाज से बहिष्कृत कर देने की बात उठायी गयी. जान से मारने की कोशिश की गयी. दोनों के परिवार वालों ने जो करना था, कहना था, सब किया, कुछ छोड़ा नहीं. मगर, वे दोनों अपनी ज़िद पर अड़े रहे और शादी करके ही माने. शादी में सिर्फ मैं ही शरीक हुआ था, दोनों पक्षों की ओर से. कारण, अकेला मैं ही उन दोनों का प्रशंसक था, और आज तक हूं. आज भी मैं उनकी हिम्मत और प्रेम के प्रति वफ़ादारी का क़ायल हूं."

"जैसी का मन सहसा किसी अज्ञात रोमांच से पुलकित हो गया.

"कुछ देर, उधर की बातें करने के बाद, जैसी ने फ्रीमोंत से पूछा, "तुमने अभी तक शादी क्यों नहीं की?"

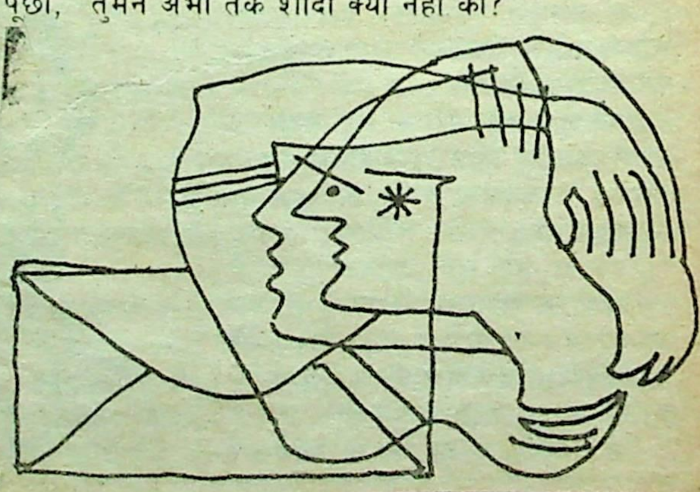

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मेरी शादी शायद कभी नहीं होगी."

"क्यों?" जैसी ने हैरत से पूछा.

"इसलिए नहीं होगी कि मैं अपनी पत्नी के रूप में ऐसी लड़की को चाहता हूं, जो पूरी तरह से मेरे लिये ही जिये, और जिसके लिये मैं पूरी तरह से जिऊं. दोनों हों-एक दूसरे के प्रति पूरी तरह समर्पित. मेरे लेखे यही प्रेम है. वैसे, शादी बिना प्रेम के भी हो सकती है, और होती है, मगर मैं, कम से कम अपने लिये, बिना प्रेम की कल्पना भी नहीं कर सकता. अब ऐसी दीवानी लड़की मुझे शायद ही मिले. और इसीलिए मैं कहता हूं कि मेरी शादी शायद कभी नहीं होगी. और मैं जीवन भर अविवाहित ही रह जाऊंगा.

आपका विवाह तो निश्चय ही किसी धनी और नामी युवक से ही होगा. मैं आपके सुखी भविष्य की कामना करता हूं."

जैसी कुछ क्षणों तक चुप रही. फिर, नपे-तुले शब्दों में दृढ़ निश्चय के साथ बोली, "मैंने यह तय कर लिया है कि मैं किसी ऐसे युवक से विवाह करूंगी, जिसे मैं संपूर्ण तन-मन से प्यार कर सकूं. एक ऐसा युवक, जिसने अपनी महत्वाकांक्षा को पूरी करने के लिये जी तोड़ संघर्ष किया हो और जो मुझे पूरा आदर, प्रेम और विश्वास देकर, एक वफादार जीवन—साथी सिद्ध हो सके."

फ्रीमोंत ने कोई उत्तर नहीं दिया.

फ्रीमोंत के जाने के बाद, जैसी को अपने ऊपर बड़ा गुस्सा आया. कौन है यह फ्रीमोंत, जिसने इतनी जल्दी और अचूक ढंग से मुझे अपने वश में कर लिया है? क्यों उसका ध्यान आते ही मैं अंदर से इतना कमजोर हो जाती हूं? क्यों? क्यों? क्यों?

आने वाले दिनों में फ्रीमोंत का सिनेटर के घर में आना जाना बहुत बढ़ गया, मगर उसकी वजह जैसी न थी, उसके पिता थे, जिन्हें अमरीकी-सरकार ने खोज यात्राओं में उनकी गहरी रुचि होने के कारण सेना द्वारा की जाने वाली खोज-यात्राओं और उसके स्थलाकृति विभाग, जिससे फ्रीमोंत जुड़ा था, के काम पर निगरानी रखने के लिये नियुक्त किया था.

फ्रीमोंत को ज्यादा देखने पर जैसी ने पाया कि उसके और फ्रीमोंत के स्वभाव में अनेक समानताएं हैं. दोनों स्वाभिमानी और नफासत-पसंद हैं. दोनों ही कठिनाइयों से जूझने के लिए सदा तत्पर रहते हैं और अपने प्रिय के प्रति पूर्णतया समर्पणशील हैं.

एक दिन, एकांत में जैसी ने फ्रीमोंत को चिढ़ाते हुए कहा, "सुना है, लड़कियों को पटाने के मामले में आप काफी उस्ताद हैं! क्या यह सही है?"

सकुचाते हुए फ्रीमोंत ने कहा, "देखिये, मिस जैसी! यह सच है कि हसीन लड़कियों तथा नाच-गाने से मुझे बेहद लगाव है. लेकिन मेरा अधिकांश समय बीहड़ स्थलों में जोखिमों और मुश्किलों का सामना करते हुए उनके नक्शे बनाने में बीतता है."

जैसी उसकी दिलेरी और ईमानदार आत्म-स्वीकृति से बहुत प्रभावित हुई. उसे फ्रीमोंत की बातें कविता जैसी लग रही थीं. उसने फ्रीमोंत का हाथ अपने हाथ में ले लिया और पूर्णिमा की चांदनी में नहाये उद्यान में आकर उससे पूछा, "सिसिला की याद आती है, कभी कभी?"

"नहीं. उसने भी कभी मुझे याद नहीं किया. मगर, आप उसके बारे में अचानक मुझसे क्यों पूछ रही हैं?"

"इसलिए कि मैं एक भोली और अनजान लड़की हूं. जो प्रेम के बारे में कुछ नहीं जानती, मगर जानना चाहती हूं."

"आप ग़लत आदमी के पास आ गयी हैं."

जैसी उसके और करीब आकर चलने लगी.

... तभी, उसे अपने पिता की कड़कती आवाज सुनायी दी, "जैसी, अंदर आओ!" उसके पिता अपने एक मित्र के साथ कुछ दूरी पर ही खड़े थे और उनका मुंह गुस्से से लाल हो गया था. उन्होंने फ्रीमोंत से कहा, "रात काफी हो गयी है. अब तुम घर जाओ."

"क्या तुम शर्म और लिहाज दोनों को घोल कर पी गयी हो?" जिस आवेश में उसके पिता बोल रहे थे, वह जैसी के लिये एक नया अनुभव था. उनके रक्तिम, भीषण आक्रोश ने सौम्य चांदनी रात को आतंकमयी बना दिया था.

"मैंने क्या बेशर्मी की है, डैडी?"

"फ्रीमोंत जैसे मामूली लड़के के साथ खुल्लमखुल्ला प्रेम करने की बेशर्मी."

"हां, यह बेशर्मी मैंने अवश्य की है, डैडी, मगर मुझे इसका पश्चाताप नहीं है. मैं उससे विवाह करूंगी."

"फ्रीमोंत आगे से इस घर में कदम भी नहीं रख पायेगा."

"मेरे अपराध की सजा आप इस बेचारे को क्यों दे रहे हैं, डैडी?"

"इसलिए कि उसने चाल चलकर तुम जैसी नादान लड़की को प्रेम-जाल में फांसा है."

"मुझे नादान कहकर आप अपना ही अपमान कर रहे हैं, कारण मुझे आप ही ने प्रशिक्षित किया है."

"इस शादी से कोई लाभ होगा तो वह फ्रीमोंत को ही होगा. तुम्हारे लिये यह सौदा घाटे का सौदा साबित होगा."

"मगर आप ही तो उसे वाशिंगटन का सबसे काबिल युवक मानते थे."

"वह काबिल है. मगर धूर्त है. उसकी निगाह तुम पर नहीं. मेरी दौलत पर है."

"तो आपका खयाल है, डैडी, कि आपकी लड़की इतनी अनाकर्षक और मूर्ख है कि फ्रीमोंत को उससे प्रेम करने के लिए आपकी दौलत और शोहरत का सहारा चाहिये." आग्नेय नेत्रों से जैसी ने कहा. पुत्री का यह उलाहना सुनकर, सिनेटर शांत हो गये, और दबे स्वर में बोले, "माफ करना, डियर! मेरा इरादा तुम्हारी सुंदरता व योग्यता का अनादर करना नहीं था. तुम बुद्धिमती अवश्य हो, लेकिन दुनिया के तौर-तरीकों का तुम्हें कोई अनुभव नहीं है."

"डैडी, मैं इतनी समझदार तो हूं ही कि जान सकूं कि क्या कर रही हूं."

"फ्रीमोंत ने तुमसे विवाह करने के बारे में कहा था?"

"उसने अपनी ओर से इस बारे में एक शब्द भी नहीं कहा. उल्टे उसने मेरे मुंह से इस प्रस्ताव के बारे में सुनकर उसका विरोध किया था. मुझे समझाया था कि उसकी और मेरी हैसियत से बहुत फर्क है. प्रेम के बारे में भी उसने मुंह से कुछ नहीं कहा. जो कुछ कहा, दिल की गहराइयों से कहा. मगर, शायद वह साक्ष्य आप जैसे कानूनदां लोगों को स्वीकार्य न हो."

"दोनों काफी देर तक अनन्य और जिद्दी नेत्रों से एक दूसरे को देखते रहे. अंत में, बाप को ही झुकना पड़ा. उन्होंने, कहा, "यदि एक साल बाद भी तुम दोनों एक दूसरे को इसी तरह चाहते रहे तो मैं सहर्ष विवाह की अनुमति दे दूंगा. और फ्रीमोंत एक साल तक सेंट लुई रहेगा. मैं उसका तबादला एक साल के लिये वहां करा दूंगा." □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जन्म : 25 दिसंबर, 1956
आठवें दशक के चर्चित कथा हस्ताक्षर.
संप्रति : मुख्य उपसंपादक ''चौथी दुनिया.''

धीरेंद्र अस्थाना

गुफाएं

चीजें या तो अपना अर्थ खो बैठी थीं या अपने मूल में ही निरर्थक हो गयी थीं. जीप में, ड्राइवर की बगलवाली सीट पर बैठा वह, अपने जीवन में पसर गयी जड़ता की टोह लेने के प्रयत्न में थका जा रहा था और ग्रहणशीलता से लगभग खाली हो चुकी उसकी आंखों के सामने से झरने, पहाड़, वादियां, सीढ़ियों वाले खेत और नेपाली युवतियों के झुंड इस तरह गुजर रहे थे मानो बायस्कोप के जमाने के मुर्दा दृश्यों की ऊब थिर हो गयी हो. जीप नेपाल के एक ऐसे पहाड़ी कस्बे की तरफ बढ़ रही थी, जिसके बारे में उसके दोस्त शिव ने कहा था, 'दिल्ली के जिस नरक में तुम जल रहे हो, उसमें तानसेन तुम्हारे लिए फुहार और ताजगी का काम करेगा.'

फुहार! वह हंसा, तभी ड्राइवर ने जीप को एक झरने के पास रोक दिया, 'साहब! यहां का पानी बड़ा गजब है. फ्रेश हो लें.'

फ्रेश? वह बड़ी जोर से चौंका. यही तो कहा था उसने अपनी पत्नी से, 'बरसों-बरस तक जैसी जिंदगी जीते-जीते मेरे भीतर जीवन का सोता शायद सूख गया है. मैं अब फ्रेश होना चाहता हूं. अगर पंद्रह-बीस रोज के लिए अकेला ही निकल जाऊं?'

यात्रा पर अकेला वह कभी नहीं जाता था फिर भी, पत्नी ने बिना देर लगाये अनुमति दे दी थी. पिछले लंबे समय से वह खुद यह महसूस कर रही थी कि अविनाश सारे काम कुछ इस तरह कर रहा है मानो कोई प्रेत किसी तांत्रिक के इशारे पर बोल-डोल रहा हो. इस प्रेत से लड़तेलड़ते वह खुद प्रेत हुई जा रही थी दफ्तर से लेकर दोस्तों के बीच हुई कहासुनी तक को शब्दशः बयान कर देनेवाला अविनाश अब एक शिला में बदल गया था. उसकी खामोशी और खिंचे-खिंचे रहने के भाव के कारण जो ऊब और मनहूसियत उन दोनों के बीच पसर गयी थी, उसका असर बच्चों की कोमल आत्माओं पर किसी बिजूखे की तरह उतरने लगा था— बच्चों को बाप से न सिर्फ अलगाता हुआ बल्कि उन्हें बाप की उपस्थिति से आतंकित, उदास और निर्लिप्त करता हुआ. अब अविनाश के, रात को घर लौटने के वक्त का भी इंतजार नहीं करते थे बच्चे. अविनाश भी घर लौट कर बच्चों के बारे में कुछ नहीं पूछता था. बच्चे ही क्यों, वह अब किसी भी चीज के बारे में

''एक ठंडा मगर सख्त आतंक सहसा उसके कलेजे पर असर पर पसर गया...अपने भीतर के अंधकार में बोराये हुए आदमी की तरह हाथ-पांव मारता हुआ. सिरे से ही पराजित लेकिन फिर भी जीवित...'' आखिर वह कौन-सा ताकत है जो इस शख्स को जिलाये जा रही है ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ नहीं पूछता था. हद तो यह थी कि चिट्ठियों के बारे में एक पागल उत्सुकता से भरा रहनेवाला अविनाश अब अपने नाम आये खतों को यूं देखता था मानो वे खत न होकर अखबार के भीतर से निकले किसी कपड़ों, इलेक्ट्रोनिक्स या जूतों की नयी दुकान के इश्तहार हों. कई बार तो वह अपने नाम आयी चिट्ठियों को कई-कई दिन तक बंद ही पड़ा रहने देता था. वह समझ नहीं पा रही थी कि अविनाश के जीवन में कहां, क्यां गलत हो गया है कि तभी अविनाश ने बाहर जाने का प्रस्ताव रखा.

'कहां जाओगे?' उसने पूछा था.

'नेपाल.' अविनाश ने उत्साहित होकर नहीं, एक टूटती हुई उदासी के बीच आंखें झपकाते हुए कहा था, 'बस्ती में शिव है. वह एक जीप और ड्राइवर का इंतजाम करवा देगा.'

शिव ने पूछा था, 'मैं भी साथ चलूं?'

'नहीं.' उसने साफ मना कर दिया था, 'अगर मुझे ड्राइविंग आती, तो ड्राइवर को भी साथ न ले जाता.'

'क्या हो गया है तुम्हें?' शिव सशंकित हो गया था. वह अविनाश की आदतों से परिचित था. वह जानता था कि अविनाश जिस समय टूट रहा होता है, निपट अकेला होता है. बुरा वक्त गुजर जाने के बाद ही दोस्तों को पता चलता था कि अविनाश किसी हादसे की गिरफ्त से छूट कर लौटा है. अपनी यातनाओं में किसी को हिस्सेदार बनाने का अहसास तक अप्रिय था उसे.

'मेरे लिए यह जीवन बेमानी हो गया है. सुना तुमने!' अविनाश हांफते हुए बोला था, 'जीवन रहे या न रहे, मैं दोनों अहसासों से खाली हो गया हूं... और इतना अधिक खालीपन मुझसे झिल नहीं रहा है. मुझे अकेले ही जाने दो, सिर्फ अपने साथ. मैं देखना चाहता हूं कि सिर्फ अपने ही साथ रहा जा सकता है या नहीं.'

'मगर वहां तुम अकेले होगे. उनके तौर-तरीकों से एकदम अपरिचित. अजनबियों के बीच यूं अकेले जाना..'

इस वाक्य पर अविनाश ने यूं देखा कि शिव को अपना आपा एकदम बेगाना-सा लगने लगा. बेगाना और अर्थहीन. इसके बाद वह कुछ नहीं बोला.

एक ठंडा मगर सख्त आतंक सहसा उसके कलेजे पर पसर गया. पहले तानसेन और फिर पोखरा, और इन दोनों के बीच का सफर, जिसे फुहार बताया था शिव ने, और जिन दो कस्बों के प्राकृतिक वैभव पर अभिमान था नेपाल को– कुछ भी तो नहीं छुपाया था उसे.

जीप के भीतर घुस आये बादल, झील, शराब की बेशुमार दुकानें, यौवन से लदी-फंदी नेपाली युवतियां, झरने, पहाड़, पेड़, सारे संसार से आये विदेशी पर्यटक, खूबसूरत सेल्स गर्ल्स, सुहाना एकांत, अकेली पगडंडियां, लकदक बाजार, कोहरा, रिमझिम बरसात, उद्दाम, छलरहित और उन्मुक्त जीवन चट्टानें, हनीमून मनाने आये जोड़ों का उत्साह, संगीत– कितना कुछ था नेपाल की धरती पर. कितना समृद्ध, कितना अप्रतिम और कितना स्वप्निल.

लेकिन इन सबके बीच वह कहीं नहीं था. इन सबके बीच से, एक अदृश्य और अतृप्त आत्मा की तरह गुजरता हुआ वह फिर तानसेन के होटल सिद्धार्थ के उसी कमरा नंबर तेरह में था, जहां वह आते हुए रुका था– ठीक उसी स्थिति में– टूटा, थका, बेचैन, उदास, जड़ और प्रतिक्रियाहीन. अपने भीतर के अंधकार में, बौराये हुए आदमी की तरह, हाथ-पांव मारता हुआ. सिरे से ही पराजित लेकिन फिर भी जीवित.

क्यों? उसने सोचा और ड्रेसिंग टेबल के सामने आ गया. उसने देखा, वह हांफ रहा था. उसने चाहा कि हाथ में पकड़े शराब के गिलास को आइने पर फोड़ दे. क्यों जीवित है वह? जीवित है भी या सिर्फ जीवित होने के भ्रम को जी रहा है? अपने भीतर यह किस अंधेरी गुफा में उतर गया है वह, जहां कोई छाया, कोई रोशनी, कोई आहट नहीं पहुंच पा रही है. वह कौन-सा शापग्रस्त क्षण था, जब उसके बीचों-बीच धरा गया था वह.

ऐसे ही एक जर्जर, विरक्त और बीहड़ क्षण में, जब दुनिया उसे निराश करने लगी थी, वह अपने भीतर उतर गया था, दबे पांव. उत्सुकता में डूबा हुआ दूर तक निकल गया. लौटने लगा, तो रास्ते खो चुके थे. ठीक उसी तरह, जैसे पोखरा की महेंद्र गुफा में खो गये थे. उस ऊबड़-खाबड़, पथरीली, नुकीली चट्टानों से भरी गुफा में वह तब तक चलता रहा था, जब तक एक ठोस अंधकार ने उसका रास्ता नहीं रोक लिया. वापसी में वह भटक गया और बाहर निकलने के उस रास्ते की तरफ मुड़ गया, जिसके बारे में उसे बताया गया था कि इस रास्ते से सिर्फ दुःसाहसी लोग ही बाहर निकलते हैं– अपने साहस और सामर्थ्य की परीक्षा लेने के लिए.

लेकिन वह अपने साहस की थाह लेने उस रास्ते नहीं गया था. वह तो भटक कर वहां पहुंचा था. ऊंची-नीची, गोल, फिसलनभरी, संकरी और ठोस अंधकार में डूबी कई चट्टानों पर पांव टिकाते उन्हें छलांगते हुए अंत में वह पायदान आता था, जिस पर खड़े होकर एक संकरे रास्ते के जरिये, छलांग लगा कर बाहर निकलना होता था. इस संकरे रास्ते से तीन चट्टान पहले जो चट्टान थी, उसमें और दूसरी चट्टानों के बीच एक गहरी खाई थी– अंधेरे में जड़ तक डूबी हुई. और इसी चट्टान पर वह फंस गया था. इस चट्टान से दूसरी चट्टान पर छलांग लगानी थी और वह भी बिना किसी सहारे के. अंधेरे में उसकी हिम्मत जवाब दे गयी. उसने लौटना चाहा लेकिन यह देख कर लगभग चीख ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पड़ा कि जिस चट्टान पर वह था, [illegible] लेकिन वहां से वापस लौटने के लिए फिर एक अंधेरी छलांग की जरूरत थी और गलत छलांग का अंजाम जिस्म का खाई की अतल और नुकीली गहराई में गिर जाना था.

इतनी खामोश, अकेली और मर्मांतक मौत! वह सिहर उठा था और दोनों तरफ से कटी हुई उस चट्टान पर बैठा रह गया था— एक धूमिल-सी प्रतीक्षा में, कि शायद कोई आये.

और करीब पौने घंटे की व्याकुल और दहशतभरी प्रतीक्षा के बाद लड़कियों का एक दल उधर आया था. उसी रास्ते— अपने साहस को तौलता हुआ. उस दल की मुखिया लड़की ने उसे सबसे पहले देखा. पहले घने अंधकार में, किसी प्रेत की तरह बैठे हुए, फिर टॉर्च की रोशनी में, उसकी बेबसी और कातरता को पढ़ते हुए.

'ऐसे आना चाहिए यहां.' मुखिया लड़की की आवाज अंधेरे में गूंजी. वह एकाएक ढेर-सी खुशी से भर उठा. इस हत्यारी गुफा में अकेला नहीं है वह.

वे नेपाली युवतियां थीं. रस्सी और रोशनी की मदद से उन्होंने उसे चट्टान से नीचे उतारा और बाहर निकलने के सीधे रास्ते तक पहुंचा आयीं.

महेंद्र गुफा की हत्यारी खाइयों से मुक्त करा दिया था उसे, नेपाली युवतियों ने. लेकिन अपने भीतर की जिस हत्यारी गुफा में वह, दोनों तरफ से कटी हुई चट्टान पर बैठा है, वहां से कौन आकर ले जायेगा उसे. मुखिया लड़की का वाक्य फिर उसकी चेतना में कौंध उठा— 'ऐसे आना चाहिए यहां.'

महेंद्र गुफा में पैंतालीस मिनट प्रतीक्षा करनी पड़ी थी उसे लेकिन अपने भीतर की गुफा में कैद हुए तो जमाना गुजर गया है. बाहर, कैसा होगा जीवन, उसने सोचा और रुआंसा हो आया.

शराब चढ़ ही नहीं रही थी. तीन लार्ज पैग पी लेने के बाद भी लग रहा था, मानो बीयर का पहला घूंट भरा हो.

हे ईश्वर! मुक्ति दो मुझे. वह बुदबुदाया. अचानक ही वह बहुत दयनीय हो उठा था. अपनी इस दयनीयता को देख उसे सहसा वे क्षण याद हो आये, जब इस धरती पर अपनी उपस्थिति को वह एक गहरी मोहासक्ति के भाव से महसूस किया करता था. दूसरों को आपस में नफरत करते और एक क्रूर प्रतिहिंसा में डूबते-उतराते देख, अपने एकांत में वह उनके ओछेपन पर खुल कर और खिल कर, एक संत की तरह, उपेक्षा भाव से मुस्कराता था. अपने होने को एक दुर्लभ अहसास की तरह संवारा था उसने. उसे मालूम था कि दूसरे ही नहीं, स्वयं उसकी बीवी भी कई दफा उससे कहती थी, 'इतना दंभ अच्छा नहीं है अविनाश, दूसरों को इतना ठंडा तिरस्कार एक दिन तुम्हें बहुत अकेला कर देगा.'

वह सिर्फ हंसता था और लापरवाही से कहता था, 'मैं दंभी नहीं हूं. लेकिन मुझसे जुड़ने के लिए लोगों को मेरे स्तर तक उठ कर सोचना और महसूस करना होगा. अगर लोग मेरी तरह सहनशील और कल्पनाशील नहीं हो सकते, तो मुझे मेरे साथ तो रहने दे सकते हैं कि नहीं. या कि मैं भी नीचे गिर जाऊं.'

तब वह नहीं जानता था कि बाह्य जगत के शोर, हलचल, घटनाओं और लोगों से दूर रहकर वह जो यात्रा अपने साथ कर रहा है, वह उसे एक ऐसी चट्टान पर ले जा कर खड़ा कर देगी जिस पर सिर्फ वही होगा, लोगों की चिंताओं, सरोकारों और दिलचस्पी से कतई खारिज. वह नहीं जानता था कि एक दिन अकेली चट्टान पर बैठे-बैठे, चुपचाप मर जाने की पीड़ा उसके [illegible]ने और चींथने लगेगी, कि चट्टान पर बैठे-बैठे ही मरना होगा उसे.

यही सही. उसने सोचा और एक पैग शराब और पीकर कुर्सी पर पसर गया. तभी उसकी नजर घड़ी पर गयी. अभी सिर्फ शाम के छह बजे थे. कल उसे चले जाना था. वह पंद्रह दिन का कार्यक्रम बना कर आया था और छह दिन के भीतर ही भाग रहा था. यादगार के लिए कुछ खरीदारी कर ली जाये, उसने सोचा और कुर्सी से उठ खड़ा हुआ. मुंह हाथ धोकर और बाल संवार कर वह कमरे से बाहर आया और होटल की सीढ़ियां उतरने लगा. होटल के ठीक सामने पार्किंग स्थल पर, उसकी जीप खड़ी थी. लेकिन ड्राइवर का कहीं पता नहीं था.

पी रहा होगा वह भी. उसने सोचा और बाजार की चढ़ाई चढ़ने लगा. बाजार की सीमा पर स्थित मोतियों की मालाओं और कंगनों की एक छोटी-सी दुकान पर वह ठिठक गया.

वह एक खाली दुकान थी. यानी ग्राहकों से खाली. चेहरे-मोहरे से नेपाली लगते हुए भी, जो लड़की सामान बेच रही थी, उसे लगा, वह नेपाली नहीं है. यानी एक हिंदुस्तानी की दुकान. वह दुकान के करीब आया.

आहट पा कर, जरा भी उत्साहित हुए बिना, लड़की ने उसकी तरफ देखा.

हे भगवान! लड़की की आंखें देख कर वह सिहर उठा. क्या यह भी दोनों तरफ से कटी हुई किसी चट्टान पर बैठी है—एक अनजाने अभिशाप को जीती हुई, किसी बद्दुआ की मुसलसल यातना में जलती हुई.

लड़की अजीब तरीके से सुंदर थी. उसकी आंखें बहुत गहरी थीं लेकिन आंखों से भी अधिक गहरी थी वह उदासीनता, जो उनमें दूर तक पसरी हुई थी. एक नजर में यूं लगता था जैसे आंखों को जीवन से निर्वासित हो जाने का दंड मिला हो. उसके होंठों में रस था लेकिन यौवन की जीवंतता नहीं थी. उसके गाल रक्तिम थे लेकिन कुछ-कुछ निस्तेज भी थे. उसके बाल, उसकी गर्दन, उसकी उंगलियां, उसका ललाट... जैसे किसी स्वप्न का शापग्रस्त टुकड़ा थी वह.

'क्या चाहिए?' लड़की ने कहा.

वह चौंक गया. उसकी आवाज में उत्सुक्ता नहीं, भय था. मानो वह कुछ खरीदने नहीं, लड़की के एकांत-को तहस-नहस करने आया हो.

उसने जवाब नहीं दिया और लड़की को देखता रहा. लड़की कुछ इस तरह खुद को सहेजने-समेटने लगी कि अपना देखना उसे खुद ही नागवार लगने लगा.

'कुछ लेंगे?' लड़की ने फिर पूछा.

'क्या?'

'कुछ भी.' लड़की थोड़ा असहज हो गयी, 'कंगन, माला... मेरे पास बहुत सुंदर सुंदर चीजें हैं.'

'जो चाहे दे दो.' वह मंत्रमुग्ध था जैसे.

'जो चाहूं..!' लड़की बुदबुदायी और दुकान में इधर-उधर देखने लगी. वह कुछ परेशानी-सी हो गयी थी, मानो तय न कर पा रही हो कि क्या दे. आखिर उसने सफेद मोतियों की एक सुंदर-सी माला निकाली, 'यह देखिए.. सिर्फ पैंतालिस रुपये.'

'नेपाली या इंडियन?' वह बाकायदा ग्राहक बन गया.

'इंडियन पैक कर दूं?' लड़की थोड़ा-थोड़ा दुकानदार की मुद्रा में आ रही थी.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'तुम्हें पसंद है न!' उसने अचानक ही पूछा.

'क्या?' लड़की जैसे समझी नहीं.

'हार.'

'मुझे. लड़की चौंक गयी फिर मुस्करा कर बोली, 'मेरी पसंद से उनके लिए हार लेंगे.'

'कौन उनके?' उसने सहजता से पूछा, दरअसल वह बातचीत को देर तक चलने देना चाहता था. और देर तक ही इस दुकान पर बने भी रहना चाहता था.

'अपनी पत्नी के लिए.' लड़की भी सहज थी.

'मैंने अभी विवाह नहीं किया.'

'तो फिर होनेवाली के लिए ले रहे होंगे.'

'होनेवाली भी कोई नहीं है.' वह पूर्ववत सहज था.

'तो फिर इस दुकान पर क्यों आये हैं?' लड़की को असमंजस ने घेर लिया था.

'तमसे बात करने के लिए.' उसने निसंकोच कहा.

'यानी आप यह हार नहीं ले रहे हैं?' लड़की कुछ-कुछ दुखी होने लगी थी.

'ले रहा हूं, अगर यह तुम्हें पसंद है.'

'मेरी पसंद का हार यह है.' लड़की ने एक दूसरा हार दिखाते हुए कहा, 'इसकी चमक कभी फीकी नहीं पड़ती. पर यह एक सौ पचास रुपये का है.'

उसने चुपचाप एक सौ पचास रुपये लड़की को पकड़ा दिये. लड़की के होठों पर मुस्कराहट खेलने लगी. वह हार की बिक्री पर कम, अपनी पसंद के स्वीकार पर ज्यादा प्रसन्न थी. उसकी प्रसन्नता उसके पोर-पोर से छलकने लगी थी.

लड़की को प्रसन्न देख उसे बहुत अच्छा लगा. शब्दों में भरपूर आत्मीयता उंडेलते हुए उसने पूछा, 'तुम नेपाली नहीं लगती!'

लड़की सहसा बुझ गयी और हार पैक करने लगी. धीरे से बोली. 'मैं हिंदुस्तान की ही हूं. लखनऊ से आयी थी यहां.'

'दुकान खोलने?' वह चकित हो गया.

'लड़की जैसे तड़प उठी. उसकी आंखों से आंखें मिलाते ही वह एकाएक दुखी हो गया. उसके प्रश्न से लड़की आहत हो गयी थी.

'मेरा आशय तुम्हें दुख पहुंचाना नहीं था, क्षमा कर देना.' उसने विनम्रता से कहा.

'अरे नहीं.' लड़की ने मुस्कराने की असफल कोशिश करते हुए कहा, 'यह क्या कर रहे हैं आप? यह हार लें.'

'मैं तुम्हारा नाम जान सकता हूं.' उसने हार को जेब में रखते हुए कहा.

'शैंदा.' लड़की की उदासीन आंखों में एक चमक सी कौंधी. शायद एक लंबे अरसे के बाद वह अपना नाम ले रही थी. उसे ऐसा ही लगा.

'खूबसूरत.' वह बुदबुदाया.

'क्या?' लड़की उत्सुक हो गयी.

'नाम.' उसने कहा.

'क्या फर्क पड़ता है.' लड़की ने जैसे अपने आप से कहा और एक नामालूम सी उदासी में डूबने-उतराने लगी.

'चलूं?' उसने लड़की से इस तरह पूछा जैसे अपनी किसी वर्षों पुरानी परिचिता से इजाजत ले रहा हो.

लड़की पहले खिलखिलायी, फिर उसने जिस तरह गर्दन हिलायी उसका अर्थ 'हां' भी था और 'ना' भी. उसने तत्काल तय किया कि वह अभी कुछ दिन और यहीं रहेगा.

अगली शाम वह फिर शैंदा के सामने था. रात को देर तक वह पीता रहा था और शैंदा के बारे में सोचता रहा था. शैंदा के लखनऊ से यहां आने और कंगन की दुकान खोल कर बैठ जाने के पीछे की व्यथा को तो पढ़ लिया था उसने शैंदा की आंखों में, लेकिन कथा से अपरिचित रह जाने की बेचैनी रात भर उसकी चेतना में करवटें लेती रही थी. सुबह वह देर से उठा, तो तैयार होने के बाद, सबसे पहला ख्याल उसे शैंदा के पास जाने का ही आया. पर तभी वह ठिठक गया. उसे लगा, बिना पिये वह शैंदा से इतनी अंतरंगता और अनौपचारिकता से बात नहीं कर सकता, जितनी इस बातचीत के लिए जरूरी है. रात, उसे सहसा ही यह भी लगा था कि जैसे महेंद्र गुफा में उसे बचाने के लिए नेपाली लड़कियों का दल चला आया था, ठीक वैसे ही शैंदा ने भी उसके भीतर की गुफा में प्रवेश किया है, कि हत्यारी गुफा में वह अकेला नहीं है.

दिन में वह बाजार की दूसरी दिशा में निकल गया था और कुछ कैसेट्स, एक चाइनीज बैग और एक जेबी शतरंज खरीद लाया था. लौट कर उसने होटल में ही खाना खाया और फिर सो गया.

और अब वह फिर शैंदा के सामने था.

भय

बिंदु सिन्हा

वह सड़क पर अकेली चली आ रही थी. सिर के ऊपर चिलचिलाती धूप, पांवों के नीचे तपती धरती. उसने अपनी चाल तेज कर दी ताकि गंतव्य तक जल्दी पहुंच जाय. तभी सामने के मकान से दो युवक निकले और उसके आगे आगे चलने लगे. दोनों आपस में खूब जोर-जोर से बोल बतिया रहे थे. बीच बीच में जोरों से हंस भी पड़ते. एक दो बार उन लोगों ने पीछे मुड़कर भी देखा.

वह भय से सिहर पड़ी, 'हे भगवान कहीं इन की नीयत में खोट तो नहीं, दुष्ट लगते हैं तभी बार-बार पलट कर पीछे देखते हैं. उसने अपनी चाल धीमी कर दी ताकि उनके बीच का फासला अधिक हो जाय.

वे दोनों युवक उसी तरह मस्ती में बोलते बतियाते आगे बढ़ते गये. अगले मोड़ पर वे दाईं ओर मुड़ गये तो उसने राहत की सांस ली. चलो किसी तरह पिंड तो छूटा.

सड़क फिर बिल्कुल सुनसान हो गयी. वह फिर डरने लगी क्योंकि अब वह बिल्कुल अकेली थी. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

शैदा ने उसे देखा, मुस्करायी और बोली, 'एक मिनट.'

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शैदा व्यस्त थी. वह एक लड़की को तरह-तरह के कंगन दिखा रही थी. लड़की को निपटाने के बाद उसने शरारत से कहा, 'अपनी पसंद के कंगन भी दिखाऊं?'

'एक शर्त पर.' उसने संजीदगी से कहा.

'क्या?'

'अच्छा पहले कंगन दिखाओ.'

'शैदा ने मोतियों जड़े कंगन निकाल कर उसे दिखाये और बोली, 'इंडियन करेंसी में बावन रुपये.'

रुपये देने के बाद उसने कुछ देर तक कुछ सोचा फिर आहिस्ता से बोला, 'शैदा! बुरा मत मानना और मेरा जी भी मत दुखाना. ये कंगन और यह हार मैंने तुम्हारे लिए ही खरीदे हैं. इन्हें रख लो, प्लीज.' उसने झटके से वाक्य पूरा किया और जेब में रखा हार शैदा के हाथ में ठूंस कर लंबे-लंबे डग भरता अपने होटल की तरफ बढ़ गया.

'सुनिए.. सुनो!' पीछे से शैदा की पुकार आयी. उस पुकार में चिंता, व्यग्रता, आतुरता, आशंका, खुशी और दुख के भाव गड्डमड्ड हो गये थे.

उसने पीछे मुड़ कर नहीं देखा. शैदा द्वारा कंगन और हार अस्वीकार कर दिये जाने से पैदा हुए अपमान को झेल नहीं सकता था वह.

रात के आठ बज रहे थे, जब उसके कमरे के दरवाजे पर किसी ने दस्तक दी.

'कौन हो सकता है?' उसने विस्मय से सोचा और दरवाजा खोल दिया.

'शैदा!' उसकी चीख निकल गयी.

'यह सच नहीं हो सकता.' उसने सोचा और शैदा के कंधे को छुआ. शैदा ही थी. उसने गले में अपनी पसंद का हार और हाथों में अपनी पसंद के कंगन पहन रखे थे. काले रंग की साड़ी पहने वह एक स्वप्न की तरह थिर थी.

'तुम..यहां.. कैसे?' उसकी जबान लड़खड़ा गयी.

'तानसेन बहुत छोटी जगह है.. मैं भागते आपके पीछे भी आयी थी. इस होटल में चढ़ते देखा, तो लौट गयी. सोचा, दुकान बंद करके आऊंगी.' शैदा एक सांस में सब बता गयी.

'पर बिना नाम के..!' वह अभी तक चकित था. उसे अब तक यकीन नहीं हो रहा था कि शैदा उसके सामने खड़ी है.

'आपका नाम भी बहुत खूबसूरत है.' शैदा मुस्करायी, 'भीतर आने को नहीं कहेंगे.'

'हां.' वह हड़बड़ा गया और दरवाजा छोड़ कर भीतर आ गया.

'मुझ पर, एक अजनबी पर भरोसा हो, तो दरवाजा बंद कर दूं?' उसने पूछा.

'है.' शैदा ने बिना किसी दुविधा के जवाब दिया और कुर्सी पर बैठ गयी.

उसने दरवाजा बंद किया और शैदा के सामनेवाली कुर्सी पर बैठते हुए बोला, 'इसे जारी रख सकता हूं.' उसने अपना गिलास दिखाया.

शैदा ने गर्दन हिला दी.

गिलास की शराब खत्म करके उसने शैदा की आंखों में देखा और बोला, 'एक बात बताओगी.'

'पूछिए!' शैदा की आंखों में सहसा एक उदास व्यग्रता उतर आयी.

चट्टान. उसने सोचा. दोनों तरफ से कटी हुई चट्टान.

'तुम कौन हो?'

'आप कौन हैं?' पूछा शैदा ने.

'मैं?' वह लड़खड़ा गया. 'मुझे नहीं मालूम. मुझे कुछ नहीं मालूम कि मैं कौन हूं और क्यों हूं.' उसे लगा, उसे थोड़ी सी शराब की और जरूरत है. वह उठ कर नया पैग बनाने लगा.

'मैं कौन थी, यह तो मालूम है मुझे.' शैदा का स्वर टूटा हुआ था. 'पर अब कौन हूं और क्यों हूं, मैं भी नहीं जानती.'

उसने तड़प कर शैदा को देखा. शैदा की आंखें नम थीं. बहुत आहिस्ता से बोली वह, 'यह निशानी आप मुझे क्यों दे जा रहे हैं? ऐसा क्यों किया आपने?'

'मैं चाहता था, तुम्हें तुम्हारी पसंद की चीज मिले ताकि तुम प्रसन्न हो सको.'

'पर क्यों?'

'मुझे लगा कि तुम जैसी लड़की को जीवन से भागना नहीं चाहिए.'

'जीवन.' शैदा की उदासी घनी हो गयी, 'जीवन कभी किसी का नहीं होता. जीवन हमारे लिए नहीं, हम जीवन के लिए होते हैं.'

'शैदा!' वह भावुक हो गया और गिलास की शराब हलक में उंडेल उसकी तरफ बढ़ा.

'नहीं, विश्वास मत तोड़ो.' शैदा उठ कर खड़ी हो गयी. 'अगर विश्वास टूट जाये तो..'

'तो?' वह ठिठक गया.

'तो हिंदुस्तान से आयी लड़की का तानसेन में कंगन बेच कर जीना पड़ता है.' शैदा सुबकने लगी.

संवेदना के सारे तंतु जैसे एक साथ कराह उठे हों. अस्फुट स्वरों में पूछा उसने, 'यानी तुम्हें छला जा चुका है, तुम्हें भी?'

'नहीं, मुझे किसी ने नहीं छला.' दृढ़ता से कहा शैदा ने, 'अपने बारे में ही सोचती रहती थी मैं. और एक दिन मैंने पाया कि अपने बारे में सोचते-सोचते जीवन से ही बाहर चली गयी मैं. जो साथ चल रहा था, वह जीवन में रह गया और मैं..' शैदा वाक्य पूरा नहीं कर पायी.

यह जवाब नहीं था जैसे, चीत्कार था. लेकिन उसे लगा, किसी तिलिस्म को भेदने के लिए मानो कोई सूत्र वाक्य उच्चारा गया हो. उसे महसूस हुआ कि कमरा छत, दीवारों फर्नीचर और शैदा समेत घूमने लगा है. उसकी आंखों में ढेर सा दर्द उतर आया और दिल डूबने लगा. हाथ पैरों में तेज सनसनाहट भी होने लगी थी, एकाएक.

उसने एक बड़ा पैग बनाया और एक ही सांस में नीट पी कर हांफता हुआ बोला, 'जाओ, इस समय जाओ, प्लीज. मेरा विश्वास मत करो इस समय, वरना मैं सब कुछ नष्ट-भ्रष्ट कर दूंगा, तुम्हें भी. जाओ.' वह दहाड़ा और फिर कुर्सी पर गिर कर रोने लगा.

जैसे नन्हें बच्चे को चूमते हैं, उसी तरह, उसकी दोनों बहती हुई आंखों को चूमा शैदा ने और उसे बिस्तर पर लिटा कर बाहर निकल गयी. चुपचाप.

होटल की सीढ़ियां उतरते समय शैदा को लगा, वह खुद भी रो रही है.

किसके लिए? उसने सोचा, तो रुलाई कंठ तोड़ कर बाहर आती सी-लगी. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फ्योदोर दास्तोएव्स्की

रुपहली रातें

एक संवेदनशील स्वप्नजीवी युवक के जीवन की रुपहली रातों की भावुक व्यथा-कथा है— 'वाइट नाइट्स'. फ्योदोर दास्तोयेव्स्की के इस बहुप्रसिद्ध उपन्यास का 'सारिका' के लिए विशेष रूप से अनुवाद किया है— वीरेंद्र सिंह ने.

वह रात बहुत सुंदर थी. एक ऐसी रात जिसके सौंदर्य को हम बस अपने यौवन के उषाकाल में ही अनुभव कर पाते हैं. उस रात आकाश इतना स्वच्छ और तारों-भरा था कि आपके मन में अयाचित ही यह प्रश्न उमड़ आता, कि इतने सुंदर आकाश की छाया में इतने विचित्र, सनकी और वाहियात किस्म के लोग आखिर कैसे रह सकते हैं? यह प्रश्न बड़ा युवकोचित है प्यारे पाठक, बड़ा ही युवकोचित, लेकिन ईश्वर करे ऐसे-प्रश्न आपके मन में बार-बार उठा करें. सनकी और वाहियात लोगों की बात करते समय मुझे खुद अपनी उस दिन की दिनचर्या याद आती है. सुबह से ही मेरे मन में एक खास तरह की उदासी छायी हुई थी. मुझे ऐसा लग रहा था कि मानो हर आदमी मुझे अकेला छोड़ कर भागा जा रहा है, और उपेक्षा कर रहा है. यहां पर यह प्रश्न उठाना बिल्कुल न्यायसंगत होगा कि आखिर हर आदमी से मेरा क्या अभिप्राय है? क्योंकि, यद्यपि में आठ साल से सैंट पीटर्सबर्ग में रहता आ रहा था, लेकिन किसी से भी इतनी दोस्ती न कर सका कि बातचीत करके थोड़ा समय ही काट सकूं. लेकिन मुझे दोस्त बनाने की जरूरत ही कब थी? सच तो यह है कि मैं संपूर्ण नगर को अपना दोस्त मानता था, और इसीलिए, जब अचानक शहर के लोग अपनी सालाना छुट्टियां बिताने के लिए रवाना होने लगे, तो मुझे लगा कि हर कोई मुझे अकेला छोड़कर जा रहा है. अकेले रह जाने की बात ने मुझे डरा दिया, और पूरे तीन दिन तक मैं गहरी निराशा में डूबा हुआ शहर की गलियों

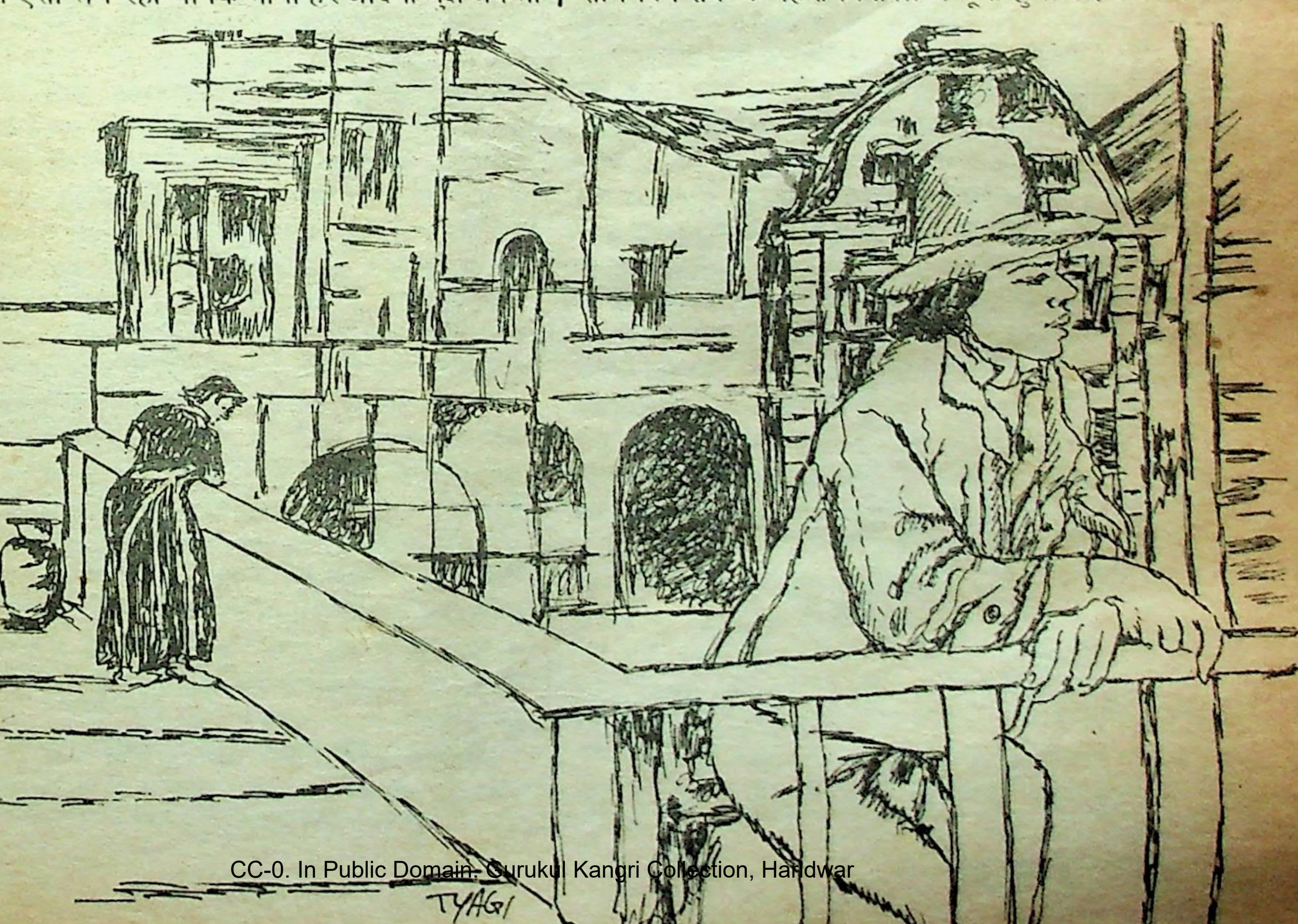

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और सड़कों में भटकता रहा, और फिर भी मैं यह न समझ पा रहा था कि आखिर मुझे हो क्या गया है? चाहे मैं नदी के तट पर चहलकदमी करूं या और कहीं, चाहे नेवेस्की ऐवेन्यू हो या पार्क, हर जगह मुझे वे जानी-पहचानी सूरतें नजर आतीं जिन्हें मैं किसी न किसी स्थान पर और किसी खास समय साल भर से देखता आ रहा था. यह बात सही है कि वे लोग मुझे नहीं पहचानते थे, लेकिन मैं तो उनसे परिचित था. मैं बखूबी उन्हें जानता था. उनमें से प्रत्येक के चेहरे का मैंने अध्ययन किया था. उनकी खुशी से मैं आनंदित होता था, और उनके चेहरे पर मुर्दनी देखकर उदास हो जाता था. एक वृद्ध सज्जन को तो मैं अपना मित्र बनाते-बनाते रह गया. ये सज्जन रोज फोंतेंका नदी के किनारे एक निश्चित समय पर मुझसे टकराया करते थे. उनकी मुखमुद्रा सदा गंभीर होती थी और वे कुछ न कुछ सोचते रहते थे. अपने बायें हाथ की उंगलियों को अजीब ढंग से हिलाते हुए वे अपने आप में बातचीत करते रहते थे, और उनके दाहिने हाथ में सुनहरी मूठ वाली गठीली लकड़ी की एक छड़ी रहा करती. उन्होंने भी मुझे लक्ष्य किया था, और मुझमें खासी दिलचस्पी रखने लगे थे. मुझे यकीन है, अगर किसी दिन फोंतेंका तट पर निश्चित समय में दिखाई न देता तो ये जरूर स्वयं को हतोत्साहित अनुभव करते. यही वह बात थी जिसके कारण जब भी हम प्रसन्नचित होते तो परोक्ष रूप से मन ही मन एक दूसरे के कुशल-मंगल पूछ लेते. एक-बार, जब पूरे दो दिन के व्यवधान के बाद हम लोगों की मुलाकात हुई तो वास्तव में हम लोग अभिवादन के लिए अपने-अपने टोप उठाने वाले ही थे कि भाग्यवश हमारी चेतना लौट आयी और हम लोगों ने अपने हाथ गिरा लिये, और परस्पर एक दूसरे के प्रति हृदय में सहानुभूति का भाव लिये आमने-सामने से गुजर गये.

आदमियों की बात तो एक ओर जाने दीजिये, मकानों से भी मैं दोस्ती गांठ लेता हूं. सड़कों से गुजरते हुए मुझे लगता है कि वे मेरे पास दौड़कर चले आये हैं और अपनी सारी खिड़कियों की आंखों से मुझे देखते हुए कहने ही वाले हैं– 'कहिये क्या हालचाल है? मेरा तो हालचाल ठीक है. अगले महीने मेरे ऊपर एक और मंजिल खड़ी होने वाली है!' अथवा यह कि– 'कहिये आप कैसे हैं? मैं तो कल से अपनी मरम्मत कराने जा रहा हूं,' या कि– 'देखिये उस दिन तो मैं जलते-जलते ही बचा, डर के मारे में बदहवास हो गया था!'–और इसी तरह की बहुतेरी बातें. उनमें से कुछ को मैं प्यार करता था और उनसे मेरी गहरी दोस्ती थी. उनमें से एक बार गर्मियों में पुनर्निर्मित होने वाला था. तब मैं रोज आकर उसे आशीष दिया करूंगा और ध्यान रखूंगा कि उसे कोई तकलीफ न हो. लेकिन, मैं यह नहीं भूल सकता कि एक बड़े आकर्षक गुलाबी रंगवाले मकान के साथ क्या गुजरी थी. वह पत्थरों से बना एक सुंदर काटेजनुमा मकान था. जब भी में उसके सामने से गुजरता, वह ऐसी दोस्ताना मुस्कराहट से मेरा स्वागत करता, और अपने बेढंगे पड़ोसियों को ऐसे विद्रूप से देखता कि मेरा दिल बाग-बाग हो जाता. पहले सप्ताह, जब मैं उस सड़क पर से जा रहा था तो सहसा एक करुण पुकार मुझे सुनाई दी, 'देखिये, वे मुझे पीले रंग से पोत रहे हैं.' मैंने अपने मित्र को देखा. दुष्ट, निर्दय, जंगली कहीं के! उन्होंने कुछ भी तो न छोड़ा था, न खंभे, न कार्निश और मेरा मित्र एक कुरूप पीली बिल्ली जैसा बनकर रह गया था. यह देखकर में पीलिया का रोगी होते-होते बचा. और तब से आज तक मेरी हिम्मत न पड़ी कि जाकर अपने उस मासूम दोस्त को देखूं, जिसे उन चांडालों ने महामहिम ईश्वर के मठों जैसे रंग में पोत कर कुरूप बना दिया था.

और अब तो आप जान ही गये होंगे प्रिय पाठक, कि मैंने किस तरह सारे पीटर्सबर्ग. से दोस्ती गांठ रखी थी.

मैं पहले ही बता चुका हूं कि मैं उदास था, और बिना उसका कारण ज्ञात हुए, मैं तीन दिन से इस यंत्रणा को झेल रहा था. घर से बाहर निकलते ही मैं दुश्चिंता में पड़ जाता था और घर में बैठकर भी चैन न मिलता. लगातार दो रातों तक मैंने अपने दिमाग को उल्टा-सीधा हर तरह से घुमाया कि आखिर मेरे घर में क्या पैदा हो गयी है? यह क्यों मुझे काटने को दौड़ता है, और इसमें बैठने की इच्छा क्यों नहीं होती? मैंने अपनी चिंताकुल दृष्टि कमरे की धुंधली हरी दीवारों और मकड़जालों से पटी छत पर घुमायी. ये मकड़जाले मेरी नौकरानी मात्र्योना की दया से और भी घने होते जा रहे थे. मैंने सारे फर्नीचर पर एक खोजपूर्ण दृष्टिपात किया, हर कुर्सी के आगे-पीछे नजर दौड़ायी कि शायद वहीं मेरी परेशानी की जड़ हो, क्योंकि अगर एक भी कुर्सी अपने स्थान से जरा भी खिसकी हुई मुझे मालूम देती है तो मैं बेचैन हो जाता हूं. मैंने खिड़कियों की तरफ भी देखा, लेकिन सब बेकार – मेरे मस्तिष्क को उससे जरा भी शांति न मिली. अचानक एक तरकीब मुझे यह भी सूझी कि मैंने मात्र्योना को बुलाकर मकड़जालों और कमरे की अस्तव्यस्तता के ऊपर कसकर डांट पिलायी, लेकिन उसने एक बार अचंभे से मुझे सिर पैर तक देखा, और बिना एक शब्द कहे चुपचाप कमरे से बाहर चली गयी और नतीजा यह कि वे मकड़जाले आज तक जैसे के तैसे अपनी जगह पर बदस्तूर थे. अंत में आज सुबह मेरी समझ में आया कि माजरा क्या है! दरअसल, बात यह थी कि लोग मुझसे पीछा छुड़ाकर छुट्टियां मनाने देहातों की ओर भाग रहे थे. मैं इस बेहूदे शब्द-प्रयोग के लिए क्षमा चाहता हूं, लेकिन मैं उस समय इससे बेहतर शब्द का चुनाव करने की हालत में न था – क्योंकि सैंट पीटर्सबर्ग का हर निवासी या तो गावों की ओर जा रहा था, या जाने की तैयारी में लगा हुआ था. क्योंकि सम्भ्रांत-कुल और किसी भी सज्जन व्यक्ति को अगर मैं घोड़ा-गाड़ी तय करते हुए देखता, तो तत्काल यह विचार मेरे मन में कौंध जाता कि यह सद्गृहस्थ अपने दैनिक कार्यों से निपटकर, अब गांव जाकर अपने परिवार से मिलने की हड़बड़ी में है. हर राहगीर के चेहरे पर अब एक विशेष भाव झलकने लगा था जो अपने पास से निलकने वाले व्यक्ति से यह कहता हुआ मालूम पड़ता– 'बस जनाब, मैं घर का रास्ता ही काट रहा हूं, और चंद घंटों में हम लोग शहर से रवाना होने वाले हैं.' अगर किसी खिड़की का पल्ला खुलते हुए में देखता, और पहले गोरी-गोरी पतली-सी उंगलियां उसके कांच को थपथपातीं और फिर एक लड़की अपना सिर निकालकर गुलदस्ते वाले को आवाज देती – तो तुरंत वहीं मैं कल्पना कर लेता कि इन गुलदस्तों को खरीदने का मतलब सिर्फ इतना ही नहीं है कि ये लोग शहर के दमघोंटू मकानों में फूल सजाकर बसंत-ऋतु का आनंद लेना चाहते हैं, बल्कि सचाई तो यह है कि वे जल्द ही गांव जाने वाले हैं और वहां ले जाने के लिए ही इन गुलदस्तों की खरीददारी हो रही है. अपनी इस विशिष्ट और मौलिक खोज में मैंने इस सीमा तक प्रगति कर ली थी कि अब मैं केवल सूरत देखकर ही बिलाचूक यह बता सकता था कि किस व्यक्ति का ग्रीष्म निवास किस स्थान पर है.

जो लोग कामेनी और आप्तेकास्कीं द्वीपों से आये थे, या पीटरहोफ की तरफ के रहने वाले थे वे अपने शिष्ट व्यवहार,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फैशनेबुल कपड़ों और शानदार घोड़ागाड़ियों से अजीब ही दिखायी देते थे. जो लोग पार्वीलोवी और अन्य सुदूर ग्रामांचलों से आये थे, उनकी चतुराई और विश्वासी स्वभाव में तत्काल ही प्रभावित कर लेने की क्षमता थी. क्रेस्तोव्स्की द्वीप से आये हुए प्रवासियों के चेहरों पर सदा सौम्यता और प्रसन्नता खेलती रहती.

कभी मैं घोड़ागाड़ियों के एक लंबे जुलूस को देखता, जिसके बगल में गाड़ीवान लोग आराम से लगामें थामे हुए चलते रहते, और गाड़ियों पर मेज-कुर्सियां, तुर्कीकालीन, तख्त और घरगृहस्थी का तमाम सामान ऊपर तक लदा-फंदा होता. सामान के ऊपर चुहिया की शक्लवाली एक रसोईदारिन बड़ी सतर्कता से अपने मालिक के सामान की रखवाली करती नजर आती. या कभी फर्नीचर और दूसरे घरेलू सामानों से लदी किसी नाव को मैं नेवा या फोंतेंका के वक्षस्थल पर चोर्नाया नदी या दूरस्थ द्वीपों की ओर जाते हुए देखता. ऐसी हालत में ये नावें और गाड़ियां मुझे दस से लेकर सौ गुनी अधिक मालूम होतीं. मुझे लग रहा था कि प्रत्येक वस्तु गतिमान होकर निकल आयी है और इन काफिलों में शामिल होकर देहातों की ओर जा रही है. सहसा यह अशंका मेरे दिल में घर कर गयी कि बस पूरा पीटर्सबर्ग निर्जन हो जाने का संकट मंडरा रहा है. और तब मैं और भी पीड़ित लज्जित और उदास हो गया, क्योंकि न तो देहातों में मेरे रहने का कोई ठिकाना था ओर न ही ऐसा कोई कारण उपस्थित हुआ था कि मैं गांव जाने की बात सोचूं. वैसे मैं हर गाड़ी के साथ चलने को तैयार था, और हर सम्मानित दिखायी पड़ने वाले सज्जन के निमंत्रण पर मैं उसके साथ हो लेता, पर किसी ने मुझे अपने साथ चलने को आमंत्रित नहीं किया, जैसे कि ये लोग मुझे भूल गये हैं, या वास्तव में उनके लिए मैं अजनबी हूं.

ऊंचे कद का दोस्त

गुरमेल सिविया

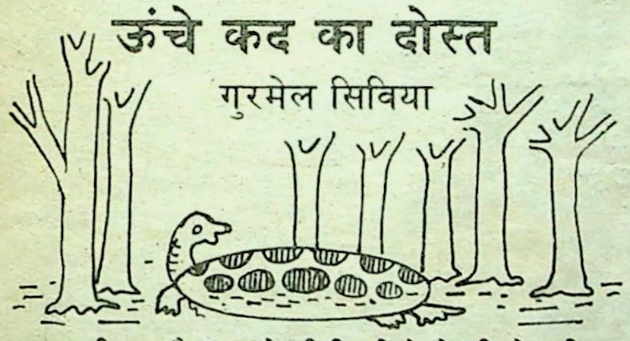

एक गीदड़ और कछुये की किसी से दोस्ती हो गयी. तब वे दोनों जहां भी जाते, खूब बढ़-चढ़ कर बातें करते कि वे इतने बड़े जानवर के दोस्त हैं.

एक दिन दोनों ऊंट से मिले, तो बहुत प्यार-भरी बातें करने लगे. पर ऊंट था कि उनकी ओर कोई ध्यान नहीं दे रहा था. आखिर एक मौके पर गीदड़ उसकी गर्दन पर चढ़ बैठा और प्यार जताने लगा. कछुआ भी ऊंट की पूंछ को पकड़कर चूमने लगा. ऊंट यह सब सहन न कर पाया कि तलखी में उठकर खड़ा हो गया. तब गीदड़ उसकी गर्दन के साथ लटककर गया, और कछुआ उसकी पूंछ के साथ. दोनों घबराये हुए थे. आखिर कछुये ने गीदड़ से कहा, "अरे भाई, कुछ करो... बचाओ मुझे!"

"क्या करूं?" गीदड़ ने कहा. "कोई पांव भी तो लगने दे." □

चलते-चलते मैं अपनी उधेड़-बुन में इतना मगन था और इतनी दूर निकल आया था कि मैं दिशा-ज्ञान ही भूल गया, जो कि हमेशा मेरे साथ होता था. अचानक जब मैं सचेत हुआ तो मैंने पाया कि मैं शहर के बाहरी फाटक पर आ गया हूं. उसी समय मेरा मन खिल उठा, और मैं परकोटा पार करके गोड़े हुए खेतों और हरी-हरी घास के चरागाहों में से होकर चलने लगा. मेरी थकान यकायक गायब हो गयी, और रोम-रोम को यह अनुभव होने लगा कि मेरे दिल पर रखा हुआ कोई भारी बोझ उठता जा रहा है. जितने भी लोग मेरे पास से निकले उन्होंने बड़ी आत्मीयता से मेरी ओर देखा, और मेरा कुशल-मंगल पूछा. ये सभी लोग जाने किस बात पर बड़े प्रसन्न दिखायी पड़े रहे थे. उनमें से हरेक के मुंह में सिगार दबा हुआ था. और मुझे भी इतनी खुशी महसूस हुई जितनी आज तक कभी न हुई थी. ऐसा लग रहा था कि मैं अचानक ही अपने सपनों के सुंदर-मनोहर देश इटली में पहुंच गया हूं. मुझे जैसा अर्ध-रोगी आदमी इस प्राकृतिक सुषमा से इतना प्रभावित हुआ कि मुझे महसूस हुआ कि परकोटे से घिरा हुआ वह शहर मेरा दम घोटे दे रहा था.

सतागमन के समय जब सहसा प्रकृति अपनी सारी नैसर्गिक सुषमा में झूमती हुई दिखायी देती है तो सैंट पीटर्सबर्ग के आसपास के ग्रामांचल में एक वर्णनातीत सम्मोहन छा जाता है जो हृदय को बांध लेता है. जब यहां की धरती पल्लव और पुष्पों से जुड़ी हुई अपनी चमकीली धानी चुनरिया ओढ़ लेती है – तो जाने क्यों मुझे लगता है जैसे वह एक मुर्झायी हुई, उदास और गुमसुम नवयुवती की तरह है, जिसे देखते ही अनायास आपकी करुणा उसके प्रति उमड़ आती है, जो, दूसरों के प्रति एक सयंमित प्रेमभाव तो रखती है लेकिन फिर भी किसी की परवाह नहीं करती. बिल्कुल अप्रत्याशित और अवर्णनीय – और तभी आपके मन में यह प्रश्न उमड़ा करता है. हतप्रभ और सम्मोहित होकर आप अपने मन में कहते हैं – 'आखिर किस दैवी शक्ति ने इसके उदास और झुके-झुके नयनों को प्रदीप्त कर दिया? इन पीले मुर्झाये कपोलों को किसने गुलाब की डाली से छू दिया? कौन है वह, जिसने इन सुकोमल अंग-प्रत्यंगों में मादकता भर दी है? क्यों उसके वक्षोज रह-रह कर धड़क उठते हैं? क्या है वह, जिसने इस उपेक्षिता युवती में यह आकर्षण, सौंदर्य और जीवन फूंक दिया है कि वह एक मुस्कान में इस तरह से खिल-खिल उठती है और उसका मृदुहास विद्युत प्रकाश की छटा बिखर देता है? आप अपने आस-पास देखते हैं, आप इस परिवर्तन का कारण जानने का प्रयास करते हैं और तब धीरे-धीरे सब-कुछ आपकी समझ में आने लगता है... लेकिन तब तक वह क्षण जा चुका होता है, और कल शायद आप उसे देखें तो पुनः वही मुर्झायी हुई उदास दृष्टि, वही निरुत्साह और हताशा उसके व्यवहार में आपको दिखायी पड़े. और हो सकता है कोई पश्चाताप, या किसी मरणोन्मुखी निराशा और व्यथा की झलक आप देख पायें, जो स्फुरण के उस एक क्षण की विस्मृति से जन्मी है... और तब आप सुंदरता के उस क्षणभंगुर फूल के लिए करुणा-विगलित हो पड़ेंगे कि वह इतने शीघ्र ही, एक अटल नियति के चक्रवात में पड़कर झर गया, कि उसके प्रकाश की कौंध इतनी छलनायमी और निष्फल थी. तब आप संतप्त हो उठेंगे – पछतायेंगे कि उसे प्यार कर सकने का समय भी हमें न मिल सका.

लेकिन आप जो कुछ भी कहें, मेरी वह रात, दिन की अपेक्षा कहीं अधिक फलीभूत हुई. यह सब इस प्रकार हुआ :

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब मैं वापस शहर में लौटा तो [illegible] मैं अपने घर से थोड़ी दूर था तो घंटाघर की घड़ी ने दस बजाया. मेरा रास्ता नहर के किनारे-किनारे होकर था जहां इतनी रात गये किसी मनुष्य के मिलने की संभावना नहीं के बराबर रहती थी. यह शतप्रतिशत सही है कि मैं शहर के सबसे दूर बसे हुए मुहल्ले में रहता था. हां, तो चलते-चलते में गीत गाने लगा, क्योंकि जब मैं आनंदित होता हूं तो को-न-कोई धुन गुनगुनाने लगता हूं और ऐसा हर्षातिरेक में डूबा हुआ प्रत्येक ऐसा व्यक्ति करता है जिसकी प्रसन्नता में भाग लेने को न तो कोई मित्र होता है और न कोई परिचित. और तभी, अचानक एक अप्रत्याशित घटना मेरे साथ घटी.

मुझे कुछ ही दूर, रेलिंग से सटी हुई एक नारी — आकृति खड़ी थी. मैंने देखा कि वह रेलिंग के ऊपर झुकी हुई बड़े ध्यान से जलप्रवाह को देख रही थी. वह एक सुंदर पीली टोपी और काला आकर्षक साया पहने हुए थी. 'यह तो कोई युवा लड़की जान पड़ती है, और निश्चय ही उसके बाल घने, लंबे और भैरों जैसे काले हैं,' मैंने सोचा. स्पष्ट था कि उसने मेरी पगध्वनि नहीं सुनी, क्योंकि जब मैं तेजी से धड़कते हुए दिल और रुकी सांस लेकर उसके पीछे से गुजरा तो वह अविचलित रही. 'यह तो गड़बड़ बात है,' मैंने सोचा, 'जरूर वह किसी गहरी चिंता में मग्न है.' और सहसा मैं बर्फ की तरह जमकर रह गया. मुझे कहीं से दबी हुई सिसकियों की आवाज आती हुई जान पड़ी.बेशक, मेरा अनुमान सही था. वह लड़की रो रही थी. रह-रह कर उसी सिसकियां फूट पड़तीं. हे भगवान! मेरा दिल बैठ गया. मैं स्त्रियों से वैसे बहुत लजाता था, लेकिन ऐसा मौका तो आज तक भी मेरे सामने नहीं आया... मैं घूम पड़ा, उसकी ओ एक पग उठाया, और कहने ही वाला था, 'मादाम!' कि मुझे याद आया कि कुलीन वर्ग से संबंधित सभी रूसी उपन्यासों में यह संबोधन पहले ही हजारों बार दोहराया जा चुका है. यह सोचकर मैं ठिठक गया. लेकिन वार्तालाप शुरू करने के लिए उपयुक्त शब्द की खोज कर ही रहा था, तभी लड़की ने रोना बंद कर दि[illegible] ने अपने को संभाल कर आस-पास देखा, और चुपचाप अ[illegible] मेरे पीछे से निकलकर नहर के किनारे वाली सड़क पर [illegible]. मैं तुरंत उसके पीछे लग लिया, परंतु जैसे ही उसने [illegible] आहट सुनी, वह सड़क के उस पार वाली पटरी पर पहुंच गयी और इधर मैं इस पार वाली पटरी पर चलने लगा. सड़क पार करने का साहस मुझ में था नहीं. मेरा हृदय पिंजरे में बंद पंछी की तरह तड़प उठा... और तभी एक सुनहरे अवसर ने मुझे इस अनुताप से बचा लिया.

एकाएक मैंने सायंकालीन वेशभूषा में सुसज्जित एक पुरुष को उस युवती के निकट पहुंचते देखा. यह व्यक्ति उम्र और कपड़ों से तो शालीन और सज्जन मालूम देता था लेकिन चाल-ढाल से कुछ और. वह दीवार के किनारे-किनारे लड़की के साथ-साथ चलने लगा. लड़की ने उसे पास मंडराते देखा तो एकदम तीर की तरह भागी — जैसा कि रात के समय यदि कोई युवक घर तक पहुंचा देने का प्रस्ताव करे, तो स्वीकार न करने वाली संभ्रांत लड़कियां करती हैं. वास्तव में मेरे भाग्य ने अगर उस सज्जन पुरुष को शीघ्र ही अधिक प्रभावशाली तरीका अपनाने को प्रेरित न किया होता, तो वह उस तक उम्र भर न पहुंच पाता. उस सद्पुरुष ने, बिना एक शब्द बोले यकायक एक उड़ान भरी और लड़की पर झपटा. लड़की पवन वेग से भाग रही थी लेकिन वह भी उसके पास पहुंचता जा रहा था. दोनों के बीच अब फासला काफी कम रह

गया था, और तभी उसने लड़की को जा पकड़ा. उसने चीख मारी — और मेरे नक्षत्रों को धन्यवाद कि उस समय मेरे दाहिने हाथ में अच्छा-खासा बेंत था जिसे मैं घूमते समय साथ रखता था. एक पल में मैं सड़क के उस पार था. दूसरे ही पल, सद्पुरुष ने जब यह महसूस किया कि अगला दृश्य कैसा होगा, तो तत्काल बेंत के अकाट्य तर्क के आगे अनी पराजय स्वीकार कर चुपचाप पीछे भाग खड़ा हुआ और जब हम लोग काफी आगे निकल आये, तो उसने बड़े जोर-शोर से गालियां देते हुए मुझे ललकारा. परंतु उसका एक भी शब्द हमारी समझ में न आया.

'लाइये, मैं आपका हाथ थाम लूं,' मैंने लड़की से कहा, 'अब वह सद्पुरुष कभी हमसे बात करने की हिम्मत न करेगा.

उत्तेजना और भय से कंपित अपना कोमल हाथ उसने मेरे हाथ में दे दिया. ओह, मेरे अजनबी उपकारक! मैं उसी क्षण उस सम्भ्रांत पुरुष को धन्यवाद दिया!... मैंने एक तिरछी नजर में तरुणी को देखा, वह बड़ी प्यारी लड़की थी और उसके बाल भौंरों जैसे काले थे — आखिर मेरा अनुमान ठीक ही निकला न! उसकी कजरारी पलकें हाल ही की दुर्घटना के भय से छलक आये आंसुओं से भीगी हुई थीं, या हो सकता है इसका कारण वह पहले वाला दुख ही रहा हो-मुझे मालूम नहीं. एक गुलाबी मुस्कान उसके होंठों पर झलकने लगी थी. चोरी से उसने मेरी तरफ देखा, फिर थोड़ा लजाकर आंखें झुका लीं.

अगले अंक में जारी...

... और कैसी रही वह दूसरी मुलाकात? क्या वे दोनों मतलब की बात पर आ सके... यानी दूसरी बात...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जेम्स जॉयस

कसक

"इतनी देर क्यों लगा दी?" जूलिया ने गैब्रियल से पूछा. हम तो कब से तेरी और ग्रेटा की प्रतीक्षा कर रहे थे."

"इस ग्रेटा की वजह से देर हो गयी." गैब्रियल ने कहा.

"ग्रेटा की वजह से? वह कैसे?"

"अरे, मौसी, क्या बताऊं? यह ग्रेटा है न, दीवानी तो है ही. आप खुद देख रही हैं, बाहर कितनी ठंड पड़ रही है. रास्ते में इसने ज़िद पकड़ ली कि वह थोड़ी दूर गाड़ी से उतरकर नंगे बर्फ पर चलेगी. बस, इसी वजह से देर हो गयी और इतना ही नहीं, इस वजह से उसे सर्दी भी हो गयी है. देखिये,ये कांपे ही जा रही है."

जूलिया मौसी ने ग्रेटा के नंगे पांवों पर निगाह डाली और थोड़े गंभीर स्वर में पूछा, "मुझे तुम जैसी समझदार बेटी से यह उम्मीद न थी, ग्रेटा! गैब्रियल ठीक कह रहा है. तुम तो वाकई कांप रही हो!"

"आप सीधी हैं न, मौसी, इसीलिए यह आपको आसानी से बना लेते हैं. बर्फ पर नंगे पांव मैं नहीं, खुद ये चले थे."

"मगर कांप तो तुम रही हो!"

"मैं ठंड के कारण नहीं, हर्ष से कांप रही हूं, मौसी! आप तो जानती हैं कि आपके वार्षिक नृत्य-समारोह में भाग लेना मुझे कितना भाता है."

पिछले तीस वर्षों से मोरवन परिवार, बिला नागा, अपना वार्षिक नृत्य-समारोह बड़ी धूमधाम से मानता चला रहा है. केटी और जूलिया ही कब रह गयी हैं, इस परिवार में, लेकिन अपने दिवंगत भाई पैट की याद में वे इस समारोह को बड़े चाव से मनाती हैं. इस बहाने उन्हें तथा पेट की, जिसकी नृत्य व संगीत में गहरी रुचि थी, याद भी आ जाती है.

दोनों बहनें गैब्रियल से, तब से परिचित थी, जब वह बहुत छोटा था, और पेट के साथ खेला करता था. दोनों ही अपनी मृत बहन रैला के एकमात्र पुत्र गैब्रियल को बहुत चाहती थीं, और गैब्रियल भी उन्हें बहुत मान देता था. जब आता, दोनों के लिये कोई न कोई कीमती उपहार लेकर आता. इस बार भी वह दोनों के लिये खुशनुमा और कीमती उपहार लाया था, जिन्हें पाकर वे बहुत प्रसन्न हुई थीं, क्योंकि मेहमान समारोह में भाग तो लेते, लेकिन उनके लिये उपहार कोई न लाता.

गैब्रियल और ग्रेटा ने कपड़े बदले ही थे कि हॉल में कई जोड़ों ने नाचना शुरू कर दिया. गैब्रियल ने कुमारी आयवर्स को अपने साथ नाचने के लिए पटाया. इसकी एक वजह यह भी थी कि आयवर्स उसकी भांति ही साहित्य की प्राध्यापिका थी.

दोनों नाचते भी जा रहे थे, और कॉलेज की राजनीति का ज़िक्र भी करते जा रहे थे. गैब्रियल ने इस चर्चा में बड़े जोश के साथ भाग लिया, मगर जब उसने देखा कि अनेकानेक पूर्वाग्रहों से ग्रस्त आयवर्स झूठ बोले जा रही है, जो वह उसे छोड़कर दूसरे पार्टनर की तलाश करने लगा.

तभी उसने अपनी पत्नी को अपने पास आते देखा. उसने पूछा, "क्या तुम मेरे साथ नाचने को तैयार हो?"

"ना बाब, यूं ही तुम मुझे हमेशा नाचते रहते हो. और इस वक्त तुम मालूम नहीं क्यों लड़ने के मूड में भी हो. जबकि मैं अभी हसंने-खेलने की मूड में हूं."

"किसने कहा, मैं लड़ने के मूड में हूं?"

"आयवर्स ने. वह सबके सामने कह रही थी. खैर, तुम अब नाचना छोड़ो और रसोईघर में चले जाओ, जहां तुम्हारी दोनों मौसियां तुम्हारा इंतजार कर रही हैं."

"करने दो थोड़ी देर इंतजार उन्हें," ग्रैब्रियल ने ग्रेटा को अपनी ओर खींचते हुए कहा, "इस वक्त तो तुम्हारे साथ नाचने को मन कर रहा है."

पति जैसे ही सबके सामने उसकी ओर चाहभरी निगाहें तब डालता है कि ग्रेटा को फ़ौरन गुस्सा आ जाता है, और यह गुस्सा तक शांत नहीं होता, जब तक वह सबके सामने उन्हें ज़लील नहीं कर लेती.

जेम्स जॉयस ने जीवन भर निपट निर्धनता व अंधता के विरुद्ध संघर्ष करते हुए भी अंग्रेजी कथा-साहित्य को अपनी अमर कथाकृतियों से समृद्ध किया. उनकी यह कहानी अधकचरे किशोर-प्रेम की रूमानी संवेदना तथा कसकभरी निराशा से स्पंदित है.

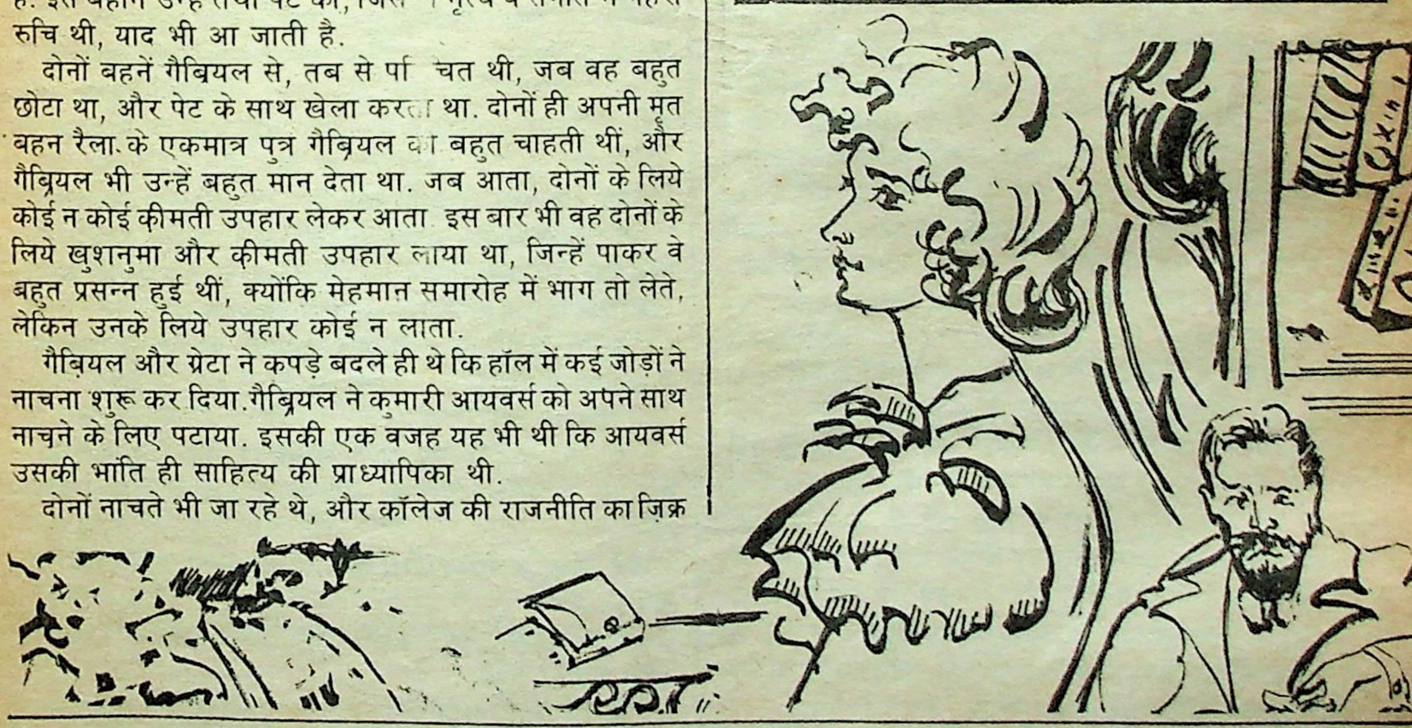

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह कुछ दूर पर खड़ी मिसेज मॉलिस के पास जाकर, सबको सुनाकर कहने लगी, "आप सचमुच सौभाग्यशालिनी हैं, मिसेज मॉलिस! कितने नम्र और समझदार हैं, आपके पति! मुझे आपसे ईर्ष्या होती है."

उसकी बात सुनकर सब चकित-स्तब्ध रह गये थे. सबसे अधिक चकित-स्तब्ध थे—खुद उसके पति गैब्रियल. जो एक लंबी सांस लेकर चुप रह गये. यह अनुभव उनके लिए नया नहीं था. ग्रेटा, इससे पहले भी उन्हें सबके सामने उसे ज़लील कर चुकी थी. पति को खुले आम अपमानित करके वह मन ही मन बहुत खुश होती थी.

जब मेहमानों को भोजन परसा गया तो ग्रेटा को अपने पति को चिढ़ाने के और अवसर मिले. भोजन परसने की जिम्मेवारी उसने अपने ऊपर ली थी, और अविवाहित युवा-मेहमानों को वह बड़े चाव और जोश से भोजन परस रही थी. वे लोग भी उस पर विशेष रूप से कृपालु हो रहे थे, और मुग्ध होकर उसे देखते हुए उससे बातें कर रहे थे. गैब्रियल इस तमाशे को बड़े ध्यान से देख रहा था.

गैब्रियल का स्वभाव बड़ा गंभीर था जबकि ग्रेटा एक अमोदप्रिय युवती थी, जिसे हंसना-खेलना और गपशप करना ही भाता था. इसलिए अपने पति की प्रकृति के साथ उसका मेल नहीं खाता था. फिर भी, दोनों गृहस्थी की गाड़ी खींचे जा रहे थे.

खाने के बाद अधिकांश लोग चले गये और थोड़े चुने हुए मेहमान ही केटी और जूलिया के इसरार करने पर रुक गये. वे सब आर्की नाम के एक गायक का गाना सुनने के इच्छुक थे और उससे आग्रह कर रहे थे कि वे उन्हें अपने कुछ गीत सुनायें.

जैसे ही आर्की ने सुनाना शुरू किया, गैब्रियल ने आश्चर्य से देखा कि शोकपूर्ण गीतों से दूर रहनेवाली उसकी पत्नी शोकपूर्ण गीत में खो-सी गयी थी. वह उसे इस समय बड़ी गरिमामयी और रहस्यमयी लग रही थी. एक रहस्यमयी महिला का प्रतीक.

सुबह को जब वह आर्की और अपनी पत्नी के साथ ट्रेन पकड़ने के लिए स्टेशन की ओर जाने लगा तो उसने ग्रेटा को आर्की के साथ-साथ चलते पाया. ग्रेटा उसे इस समय भी बड़ी मोहक और आकर्षक प्रतीत हो रही थी. उसका मन हो रहा था कि आर्की की परवाह किये बिना, वह आगे बढ़कर अपनी पत्नी को पीछे से दबोच ले और उसके गालों और होंठों पर चुंबनों की झड़ी लगा दे. अपने को रोक पाना उसके लिए बड़ा कठिन लग रहा था और वह यही सोचकर अपने को मना रहा था कि घर पहुंचकर, जब वे दोनों अकेले होंगे तब वह उसी जी भरकर प्यार कर सकेगा.

चलते-चलते, उसकी आंखों के सामने वे दृश्य बार-बार घूम जाते थे जिसमें उसने ग्रेटा को जी भरकर प्यार किया था और उसने भी उतनी ही उमंग के साथ इस प्यार का प्रतिदान दिया था. हालांकि ऐसे अवसर उसके जीवन में कम ही आये थे.

जब आर्की उन दोनों से विदा लेकर, अपनी ट्रेन में चला गया, तो वे दोनों प्लेटफार्म पर अकेले रह गये. ठंड के बावजूद ग्रेटा की निकटता उसे अंदर और बाहर ले जला रही थी. ग्रेटा के हाथ में टिकट देते समय उसे लगा, जैसे वह अपनी पत्नी को पहली बार छू रहा है. बिजली के छूने जैसी अनुभूति हुई उसे. उसे गर्व और हर्ष हो रहा था कि ग्रेटा उसकी अपनी है. वह छिप-छिपकर उसे ऐसे देख रहा था, मानों वह उसकी पत्नी नहीं, कोई अज्ञात प्रेमिका हैं. उद्दाम वासना की लहरें उसे सराबोर कर रही थीं.

ट्रेन में और बाद में घोड़ागाड़ी में वह बदहवास रहा. घोड़ागाड़ी से उतरते समय, जब ग्रेटा ने हल्के से उसकी बांहों का सहारा लिया तो उसे एक अवर्णनीय सुखानुभूति हुई जिसमें उसने गाड़ीवाले को एक पौंड टिप दे डाला.

घर में प्रवेश करते समय वह अचानक एक सभ्य प्रोफेसर से एक असभ्य और जंगली हब्शी बन गया. ग्रेटा उसे एक नयी-नवेली प्रेमिका लग रही थी. जिसकी वह घर के अंदर पहुंचते ही पहली बार आलिंगन करेगा, उसके होंठ चूमेगा और जी भरकर मसलेगा. अपने ऊपर से उसका नियंत्रण खोता जा रहा था और एक पागलपन उस पर सवार होता जा रहा था.

लेकिन ग्रेटा को उसकी मनस्थिति के बारे में कुछ पता न था. उसने घर में आकर पूछा, "तुम जैसा महाकंजूस आज इतना उदार कैसे बन गया कि गाड़ीवाले को एक पौंड टिप में दे डाला!"

"प्रेम आदमी को उदार बना देता है और आज प्रेम ने मेरे तन और मन पर पूरा अधिकार कर रखा है. मैं तुमसे प्रेम करता हूं ग्रेटा." कहते-कहते उसका स्वर कांपने लगा.

नृत्य-समारोह का 'हैंगओवर' अभी तक दिमाग पर सवार है, और उसी वजह से वह बहक रहे हैं, ग्रेटा ने सोचा. मगर, मन ही मन वह खुश भी थी, पति को उत्कट प्रेमी के रूप में देखकर. इस खुशी की लहर में उसने अपने पति का चुंबन ले लिया. गैब्रियल के दिल की धड़कनें इस चुंबन से और तेज हो गयीं, और उसे विश्वास हो गया कि ग्रेटा भी उससे मिलने के लिए इच्छुक है. ऐसे अवसरों पर ग्रेटा में भी उत्कट मिलन-कामना जाग जाती है, यह वह अनुभव से जानता था, लेकिन आज वह न मालूम क्यों, संकोच से काम ले रही थी.

क्यों? क्या अभी तक उसका आक्रोश जारी है? मगर, वह तो प्रेम का प्रतिदान करते समय, ऐसी बातों को भूल जाया करती हैं.

"क्या सोच रही हो, ग्रेटा डियर?" उसने प्यार से उसे अपनी ओर खींचते हुए पूछा. ग्रेटा ने कोई उत्तर नहीं दिया और शून्य में ताकती रही.

"क्या बात है, ग्रेटा? बताओ न!'—

ग्रेटा ने तत्काल कोई उत्तर नहीं दिया, और फिर सहसा फूट-फूटकर रोने लगी. फिर, सुबकते-सुबकते बोली, "मुझे अचानक वह गीत याद आ गया. जिसकी पहली लाइन है—आग्रीम की लड़की." और फिर, तकिये में मुंह छिपाकर रोने लगी.

"लेकिन, उस गीत को याद कर रोने की क्या जरूरत है?"

ग्रेटा ने कोई उत्तर नहीं दिया, और रोती ही रही. कुछ देर बाद, जब वह कुछ स्वस्थ हुई तो गैब्रियल ने फिर नरमी से पूछा, "बताओ न ग्रेटा, तुम्हारी आंखों में आंसू क्यों?"

"मुझे एक नौजवान की याद आ गयी जो इस गीत को गाया करता था बेचारा!"

"कौन था वह?"

"मैं नहीं जानती. वह मेरी ज़िंदगी में तब आया था, जब मैं किशोरी थी, अविवाहित थी और अपनी दादी के साथ रहा करती थी."

एक अंधा, बेलगाम क्रोध गैब्रियल के भीतर अपना फन उठाने लगा.

"क्या तुम उसे प्यार करती थीं?" उसने भरसक अपना स्वर शांत रखकर पूछा.

"कितनी बड़ी-बड़ी और सुंदर आंखें थीं, बेचारे माइकेल की.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं उनमें डूब कर न जाने कहां पहुंच जाती थी. [illegible] मगर आवाज बड़ी सुरीली थी."

"क्या तुम उसे प्यार करती थीं?" इस बार तेज स्वर में ग्रैब्रियल ने पूछा.

"मैं उसके साथ घूमने जाया करती थी. घूमते समय वह खामोश रहता था और मेरी बातें चुपचाप और दिलचस्पी से सुनता रहता था. बड़ा खामोश नौजवान था."

"ओह!... पिछली बार तुम उससे कब मिली थीं?"

ग्रेटा ने घृणा से गैब्रियल की ओर देखा और फिर मुंह मोड़ लिया. करीब चार-पांच मिनट तक खामोश रहने के बाद, उसने धीमे स्वर में कहा, "उसे मरे तेरह साल हो गये. जब मरा, तब सिर्फ़ सत्रह साल का था. काफ़ी कमज़ोर था, मगर बड़ा भला, नेक और भावुक."

"करता क्या था? विद्यार्थी था?" गैब्रियल का गुस्सा अभी तक शांत नहीं हुआ और लगातार बढ़ता ही जा रहा था.

"गरीब खानदान का था, इसलिए उच्च शिक्षा नहीं पा सका था. अपना और अपनी बूढ़ी मां का पेट पालने के लिए गैस कंपनी में काम करता था."

तीर की भांति इस एहसास ने गैब्रियल को अंदर से बींधा कि ग्रेटा बड़े अपनेपन से गरीब... कमजोर... और खामोश तबियत के नौजवान को याद कर रही थी. न चाहते हुए भी, उसे अपने ऊपर शर्म आने लगी. वह अपने को उस निरीह और कम समझदार नौजवान से निम्नतर मानने लगा. अब वह अपने अंदर के आईने में अपनी जो तस्वीर देख रहा था, वह बड़ी घिनौनी थी, एक खोखले... ढोंगी... स्वार्थी... और बेरहम आदमी की तस्वीर! लेकिन फिर भी उसका अहं उसे विनम्र नहीं बनने दे रहा था. उसने बेरुखी के लहजे में पूछा, "साफ़ है कि तुम दोनों एक दूसरे से प्रेम करते थे, एक दूसरे को चाहते थे."

"वह मुझसे प्रेम करता था या नहीं, यह तो मैं नहीं जानती, मगर इतना ज़रूर जानती हूं कि मैं उससे अवश्य प्रेम करती थी... आज भी करती हूं... और जब तक जीवित हूं, करती कुछ क्षण रुककर, उसने फिर कहना शुरू किया, "साथ घूमने जाने के लिए उसे बुलाने के लिए मैं ही उसके घर जाया करती थी. वह कभी मेरे घर नहीं आया था. सिर्फ़ एक बार आया था... मरने से पहले जब मैंने आगे की पढ़ाई के लिए दूसरे शहर में जाने का निश्चय किया. तो उसे यह बात खुद बताना चाहती थी, लेकिन वह घर पर नहीं था. मैं एक पत्र में यह बात लिखकर उसकी मां के पास छोड़कर आयी थी... रात को अचानक तेज बारिश हुई. मैंने खिड़की बंद करनी चाही तो देखकर दंग रह गयी. कि माइकेल बाहर खड़ा भीग रहा था. मैंने उसे अंदर आने या घर जाने को कहा तो वह कहने लगा, 'मैं अब ज्यादा दिन जिऊंगा नहीं! तुम कहती हो तो चला जाता हूं.' एक सप्ताह बाद मुझे शहर में सूचना मिली कि वह नहीं रहा!"

वह सिसकती रही... और सिसकते हुए ही सो गयी!

उसके सोने के बाद गैब्रियल सोचने लगा... सच्चा प्रेम क्या होता है, यह मैंने अभी तक नहीं जाना, मगर ग्रेटा ने जाना और माइकेल ने जाना, जो उसकी खातिर अपने प्राणों की बलि दे बैठा. उनके उस सच्चे प्रेम के आगे... उसका अहं... उसका ज्ञान... कितना तुच्छ और महत्वहीन है. वह करुणा और प्रेम से द्रवित हो आया... □

(प्रस्तुति : हंस)

मनुष्य पानी नहीं बना सकता : तो वह उसे बेकार क्यों करे

आदिकाल से
जल और जीवन एक दूसरे के पर्याय रहे हैं
पानी बेकार न बहने दें

१. जल प्रकृति की अद्भुत देन है, इसे बेकार न करें

दिल्ली में सात लाख से अधिक पानी के घरेलू कनेक्शन हैं. यदि प्रत्येक घर में औसतन दो टूटियां भी हों, तो इसका मतलब है कि कुल १४ लाख टूटियां हैं. इनमें से यदि केवल १० प्रतिशत टूटियां ही टपक रही हों तो इसका मतलब है कि एक लाख से अधिक टूटियां टपक रही हैं. धीरे-धीरे टपकती टूटी से हर रोज़ लगभग चार गैलन पानी निकल जाता है. जिसका मतलब है कि दिल्ली में हर रोज पांच लाख गैलन से अधिक पानी बेकार जा रहा है. इसलिए टूटी की तुरन्त मरम्मत होनी चाहिए और इसकी मरम्मत बहुत आसान है. बहुत ही कम दाम में मिलने वाली वाशर से ही टूटी को टपकने से रोका जा सकता है.

२. जब घर से बाहर रहें, तो टूटी बंद होनी चाहिए

जब कभी आप टूटी खोलें और पानी न आ रहा हो तो आम तौर पर टूटी खुली रह जाती है. लेकिन कुछ देर बाद पानी आ सकता है. सोच कर देखिए कि जितनी देर आप घर से बाहर रहे और लौटने के बाद आपने टूटी बंद की, तो इतनी देर में कितना पानी बेकार चला गया होगा.

३. सार्वजनिक नल

आम जनता के इस्तेमाल के लिए लगभग ८००० सार्वजनिक नल हैं. अक्सर ही शरारती लोग इनकी टूटियां उतार कर ले जाते हैं. स्थानीय लोगों से अनुरोध है कि वे सतर्क रहें और इस तरह की कोई बात देखें तो नीचे लिखे टेलीफोन नंबर पर खबर दें.

४. घर से बाहर के टपकते नल

आम तौर पर ऐसा होता है कि घर से बाहर के टपकते नलों पर हम ध्यान नहीं देते क्योंकि उससे हमारे फर्श खराब नहीं होते और न ही रात की नींद खराब होती है. लेकिन घर के नलों के मुकाबले इन नलों से पानी का नुकसान ज्यादा होता है और अगर वह पानी किसी मुख्य पाईप लाइन से बह रहा हो तो नुकसान बहुत ही ज्यादा होगा.

५. कहां रिपोर्ट करें

यदि आपको पानी की मुख्य लाइन से या सार्वजनिक नलों आदि से कहीं पानी बेकार जाता दिखाई दे तो एक अच्छे नागरिक के नाते आप कृपया निम्नलिखित विभिन्न क्षेत्रों के नियंत्रण कक्षों को सूचित कर दें. इन नियंत्रण कक्षों के टेलीफोन नंबर हैं :—

नई दिल्ली ६४१४७४६	दक्षिण क्षेत्र ६००६४४
शहरी क्षेत्र २७९९४८	सदर पहाड़ गंज क्षेत्र ५११९७५
सिविल लाईन क्षेत्र २३२५१७	शाहदरा क्षेत्र २२८५६५१
पश्चिम क्षेत्र ५३९१४०	करोल बाग क्षेत्र ५७११२९
ग्रामीण क्षेत्र महरौली ६५०८४४	नजफगढ ५४५६४३९
नरेला ७४७२५३६	

इसके अतिरिक्त आप सीधे निम्नलिखित नम्बरों पर भी फोन कर सकते हैं.—

आवास ३०१३८७१, ३०१४२३५ कार्यालय २५१४५४४, २५१४५४५

यदि पानी बचाने के लिए आपके पास कोई सुझाव हो, तो कृपया लिखें.—

जगप्रवेश चन्द्र
मुख्य कार्यकारी पार्षद
दिल्ली प्रशासन, दिल्ली

सूचना एवं प्रचार निदेशालय, दिल्ली प्रशासन द्वारा प्रचारित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पेरिस के सारबोन विश्वविद्यालय में अमरीकी साहित्य के व्याख्याता रोजा एसेलीन्यू ने अमरीकी साहित्य में पराभौतिक चेतना नाम के अपने विचारोत्तेजक निबंध में लिखा है "अमरीकी साहित्य की एक अनूठी विशिष्टता है—उसका अनुभवातीत गुण, तर्कणावाद की अपेक्षा अंतर्बोध की उसकी पसंदगी और दैनिक जीवन तथा प्रकृति में चमत्कार की उसकी खोज. इस विशिष्टता को उन्नीसवीं सदी में एमरसन और व्हिटमैन की कृतियों में खोजा जा सकता है. और बीसवीं सदी में हेमिंग्वे, ड्रीजर और सेलिंगर आदि की कृतियों में. इन सब साहित्यकारों की रचनाओं में अंतर्ज्ञानवाद की व्यंजना पायी जाती है. अंतर्ज्ञानवाद एक मृत और विसंगत दर्शन न होकर, उर्वरक अंतर्धारा है, और अमरीकी साहित्य का एक अपरिवर्तनीय लक्षण है."

हेमिंग्वे, अप्टन सिंकलेयर, जैक लंदन, जॉन स्टीनबैक आदि अमरीकी उपन्यासकारों के बारे में एसेलीन्यू का कहना है, . वे मूलतः कवि रहे हैं और विचारों के स्थान पर अंतदृष्टि और निर्मम तर्क के स्थान पर अंतर्ज्ञान में आस्था रखते आये हैं. उनमें विस्मय का भाव है और वे एमरसन की भांति साधारण में भी असाधारण के दर्शन कर सकते हैं और प्रति क्षण जग को नयी दृष्टि से देखते हैं.

"हेमिंग्वे को कर्म में आस्था रखनेवाले ऐसे लेखक के रूप में मान्यता प्राप्त है, जो कर्म में आस्था रखने वाले पात्रों के बारे में ही लिखते हैं, पर अपनी कथाओं में वे घटनाओं से अधिक प्रभावों के बारे में चिंतित दिखाई देते हैं. 'बिग टू-हार्टेड रिवर' का कार्य-क्षेत्र बाह्य नहीं, आंतरिक है. जो कुछ घटता है, पात्र के अवचेतन में घटता है, बाहरी दुनिया में नहीं. उसका संबंध दैनिक अनुभवों से न होकर, आत्मिक अनुभवों में है. उनकी 'डैथ इन द आफ्टरनून' और 'ग्रीन हिल्स ऑफ अफ्रीका' में किसी दुर्ग्राह्य सच्चाई (जैसे जीवन और मृत्यु के अर्थ) की खोज है. हेमिंग्वे ने मार्क ट्वेन और शेरवुड एंडरसन की भांति, देशी भाषा को एक नये ढंग से विकसित और परिष्कृत कर, उसके प्रयोग की नयी संभावनाओं के द्वार खोले. इनमें पराभौतिक चेतना के प्रयोग भी सम्मिलित थे. इन प्रयोगों की प्रक्रिया के माध्यम से जगत भावपूर्ण ढंग से अवगम्य वर्तमानों का एक सिलसिला बनकर सामने आता है. ऐसे वर्तमान जिनमें समूचा दिक्काल समाविष्ट हो जाता है.

साहित्यकार जैक लंदन की प्रेतात्मा ने लेखक अप्टन सिंकलेयर से बात की

होनी अनहोनी के द्वंद्व में फंसे रहस्य रोमांच भरे जीवन प्रसंगों की इस अनूठी श्रृंखला की एक-एक कड़ी आप प्रति माह पढ़ सकेंगे...

अप्टन सिंकलेयर ऐसे विश्व-संवेदनशील अमरीकी उपन्यासकार थे, जिनके उपन्यासों में सामाजिक बुराइयों के चित्रण के अलावा, जटिल मानवीय दुर्बलताओं और कुंठाओं का बड़ा पैना चित्रण देखने को मिलता है.

एक बार उन्होंने लिखा था,

"तरुणावस्था में मुझे कई बार ऐसे अनेक आवेशों का सामना करना पड़ा जिन्हें मैं प्रेरणाओं के रूप में स्वीकार करता रहा. वे आवेश कब, कैसे और क्यों आये, मैं नहीं जानता, किंतु उनकी अनुमति एक ऐसे अदृश्य मार्गदर्शक के अचूक और सुपरिणामकारी मार्ग-दर्शन की अनुमति थी, जो मित्र के समान सहानुभूतिशील था.

"अब, वृद्धावस्था में भी जब मैं बाग में चहलकदमी कर रहा होता हूं, अपनी नयी कृति का कोई अध्याय अनायास मेरे सामने सुस्पष्ट हो जाता है. मेरे लिए यह बताना कठिन है कि यह कैसे संभव होता है, लेकिन, बड़े चमत्कारिक ढंग से हो जाता है, यह तय है.

"एक प्राचीन धार्मिक कहावत के इन शब्दों को मैंने हृदयंगम कर लिया है—'कर्म करना ही प्रार्थना करना है.' जब कभी मात्र कर्म करना मुझे अपर्याप्त लगता, मैं भगवान रूपी चरम सत्ता से प्रार्थना करता हूं, 'मुझे साहस, संकल्प, आशा और प्रेम प्रदान करो.' और, मेरी प्रार्थना सफल होती है. कैसे? एक उदाहरण देता हूं.

"चरम सत्ता के बारे में मेरी पत्नी के विचार मुझसे बहुत मिलते हैं. वह भी मानती है कि यह सारा जगत ईश्वरीय है. मेरी जीवन-संगिनी होने के अलावा, वह एक कुशल गृहणी और मेरी पांडुलिपियों की योग्य संपादिका भी थी.

"जिस तनाव में वह जी रही थी, उसके कारण उसका स्वास्थ्य अचानक खराब हो गया. तब वह 'स्व' की खोज में मुझे साथ में लेकर एक गुप्त स्थान में गयी जहां उसने आइंसटीन, एडिंगटन, जे.बी. राइन (आधुनिक परामनोविज्ञान के जन्मदाता), व्हाइटहैड, जेम्स जींस जैसे अंतर्ज्ञानवादी वैज्ञानिकों की रचनाएं पढ़ीं. इन सब सत्यशोधकों ने ईमानदारी के साथ आत्मा के रहस्यों को जानने का प्रयास किया था.

"उसने इस स्थान में रहकर प्रार्थना करने की एक बेहतर विधि का आविष्कार किया, और अपने मन को नियंत्रित रख, उसे उपयोगी कार्यों में नियोजित करने की विधि भी सीखी. अपनी संकल्प-शक्ति के बल पर उसने अपना खोया हुआ स्वास्थ्य पुनः प्राप्त किया,

"बाद में, उसे दिल का दौरा पड़ा. ऐसा दौरा, जिसे चिकित्सक अपनी भाषा में रक्त-संकलता वाला दिल का दौरा कहते

"मेरी पत्नी की मान्यता है कि मेरी प्रार्थनाओं के परिणामस्वरूप ही उसके प्राण बचे. संशयवादी कहेंगे कि मेरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रार्थनाओं को सुनकर, मेरी पत्नी में जो आत्म-विश्वास जागृत हुआ, उसी ने उसके जीवन की रक्षा की. मेरी प्रार्थनाओं से नहीं, उसके प्रति मेरे अगाध प्रेम ने ही उसे जीने और दुख सहने की शक्ति प्रदान की. संशयवादी यदि ऐसा मानते हैं तो शौक से मानें, मैं उनसे विवाद नहीं करूंगा.

अब सुनिये दूसरी सत्यकथा

''जैक लंदन, जो अमरीकी साहित्याकाश का एक चमकता सितारा था, मेरा घनिष्ठ मित्र था. उसकी त्रासद मृत्यु से पूर्व, मेरी पत्नी को, जिसने उसे कभी देखा भी नहीं था, न जाने कैसे यह पूर्व-ज्ञान हो गया था कि वह गहरे संकट में है. वह बराबर मुझसे जिक्र करती रहती थी. उसका मन बहलाने के लिए मैं उसे जैक लंदन के फार्म पर ले गया था जो हमारे घर से 500 मील की दूरी पर स्थित है.

''उसके फार्म से लौटने के बाद, एक दिन समाचारपत्रों में पढ़ने को मिला कि उसका सहसा निधन हो गया है. उसकी मृत्यु के बाद मुझे जॉर्ज स्टर्लिंग ने सूचित किया कि जैक की स्वाभाविक मृत्यु नहीं हुई थी, उसने आत्महत्या की थी.

''उसके निधन के दो दिन बाद, और उसके बाद लगातार कई हफ्तों तक हमें द कैलिफोर्निया के प्रेतात्मवादियों के फोन और पत्र आते रहे कि जैक लंदन की प्रेतात्मा मुझसे और मेरी पत्नी से संपर्क करने की बहुत इच्छुक है. मुझे यह अस्वाभाविक नहीं लगा, कारण मैं जानता था कि जैक प्रेतातमवाद में विश्वास करता था. मगर मेरी पत्नी, जो प्रेतात्मवाद में विश्वास नहीं करती थी, प्रेतात्मवादियों के संदेशों के बारे में सुनकर हंस देती थी.

''पर, इधर कुछ वर्षों से मेरी पत्नी भी अतीद्रिय-संवेदी हो गयी है. हम दोनों ने कुछ ऐसे प्रयोग किये हैं, जिनसे टेलीपेथी (दूरबोध) के अस्तित्व में हमारी आस्था काफी बढ़ गयी है.

''अनेक प्रेतात्माओं से भी मेरा संपर्क हो चुका है, लेकिन यह कहना कठिन है कि वे सचमुच मेरे दिवंगत परिजनों और मित्रों की प्रेतात्माएं थीं, या मेरे अवचेतन जीवन का कोई भाग थे, जिनका चुनाव मस्तिष्क ने मेरे स्मृति-कोश में से करके उन्हें प्रेतात्माओं का रूप दिया है. एक उपन्यासकार होने के नाते, मैं स्वयं अपने विचारों और भावों में से पात्रों का सर्जन करता हूं, जो विभिन्न देशों के पाठकों को वास्तविक लगते हैं.

''इस मामले की सच्चाई क्या है, इसका पता हमें कुछ वर्षों बाद भी लग सकता है, और कुछ सदियों बाद भी.

''मैं अब आपको आर्थर फोर्ड नामक 'मीडियम' (माध्यम) के साथ हुए एक आत्मायन में उपस्थित रहने, और प्रख्यात मनोविज्ञान प्रोफेसर मैक्डोनल्ड, मेरी पत्नी व मेरे बीच हुई एक परिचर्चा के सुनने के लिए आमंत्रित करता हूं. आत्मायन चूंकि एक घंटे तक चला, इसलिए मैं उसके बारे में तथा परिचर्चा के, जो तीन घंटों तक चली, बारे में सब कुछ तो नहीं बता सकता, परंतु उसका सार अवश्य प्रस्तुत कर सकता हूं. प्रोफेसर मैक्डोनल्ड का, जो इस लेख को पढ़ चुके हैं, कहना है कि उनकी यादगार के मुताबिक, जो कुछ घटा था, उसका सही वर्णन ही मैंने किया है.

''इस आत्मायन की शुरुआत लॉस एंजलीस के 'पीपुल्स स्प्रीच्युएलिस्ट चर्च' के एक कमरे में 16 जुलाई 1930 को दोपहर को तीन बजे हुई. थी. मेरे पास ऐसे पांच मित्रों के पत्र थे, जिनका निधन हो चुका था. ये मित्र थे— जैक लंदन, जॉर्ज स्टर्लिंग. जॉर्ज ब्रांदेस, यूजिन डेब्स और सर आर्थर कॉनन डायल. इनमें से प्रत्येक पत्र को मैंने हरे रंग के एक कागज में बंद करके, एक बड़े लिफाफे में बंद कर दिया था. प्रोफेसर और मेरी पत्नी ने अच्छी तरह जांचकर देख लिया था कि लिफाफे अच्छी तरह बंद हैं. पहले मैं लिफाफों को गड्डमड्ड रखना चाहता था, लेकिन बाद में सही पहचान के लिए मैंने उन पर पैंसिल से नंबर लिख दिये थे.

''फोर्ड 34 वर्ष के स्नातक हैं. वे एक दिलचस्प वक्ता हैं और घंटों श्रोताओं को मंत्रमुग्ध रख सकते हैं. उन्होंने हम सबको बताया कि वे अपना श्रेष्ठतम कार्य या प्रदर्शन भाव-समाधि की अवस्था में ही कर सकते हैं, और उस दौरान उन पर उनके कनाडावासी बालमित्र फ्लैचर की प्रेतात्मा हावी हो जाती है. उन्होंने हमसे कहा, ''भले ही हमने फ्लैचर को न देखा हो और उसके अस्तित्व में भी विश्वास न करते हों, पर हमें यह विश्वास कर लेना चाहिए कि वे एक वास्तविक व्यक्ति थे

''जब हम इस 'छल' के लिए तैयार हो गये. तो फोर्ड ने अपनी आंखों पर रूमाल बांध लिया और जोर-जोर से सांस लेने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगे. शीघ्र ही, वे भाव-समाधि की अवस्था में आ गये."

"सहसा, वे कनाडा में रहने वाले फ्रांसीसियों के लहज़े में (वे फ्लैचर के लहज़े में बोलेंगे, ऐसा उन्होंने हमें पहले ही बता दिया था) कहने लगे, 'हार्डविक या ऐसे ही किसी नाम वाली एक वृद्धा की आत्मा यहां आयी है. सॉरी, उसका सही नाम हार्डेन है. तुम उसे नहीं जानते, अप्टन, मगर वह तुम्हें जानती है.' तब, मुझे याद आया, मेरी नानी का नाम हार्डेन था.

"इसके बाद 'फ्लैचर' ने प्रोफेसर से कहा, 'मैं रेबैका नाम की एक आत्मा को देख रहा हूं. वह आपको 'विली' कह रही है.' जवाब में प्रोफेसर ने कहा, 'एकदम सही. वे मेरी मां हैं.' बाद में प्रोफेसर ने मुझसे कहा, 'इन दोनों नामों को सुनकर मुझे विशेष आश्चर्य नहीं हुआ. 'माध्यम' या कोई भी व्यक्ति 'हू इज़ हू' में हमारे विवरण पढ़कर ये नाम जान सकता था.'

"लेकिन, जब हमने 'हू इज हू' के सफे पलटे तो हम यह देखकर दंग रह गये कि उनमें ये दो नाम नहीं दिये गये थे. इतना ही नहीं, किसी भी नये या पुराने संदर्भग्रंथ में ये नाम नहीं थे."

मेरी पत्नी मेरी क्रेग सिंकलेयर से मुखातिब होकर 'फ्लैचर' ने पूछा, 'यह फोबे कौन हैं? उसके पिता की आत्मा उसे बुला रही है.' मेरी पत्नी ने कहा, 'मैं ही फोबे हूं. मेरे पिता बचपन में मुझे इसी प्रकार के नाम से बुलाया करते थे

"इस भूमिका के बाद, 'माध्यम' फ्लैचर ने मुझसे कहा, 'मेरे सामने एक व्यक्ति की आत्मा है. वह मुझसे कह रही है कि जीवितावस्था में वह आपका घनिष्ठ मित्र था. वह आदमी लेखन की बात भी करता है. अपना पूरा नाम जैक लंदन बताता है. क्या आप उसे जानते हैं?'

'हां, मैं उसे जानता था. जैक लंदन मेरा घनिष्ठ मित्र था.'

'वह आपको प्यार से 'ठप्पी' कहा करता था. उसका कहना है कि आप उसका एक पत्र लेकर यहां आये हैं.'

'दोनों ही बातें सही हैं.'

'उसका पत्र मुझे दे दो.'

'वह इन पांच सील बंद लिफाफों में से एक में है.'

'मुझे सब लिफाफे दे दो.'

'मैंने उसे सब लिफाफे दे दिये. उन लिफाफों को काफी देर तक उलटने-पलटने के बाद, उसने एक लिफाफा अलग रख दिया.

"जिन पांच परिचितों के पत्र लेकर मैं आत्मायन में भाग लेने के लिए आया था, उनके नाम बोलकर 'माध्यम' ने मुझसे कहा, 'ये पांचों मेरे सामने मौजूद हैं. पर, इनमें से जैक लंदन आपके सबसे अधिक निकट है. जैक अपनी पुत्री को लेकर काफी चिंतित है.'

"उन दिनों जैक की पुत्री के तलाक को लेकर पत्रों में काफी भद्दा और अप्रिय प्रचार हो रहा था. किंतु, चैत्यलोक में रहने वाले जैक को उस बारे में कैसे पता चला, मैं सोच रहा था. उसकी चिंता का यही कारण हो सकता था, मेरी समझ से.

'क्या आप बता सकते हैं कि जैक ने अपने उस पत्र में, जो मैं साथ ले कर आया था, मुझे क्या लिखा था?' मैंने 'माध्यम' फ्लैचर से पूछा.

'इस संक्षिप्त से पत्र में एक ऐसी योजना का जिक्र है, जो अभी तक अपूर्ण है. उसने अपनी खुशहाली का उल्लेख भी किया है.'

"बात काफी हद तक सही थी. पत्र में लंदन ने लिखा था कि मेरे नये उपन्यास की एक प्रति खरीदने के बाद उसका भाग्य बदला है. उसने पत्र एक अधूरी समुद्री-यात्रा के दौरान लिखा था.

"'फ्लैचर' ने यूजीन डेब्स, सर ऑर्थर कॉनन डायल, जॉर्ज स्टर्लिंग, और जॉर्ज, ब्रांदेस के पत्रों के बारे में भी जो सूचनाएं दीं, वे भी काफी हद तक सही थीं. डेब्स ने अपने पत्र में इस अफवाह पर खेद व्यक्त किया था कि मैंने अपना उपन्यास 'द जंगल' किसी को बेच दिया है. सर ऑर्थर कॉनन डायल ने अपने पत्र द्वारा सूचित किया था कि वे मेरी कृति 'मैंटल रेडियो' के लिए प्रकाशक खोजने में असमर्थ हैं. मगर, एक संस्था उसके कुछ अंश प्रकाशित करने को तैयार है. ब्रांदेस का नाम 'माध्यम' को ठीक नहीं मालूम हो सका, किंतु उसके कार्ड में जो कुछ लिखा था, वह उसने सही बता दिया. स्कैंडिनेविया से लिखे इस कार्ड में मेरी एक पुस्तक की प्रति प्राप्त होने पर उसने लिखा था, 'धन्यवाद! मुझे एक ऐसे लेखक का हस्तलेख देखने को मिला है, जिसका मैं अर्से से प्रशंसक रहा हूं.' जॉर्ज स्टर्लिंग के पत्र में क्या था, यह भी काफी हद तक 'माध्यम' ने सही बताया.

"प्रोफेसर से काफी देर तक बातें करने के बाद, 'माध्यम' फिर मेरी ओर मुड़ा और दुबारा जैक लंदन के बारे में बात करने लगा. मैंने उसके माध्यम से जैक से कुछ प्रश्न पूछे. प्रश्नोत्तर इस प्रकार चले, "तुम्हारी मृत्यु कैसे हुई, जैक?"

"तुम जानते ही हो. जीवन में कभी-कभी ऐसे क्षण आ जाते हैं कि उसके बाद आगे जीने को मन नहीं करता."

"तुम पृथ्वी के अपने मित्रों से कुछ कहना चाहोगे?"

"यही कि मैं यहां चैत्यलोक में बहुत खुश हूं."

"क्या तुम अपने अंतिम विवाह से दुखी और संतुष्ट थे?"

"मेरी अंतिम पत्नी सरल स्वभाव की थी. यदि वह तुम्हारी पत्नी मेरी की भांति व्यावहारिक भी होती तो हमारा विवाह सफल होता.

'मेरी पत्नी को पता था कि तुम आत्महत्या करने वाले हो. उसने कई बार मुझस यह बात कही थी, लेकिन मैंने उस पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया.'

'अच्छा! तो, फिर उसने मुझे क्यों नहीं बताया. खैर, जो हुआ, वह हुआ. अब मुझे किसी बात का कोई पश्चाताप् नहीं है.'

'तुम अपनी पत्नी से कुछ कहना चाहोगे?'

'उससे मेरा प्रेम कहना. मुझे खुशी है कि वह सुख से है.'

'सहसा 'माध्यम फ्लैचर' ने मुझसे कहा, मैं थक गया हूं.'

'फोर्ड जैसे किसी गहरी नींद से जागा, और पूछने लगा, 'मेरा सर चक्कर खा रहा है. इस बीच क्या हुआ, मुझे कुछ पता नहीं. वैसे, क्या परिणाम निकले?'

'परिणाम संतोषजनक ही रहे.' हम सबने कहा और उसे धन्यवाद देकर उससे विदा ली.

"बाद में मैंने प्रोफेसर से पूछा, 'इस आत्मायन के बारे में आपका खरा मत क्या है?'

उन्होंने कहा, "मुझे तो इस आत्मायन में सच्चे दूर-संवेदन की शक्ति के दर्शन हुए. लगा कि लौकिक शक्तियों के अलावा अलौकिक शक्तियां भी हैं, जिनके बारे में हम अधिक नहीं जानते.'

"मैं अपने मित्र के, जो एक विश्वविख्यात प्रामाणिक मनोवैज्ञानिक हैं, इस मत से पूरी तरह सहमत हूं." □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रवींद्रनाथ और नलिनी

इंग्लैंड जाने से पूर्व रवींद्रनाथ कुछ दिन तक बंबई में रुके थे. उनके बड़े भाई सत्येंद्रनाथ ने उनके रहने की व्यवस्था तर्खडकार नाम के एक ऐसे परिवार में की थी जिसके सभी सदस्य इंग्लैंड में प्रचलित शिष्टाचारों से भली भांति परिचित थे. सत्येंद्रनाथ को आशा थी कि इस परिवार के साथ कुछ दिन रहकर, रवि अंग्रेजी बोलना तो सीख जायेगा, उसका परिचय अंग्रेजी संस्कारों से भी हो जायेगा.

इस परिवार में अन्नपूर्णा नाम की एक रूपवती तथा प्रगल्भ किशोरी भी रहती थी, जिसे तर्खडकार परिवार के सदस्य प्यार से 'अना' कहकर पुकारते थे. वह मराठी के प्रख्यात 'व्याकरणकार' दादोबा पांडुरंग के भाई डॉक्टर आत्माराम पांडुरंग की पुत्री थी. वह श्रीमती मिचेल नाम की एक मिशनरी महिला से प्रशिक्षण प्राप्त कर तथा इंग्लैंड में कुछ समय रहकर वहां के संस्कारों से सुपरिचित होकर पाश्चात्य रंग में रंग चुकी थी.

रवींद्रनाथ ने आगे चलकर अना नाम की इस किशोरी को 'आह्लादिका' कहा था. वे इस बात से चकित रह गये थे कि इस किशोरी ने उनके जीवन में प्रवेश करते ही उन्हें अपने सर्वस्व का दान करना चाहा था. यद्यपि किशोर कवि ने अपनी इस किशोरी प्रेमिका के प्रेम को पूर्णतः स्वीकार नहीं किया तथापि अपने जीवन के इस प्रथम प्रेम की मधुर स्मृति उनके मन में सदा छायी रही. इस मधुर स्मृति को उन्होंने आगे चलकर इन शब्दों में व्यक्त किया था, "अना के स्वभाव में चारुता, रसिकता व आकर्षकता का बड़ा ही सुंदर संगम था. एक ही शब्द में उसका वर्णन करना चाहूं, तो मैं उसे 'आह्लादिका' कहना पसद करूंगा."

नटखट अना प्रथम दर्शन में ही रवींद्रनाथ से प्रेम करने लगी थी. अपने इस प्रेम की अभिव्यक्ति भी उसने बड़े ही खुले दिल और खिजानेवाले नटखटपन से की थी किंतु संकोची स्वभाव के रवींद्रनाथ में उस मदमाते प्रेम का प्रतिदान करने का साहस कभी नहीं जागा.

प्रथम भेंट पर अपनी शिक्षा-दीक्षा के प्रति आवश्यकता से अधिक सचेत और लज्जाशील रवींद्रनाथ ने अना को अपना परिचय इस प्रकार दिया, "मेरी शिक्षा-दीक्षा और तुम्हारी शिक्षा-दीक्षा में बहुत अंतर दिखायी पड़ता है. फिर, परिचय के योग्य कोई विशिष्टता भी मुझमें नहीं है. मैं थोड़ी बहुत कविता कर लेता हूं. बस यही मेरी एकमात्र योग्यता व धरोहर है."

रवींद्र के मुंह से यह भोलाभाला आत्म-परिचय सुनकर अना बहुत हंसी, और नटखट स्वर में बोली, "अच्छा! तो आप कवि हैं. बहुत अच्छे! मुझे अपना नाम-अन्नपूर्णा बहुत साधारण लगता है, कविवर! काश!आप इसके स्थान पर कोई प्यारा-सा, रसभरा नाम मेरे लिये सोच सकते!"

"नलिनी! कैसा लगा यह नाम?" रवींद्रनाथ को अना के लिये रसीला नाम सोचने में तनिक भी देर नहीं लगी.

अना को यह नाम भाया, यह जानकर रवींद्रनाथ हर्षित हो उठे. उसने नाम की प्रशंसा करते हुए कहा, "नाम वास्तव में सुंदर है. अब एक काम और करो, कवि! इस सुंदर नाम को एक गीत में गूंथकर वह गीत मुझे सुनाओ. गीत लिखने में विलंब हो, तो मैं जब कहो, सुनने के लिये आ जाऊंगी."

"विलंब नहीं होगा," मुस्कराकर, किशोर कवि ने कहा. वे एक कागज पर गीत लिखने लगे, जो देखते ही देखते, पूरा भी हो गया. अना के आग्रह पर रवींद्र ने उसे पढ़कर सुनाया.

इस गीत के माध्यम से अना ने जैसे अपने को पूरी तरह खोकर, दुबारा नये ढंग से पाया. मन से तो वह अपने और रवींद्रनाथ के बीच की सब दूरियां समाप्त कर ही चुकी थी, पर अब शारीरिक दृष्टि से भी उनके और निकट आने की इच्छुक हो गयी. वह कोई न कोई बहाना ढूंढकर, रवींद्रनाथ के पास आ जाती और मधुर मुस्कान तथा स्नेहपूर्ण वाणी से उनका मन बहलाती.

उन दिनों की मीठी याद को रवींद्रनाथ ने आगे चलकर 'फ़राली दू दिन' (वे दिन समाप्त हुए) नामक कविता में, जो श्री दिक्शून्य भट्टाचार्य के कल्पित नाम से 'भारती' पत्रिका में प्रकाशित हुई थी, अभिव्यंजित किया है. इस कविता में वे कहते हैं, "विदेशी परिवेश के संबंध में आशंकित रहने के बावजूद, मैंने दो दिन, मानो पर्वत के ऐसे टीले पर बिताये जो हरित तृणों से आच्छादित था और मेरे लिये सौभाग्यशाली पुष्पों से लदा था. यहां मैंने झरनों के दर्शन किये, संध्या की कोमल किरणों में यात्रा की, इंद्रधनुषों की रचना कर, उसके आलोक में मुक्त रूप से क्रीड़ा की थी और निर्मल चांदनी में सैर की थी, कितने सुंदर थे, वे कुछ दिन!"

और, अना उन्हें कैसे आनंदित रखती थी, इसका वर्णन भी स्वयं उन्हीं के शब्दों में सुनिये, "वह मेरे को रिझाने के नये-नये उपायों की खोज करने में बहुत कुशल थी. चुपचाप पीछे से आकर, मेरी आंखें मूंद लेती थी और अपनी शरारतों से मुझे बरबस हंसना तो जैसे उसके लिये खेल ही बन गया था. उसका प्रयास रहता था कि मेरे मन पर कभी अवसाद का कुहरा न छा पाये. मुझे अपने परिवार के लोगों की याद न आ पाये."

जिन दिनों रवींद्रनाथ अना के आनंदमयी सान्निध्य में बंबई में अपने दिन बिता रहे थे, उन्हीं दिनों उनकी 'कवि काहिनी' (कवि की कहानी) धारावाहिक रूप से 'भारती' पत्रिका में प्रकाशित हो रही थी. वे उसका अनुवाद अना को सुनाते और उसके साथ साहित्यिक चर्चा भी करते. उनके साथ बात करते-करते अना ने थोड़ी बहुत बंगला बोलनी सीख ली थी.

'कवि काहिनी' जब पुस्तक रूप में प्रकाशित हुई तो ज्योतिरिंद्रनाथ ने, रवींद्रनाथ के कहने पर उसकी एक प्रति अना को भेजी थी. उस समय अना क्षयरोग से ग्रस्त थी, फिर भी उसने एक पत्र द्वारा इस भेंट के लिये ज्योतिरिंद्रनाथ को धन्यवाद दिया था.

इस पत्र को भेजने के कुछ दिन बाद ही वह चल बसी थी. पर उसका प्रेम, जो रवींद्रनाथ के जीवन का प्रथम प्रेम था, उनके लिये सदा कृतज्ञता व आदर का पात्र बना रहा.

उन 'मदमाते, मंदिर और मधु-अंध' दिनों की याद उन्हें बार-बार अनेक रूपों में आती रही. किशोरावस्था के इस प्रेम के मधुर बंधन से वे कभी मुक्त नहीं हो पाये. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपराध कैसे, कब और क्यों हो जाते हैं? क्या आदमी स्वभावतः अपराधी होता है? प्रस्तुत है प्रति माह प्रकाशित होने वाली सच्ची अपराध-कथाओं के सिलसिले की पहली कड़ी...

जब 'बंबई गोविंदन' ने 17 लाख के ज़ेवर लूटे

गंगाधर शिंदे

बंबई के एक नामी आभूषण-विक्रेता की दूकान से चोरी गये 17 लाख से अधिक के आभूषणों का पता लगाने और एक अन्य आभूषण-विक्रेता के उकसाने पर चोरी करने वाले दुःसाहसी चोरों को पकड़ने में पुलिस को ज्यादा वक्त नहीं लगा.

बंबई के गिरगांव इलाके में, ठाकुरद्वार नाके पर स्थित 'वामन हरी पेठे' नाम की दूकान आभूषणों की एक पुरानी और विश्वसनीय दूकान है. यह दूकान 'पेठे बिल्डिंग' के नीचे की मंजिल में स्थित है. ऊपर की मंजिलों पर पेठे-परिवार के सदस्य तथा भागीदार व कर्मचारी आदि रहते हैं.

15 अगस्त, 1980 का दिन. सारा राष्ट्र बड़े उत्साह से अपना तेतीसवां स्वाधीनता दिवस मना रहा था. गिरगांव इलाके में भी यह उत्साह अनेक स्थानों पर दिखाई देता था. इलाके के नागरिकों ने इस अवसर पर अनेक कार्यक्रमों का आयोजन किया था जो रात को देर तक चलते रहे थे.

16 अगस्त, शनिवार की सुबह को पेठे-परिवार के वरिष्ठ सदस्य श्री सूर्यकांत रघुनाथ पेठे दूकान की चाबियों का गुच्छा हाथ में लेकर दूकान खोलने के लिए नीचे आये. उन्होंने दूकान के उत्तरी भाग का दरवाजा खोला और अंदर प्रवेश किया. मगर अंदर प्रवेश करते ही उनकी आंखें खुली की खुली रह गयीं. और दिल ज़ोर ज़ोर से धड़कने लगा. वे जो देख रहे थे, उस पर उन्हें विश्वास नहीं हो रहा था... आभूषणों के खुले और खाली शोकेस फर्श पर पड़े थे. तभी उनके भाई चंद्रकांत पेठे भी दूकान में आ गये. दोनों ही दूकान की परिस्थिति देकर चकित-स्तब्ध थे, किंकर्तव्य विमूढ़ स्थिति में. जब वे कुछ क्षण बाद, उस मनःस्थिति से उबरे तो उन्होंने निकटतम पुलिस-स्टेशन, विठ्ठलभाई पटेल रोड पुलिस थाने से संपर्क किया और वहां के वरिष्ठ पुलिस-अधिकारियों—श्री प्रभाकर खोत व श्री रमाकांत सिंह— को इस चोरी की सूचना दी. दोनों सूचना मिलते ही एक अन्य पुलिस-अधिकारी श्री सुभाष साल्वी को लेकर, शीघ्र ही घटना-स्थल पर पहुंच गये. दोनों भाइयों ने प्रारंभ में जो अनुमान लगाया था, उसके अनुसार 8 से 10 लाख तक मूल्य के आभूषणों की चोरी हुई थी. बाद में, जब सूक्ष्मता से ब्यौरेवार अनुमान लगाया गया तो पता चला कि नुकसान सत्रह लाख के करीब का था.

मैं उन दिनों वृहत्तर बंबई पुलिस की अपराध-अन्वेषण-विभाग की 'अपराध-प्रकटीकरण-शाखा' में सब-इंसपैक्टर था. उन दिनों बंबई के पुलिस कमिश्नर श्री मधुसूदन कसबेकर थे. वे वामन हरि पेठे जैसे पुराने और प्रतिष्ठित आभूषण-विक्रेता की दूकान से 8-10 लाख रुपये मूल्य के आभूषणों की चोरी की घटना से काफी चिंतित थे. उन्होंने हमारी शाखा को आदेश दिया कि वह इस मामले की समांतर जांच करे. परिणाम-स्वरूप सहायक आयुक्त श्री रणवीर लिखा, ज्येष्ठ पुलिस निरीक्षक श्री सदानंद परब, पुलिस-निरीक्षक श्री प्रभाकर सावंत और मैं घटनास्थल पर रवाना हुए. जब हम वहां पहुंचे तब श्री प्रभाकर खोत व श्री रमाकांत सिंह अपराध-स्थल का पंचनामा करने में व्यस्त थे. पुलिस फोटोग्राफर श्री काये, तथा उंगली-छाप-विशेषज्ञ श्री नारकर भी अपना-अपना काम कर रहे थे. पुलिस का सूंघकर अपराधी की टोह देने वाला प्रशिक्षित कुत्ता 'प्रिंस' भी प्रतीक्षा में था कि उसे कब खोज-कार्य में प्रवृत्त किया जाता है.

दूकान के बीचोबीच दीवार से लगा अतिथि-कक्ष था, जहां सोफा-सेट दिखाई दिया और उसके साथ ही दिखाई दिये प्लाईवुड के टुकड़े और आभूषणों की एक खाली पेटी. दूकान में एक ओर एक लोहे की अल्मारी फर्श पर पड़ी थी. उसका हैंडिल टेढ़ा दिखाई पड़ रहा था जिससे ज़ाहिर था कि चोरों ने उसे खोलने का भीषण प्रयत्न किया था.

पेठे बिल्डिंग और उसके दक्षिण में स्थित सरस्वती बिल्डिंग के बीच में एक नाली बहती थी. वहां जाने पर हमने देखा कि दोनों बिल्डिंगों की बाहर की दीवारों को जगह-जगह से तोड़कर, उनमें अंदर जाने के लिए छेद बनाये गये थे. सोफा सेट के नीचे जो छेद थे, वे पंद्रह इंच से लेकर 8-10 इंच तक चौड़े थे. सेंध मारने के लिए चोरों ने यह स्थान सोच-समझ कर ही चुना होगा.

विठ्ठलभाई पटेल रोड पुलिस स्टेशन ने इस चोरी की रपट अपने रजिस्टर में क्रमांक 558170 के साथ भा.द.वि. की 454, 457 और 380 की धाराओं के अंतर्गत दर्ज की.

इस चोरी से कुछ समय पूर्व, बंबई के दो उपनगरों— दादर और बांद्रा— में क्रमशः अमृतलाल ब्रदर्स और जवाहरातों की एक दूकान में भी चोरी हो चुकी थी. लेकिन, इन दो स्थानों पर चोरों ने चोरी करने के जो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तरीके अपनाये थे, वे एक दूसरे से और इस चोरी में अपनाये गये तरीके से बिलकुल अलग थे. श्री लिखा, मैं और हमारे विभाग के श्री सहस्रबुद्धे इन तीनों मामलों की जांच से भी जुड़े हुए थे, और इन सब तरीकों से परिचित थे.

हमारे दल के सभी सदस्यों और विशेष रूप से मुझे पूरी आशा थी कि हम पेठे-दूकान से आभूषणों की चोरी का पता लगाने में अवश्य सफल होंगे, कारण हमें ऐसी चोरियों के चोरों को पकड़ने का पर्याप्त अनुभव था. मद्रास, बंगलूर, दिल्ली, कलकत्ता, आगरा आदि नगरों में जाकर हमने ऐसी चोरियां करने वाले अनेक चोरों का पता लगाया था. दादर में अमृतलाल ब्रदर्स की दूकान पर जो चोरी हुई थी, उसमें एक आरोपी को पकड़ने तथा चोरी का काफी माल उससे प्राप्त करने में भी हमें सफलता मिली थी.

मगर, पेठे के मामले में बंबई पुलिस को चोरों के अड्डे में पहली सेंध मारने का अवसर 2 अक्तूबर, 1981 को ही मिला, और वह भी बड़े अप्रत्याशित ढंग से.

सुबह के साढ़े छह बजे थे. लोकमान्य तिलक पुलिस थाने के सब-इंसपैक्टर श्री शिरोडकर अपने सहायकों के साथ गश्त पर थे कि महर्षि कर्वे रोड पर उन्होंने 24 वर्ष के एक युवक को संदेहास्पद स्थिति में घूमते हुए पाया. उन्होंने उसे पकड़कर उससे प्रश्न पूछने आरंभ कर दिये. उसने अपना नाम बताया— कन्नन आरोमगम. जब वह अन्य प्रश्नों के उत्तर संतोषजनक ढंग से नहीं दे सका, तो उसे थाने में लाया गया. वहां अपराध-प्रकटीकरण-शाखा के अनुभव प्राप्त श्री यशवंत जरठे ज्येष्ठ पुलिस-निरीक्षक के रूप में काम कर रहे थे. वे पेठे-मामले की जांच से भी जुड़े थे. कन्नन को देखकर उन्हें संशय हुआ कि पेठे की दूकान की चोरी के मामले में इस युवक का हाथ होना चाहिए. जब इस संशय की सूचना पुलिस-कमिश्नर श्री कसबेकर को दी गयी, तो उन्होंने कन्नन को अपराध-अन्वेषण-विभाग के सुपुर्द करने का आदेश दिया. 5 अक्तूबर 1981 को मैंने कन्नन से व्यापक पूछताछ आरंभ की. इस पूछताछ के परिणामस्वरूप, जो तथ्य सामने आये, वे इस प्रकार थे :

कन्नन व राजू उर्फ गोविंदराज इन दोनों किशोरों को 1968 में ज्यूवेनाईल कोर्ट, उमरखाड़ी कोर्ट के आदेशानुसार, सूसन डेविड इंडस्ट्रियल स्कूल, मांटुगा के सुधारगृह में भेजा गया था. लेकिन, इस सुधारगृह में रहकर भी वे अपने जीवन में कोई सुधार न ला सके थे. 1974 में दोनों को नासिक जेल की हवा खानी पड़ी. लेकिन, जेल से छूटने पर दोनों अपने-अपने रास्तों पर चले गये. 13 अगस्त, 1980 को दोनों की भेंट अचानक महर्षि कर्वे रोड पर स्थित सार्वजनिक मूत्रालय के निकट हुई. पेठे की दूकान में चोरी करने की योजना इसी मुलाकात के दौरान बनी. या, यह कहना ज्यादा ठीक होगा कि राजू ने अपनी इस पूर्व-निर्धारित योजना में कन्नन को सम्मिलित करने की योजना इस मुलाकात के दौरान बनी.

इस योजना के अनुसार, दोनों एक पूर्व-निश्चित स्थान पर, 15 अगस्त, 1980 को रात के दस बजे मिले. दोनों ने दक्षिण भारतीयों की सी पोशाक पहन रखी थी. दोनों के कंधों पर ऐसे बोरे थे, जो सड़क से फालतू कागज बगैरह चीजों को जमा करने वाले लोग अपने साथ रखते हैं. मरीन ड्राइव से पैदल चलते-चलते वे चर्नी रोड स्टेशन के पुल को पार कर ठाकुरद्वार के नाके पर, जहां पेठे की दूकान थी, आये. उस समय रात के ग्यारह बजे थे. उस इलाके में, उस समय स्वाधीनता-दिवस के कई कार्यक्रम बड़ी धूमधाम से मनाये जा रहे थे. कई लाउडस्पीकरों से आती हुई गानों की आवाज ने वातावरण में फैले शोर को और ज्यादा बढ़ा दिया था. सेंध मारकर, चुपचाप किसी इमारत में प्रवेश करने के लिए 'आदर्श वातावरण' था.

पेठे बिल्डिंग और उसके पास की सरस्वती बिल्डिंग के बीच की नाली में प्रवेश करके दोनों ने पाया कि नाली इतनी संकरी है कि उसमें एक बार में एक आदमी ही चल सकता है और मोटे पाइपों की वजह से उस एक आदमी को भी अपने को काफी संभालकर चलना पड़ेगा. उनकी किस्मत से नाली में घुप्प अंधेरा था क्योंकि दोनों इमारतों की बत्तियां बुझ चुकी थीं.

पेठे की दूकान में सेंध लगाने का काम राजू ने किया. जब दूकान में प्रवेश करने लायक छेद बन गया तो राजू ने कन्नन से दूकान के अंदर जाने को कहा.

टॉर्च के प्रकाश में कन्नन ने जब सोने-चांदी के चमकीले ज़ेवरों से भरी दूकान के दर्शन किये, तो उसकी आंखें चकाचौंध हो आयीं. मगर इन ज़ेवरों को पाने में एक कठिनाई थी. वे जिन शोकेसों में बंद थे, उन पर ताले लगे हुए थे. कन्नन ने सोफे के पास आकर इस समस्या के बारे में राजू को बताया. राजू ने उससे कहा कि वह शोकेस तोड़कर उनमें से ज़ेवर निकाल ले. शोकेस तोड़कर ज़ेवर वह उस मोटे कपड़े में रखने लगा, जो राजू ने उसे दिया था. जब वह भर जाता, तो वह कपड़े में गांठ बांधकर राजू को दे देता. राजू ज़ेवरों को **बोरों के हवाले करता और खाली कपड़ा** कन्नन को दे देता. यह क्रम ढाई-तीन घंटे तक चलता रहा अर्थात् तीन बजे तक. तब तक शोकेस आभूषणों से खाली हो चुके थे.

जब कन्नन दूकान से बाहर आया तो उसने देखा कि राजू ने सारे ज़ेवर एक ही

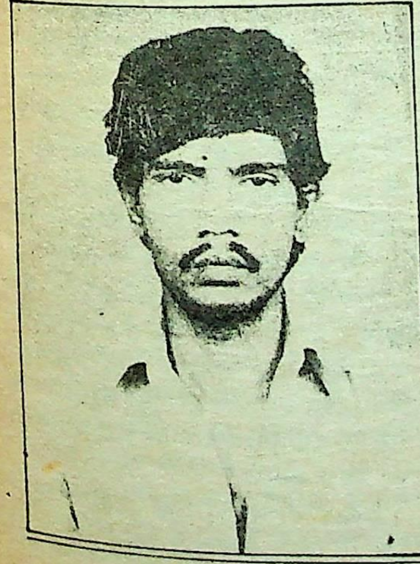

अभियुक्त कन्नन

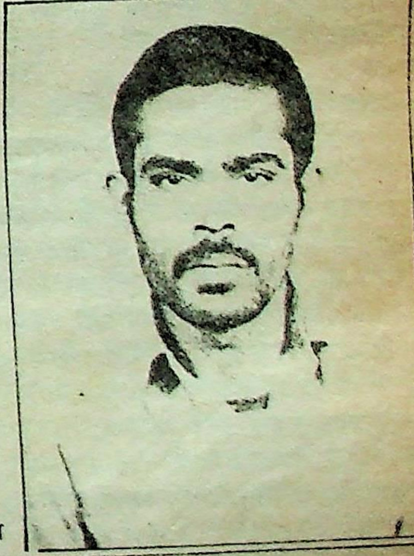

बंबई गोविंदन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बोरे में भर दिये हैं, जिससे बोरा बहुत ज्यादा भारी हो गया है. उसने राजू से कहा कि वह आधे ज़ेवर दूसरे बोरे में रख दे, मगर राजू ने उसकी बात न मानी. इतना ही नहीं, उसने कन्नन की तलाशी लेकर वे ज़ेवर भी अपने बोरे के हवाले कर दिये जो उसने अपने कपड़ों में छिपा लिये थे. कन्नन समझ गया कि ज़ेवर का बोरा खुद राजू ही उठायेगा और उसे किसी ज़ेवर के हाथ भी नहीं लगाने देगा. उसका काम जो हो गया है. वह काफी निराश था.

दोनों चर्नी रोड स्टेशन पर आये, और बोरिवली जाने वाली एक लोकल में सवार हुए. सुबह का वक्त था, और सारा डिब्बा खाली पड़ा था. राजू ने ज़ेवरों से भरा एक बोरा एक सीट के नीचे रखकर, कन्नन को उस सीट पर बैठने को कहा, और खुद एक दरवाजे पर आकर खड़ा हो गया.

माहिम स्टेशन पर दोनों उतरे. ज़ेवरों की बोरी राजू ने अपने कंधों पर ही रखी, कन्नन को उसने कागजों की ही बोरी उठाने को दी. प्लेटफार्म पर प्रायः 42 वर्ष आयु का एक आदमी, जो कन्नन को मारवाड़ी जैसा लगा, खड़ा था. राजू को देखते ही वह उसके पास आया, और तीनों एक साथ माहिम स्टेशन से बाहर आये. बाहर सेनापति बापट मार्ग पर एक टैक्सी खड़ी थी. इन तीनों को देखकर टैक्सी ड्राइवर टैक्सी से बाहर आया, और डिकी खोलकर ज़ेवरों की बोरी राजू से लेकर उसमें रख दी. मारवाड़ी टैक्सी-ड्राइवर के पास बैठा, और कन्नन और राजू पीछे. राजू ने जेब से कुछ ज़ेवर निकालकर उन्हें दिखाये और कहा, "सारे ज़ेवर करीब सात लाख के होंगे." मारवाड़ी चुप रहा.

टैक्सी तेजी से दौड़ने लगी, और वकोला होती हुई कुर्ला आयी.

जब कुर्ला पाइप लाइन खत्म हो गयी तो टैक्सी-ड्राइवर ने एक बिजली के खंभे के पास टैक्सी रोकी. राजू टैक्सी से बाहर आया और उसने एकांत में टैक्सी ड्राइवर और मारवाड़ी जैसे आदमी से कुछ बातें कीं. इसके बाद, राजू ने कन्नन को टैक्सी से बाहर बुलाया और कहा, "तुमने पेठे की दूकान से जो छह हजार रुपये नगद लिये थे, वह ले लो और अभी कुछ देर बाद तुम्हें दस हजार और मिल जायेंगे. इस रकम को लेकर आज ही मद्रास के लिए रवाना हो जाओ और फिर कभी बंबई न आना."

आधे घंटे के अंदर दस हजार के नोटों की गड्डियां कन्नन को मिल गयीं. सोलह हजारी की नगद राशि के अलावा, उसने कुछ ज़ेवर भी बोरे में से निकालकर, कपड़ों में छिपा लिये थे जिनके बारे में राजू को पता न था. उसे खुद मद्रास जाने की जल्दी थी, लेकिन मद्रास जाने से पूर्व वह प्रिन्सेस स्ट्रीट के फ्लाई ओवर के नीचे रहने वाले अपने पुराने साथियों को बासमती चावल और मटन की शानदार पार्टी देना न भूला. उनसे विदा लेते समय वह उन्हें कुछ ज़ेवर भी उपहार में देना न भूला. बाद में, कन्नन के कहने पर वरिष्ठ पुलिस निरीक्षक श्री यशवंत तरटे ने ये ज़ेवर इन लोगों के पास से प्राप्त किये.

यह पूछे जाने पर कि राजू उसे पिछली बार कब मिला था, उसने कहा, "कुर्ला में ही आखिरी मुलाकात हुई थी, जब उसने मुझे सोलह हजार रुपये दिलवाये थे."

अब बंबई की पुलिस राजू के अलावा उस मारवाड़ी को भी खोजने में लग गयी. जिसे राजू ने ज़ेवर सौंपे थे. कुर्ला में जिन जिन मारवाड़ियों की आभूषणों की दूकानें थीं, वहां कन्नन को ले जाया गया, लेकिन उस मारवाड़ी का, जिसे कन्नन ने देखा था कहीं पता न लगा. अन्य स्रोतों के माध्यम से किये गये प्रयास भी विफल रहे.

राजू का पता जानने के लिये पुलिस-अधिकारियों ने 1975 के बाद के काल में बंबई में पकड़े गये सब अपराधियों के विवरण छान मारे, तब कहीं जाकर पता चला कि राजू उर्फ गोविंदराज रामचंद्र नामक अपराधी ने, जो जुहू गली की झोंपड़पट्टी में रहता था, सेंध मारकर एक

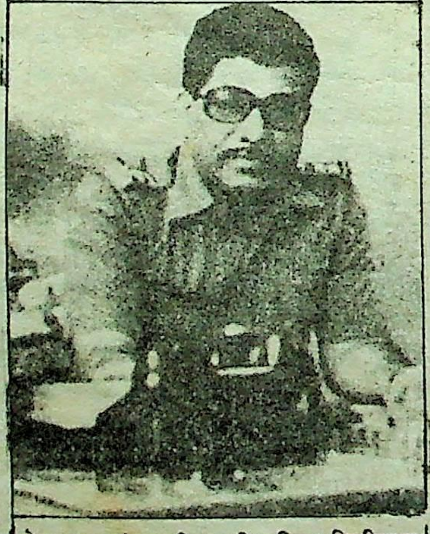

लेखक व जांच अधिकारी पुलिस निरीक्षक

घर में चोरी की थी. जब उसका फोटो कन्नन को दिखाया गया तो उसने राजू को पहचान लिया. जब जुहू गली की झोंपड़पट्टी में राजू का पता न चला तो उसके मूल पते की खोज की गयी, जो अपर्याप्त था. पता था— सालेम पेठ, बंगलूर. अंत में, इस शोध से जुड़े पुलिस-अधिकारियों की सहायता से राजू को खोजने का निश्चय किया.

रात के साढ़े आठ बजे. 15 अक्तूबर, 1981. दल के सदस्य मद्रास स्टेशन पर उतरे. अगले दिन, उन्होंने मद्रास नगर के श्री गुरुस्वामी पुलिस उप आयुक्त (अपराध शाखा) से संपर्क किया. उन्होंने इस दल की सहायता के लिए अपने असिस्टेंट इंसपेक्टर श्री रेतुकुमार को उनके साथ कर दिया. श्री रेतुकुमार की सहायता से 'चिताद्रि पेठ' के गरीब बच्चों से एक सोने की अंगूठी व दो ईयररिंग, जो उन्हें कन्नन ने दिये थे, बरामद किये. 17 अक्तूबर को दल के सदस्यों ने कन्नन की बहन सूर्या जोधी से भेंट की. उसने स्वीकार किया कि कन्नन ने उसे दस हजार रुपये उसके बच्चों की शिक्षा के लिए दिये थे. सूर्या की पहचान के जिस व्यापारी के पास कन्नन ने कुछ ज़ेवर गिरवी रखे थे, वे भी पुलिस ने व्यापारी से ले लिये.

कन्नन ने जितना काम निकल सकता था, वह निकालकर, इस दल ने उसे 'पी-1 पुलिस थाने' की कच्ची कैद में रखकर, राजू को सेलम जाकर पकड़ने का कार्यक्रम बनाया. दल के सदस्य 18 अक्तूबर को दोपहर एक बजे बस से रवाना हुए और रात के नौ बजे सेलम पहुंचे. वे पर्यटकों की वेशभूषा में थे और जानबूझकर सब के सामने अपने 'केस' के बारे में बात नहीं कर रहे थे. सेलम पहुंचकर, सदस्यों ने तमिलभाषी चालक मूर्ति को ओमलुर तालुका का पन्नापट्टी गांव कहां है, यह जानने के लिए भेजा. मूर्ति ने आकर सूचना दी कि पन्नापट्टी गांव दियाट्टीपट्टी पुलिस थाने के क्षेत्र में आता है. सेलम से यह गांव 40 किलोमीटर के फासले पर था.

दल के सदस्यों ने एक प्राइवेट कार किराये पर ली, और उसमें सवार होकर पन्नापट्टी गांव में पहुंचे. वहां उन्होंने दूर से राजू का घर देखा और निश्चय किया कि रात को स्थानीय पुलिस की सहायता से घर पर छापा मारेंगे.

इस बीच, जब वे एक उपाहार-गृह में चाय पी रहे थे. तब मूर्ति ने एक ऐसे व्यक्ति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से पहचान की, जो पन्नापट्टी गांव ... लोगों से अच्छी तरह परिचित था. उसने पुलिस की सहायता करने का आश्वासन दिया. उस व्यक्ति ने दल के सदस्यों से कहा कि वे उसे कुछ देर बाद दिवाट्टीपट्टी पुलिस स्टेशन से एक किलोमीटर की दूरी पर स्थित स्टेट बैंक के पास मिलें.

जब वह इस दल के सदस्यों को नियत समय पर स्टेट बैंक के पास मिला तो श्री गंगाधर शिंदे को उसे देखते ही विश्वास हो गया कि इस व्यक्ति पर विश्वास किया जा सकता है. जब उसे राजू का फोटो दिखाया गया तो उसने उसे देखते ही कहा, "अरे, यह तो अपना 'बंबई गोविंदन्' है!" उसने बताया कि वह (बंबई गोविंदन्) जब भी बंबई से आता है, काफी ज़ेवर और नगदी लेकर आता है, और उसकी पत्नी सदा ज़ेवरों से लदी रहती है, उसने बताया कि 'बंबई गोविंदन्' पलामट्टी की कातीयामूर बस्ती में रहता है.

दिवाट्टीपट्टी थाने के मुख्याधिकारी सब-इंसपेक्टर गुणसागरम् तथा उनके हवलदार रामस्वामी और एक-दो सिपाहियों के साथ दल के सदस्यों ने रात के दो बजे के करीब राजू के घर पर छापा मारा. पर निराशा ही हाथ लगी. कारण ... गया हुआ था. उसके घर के पास ही उसकी ससुराल थी, लेकिन वहां भी तलाशी लेने पर कुछ न मिला.

अगले दिन दल के सदस्य सेलम के होटल से एक कार द्वारा पानापट्टी की ओर रवाना हुए. रास्ते में चालक मूर्ति ने एक झाड़ के पास सरघुटे दंपति को बैठे देखकर कहा, "शायद यह राजू और उसकी पत्नी हैं. तिरुपति से सर घुटाकर लौटे हैं." श्री शिंदे और उनके सहायकों ने यह विश्वास हो जाने पर कि वे ही राजू-दंपति हैं, दोनों को गिरफ्तार कर लिया, और उन्हें अपने साथ लेकर उन के घर आये. राजू के सामने अपना अपराध कबूल करने के अलावा कोई और चारा न था. उसने कुछ ज़ेवर भी पुलिस को दिखाये, जो उसने घर में छिपा रखे थे. उन सब पर वी.एच.पी. (वामन हरि पेठे) शब्द अंकित थे. इन सबका पंचनामा करके, पुलिस ने उन्हें अपने अधिकार में ले लिया.

राजू उर्फ 'बंबई गोविंदन्' ने पुलिस के सामने यह भी स्वीकार किया कि कन्नन के जाने के बाद उसने चोरी का माल विलेपार्ले (पू) स्थित मनसुख ज्वेलर्स की ... के सुपुर्द किया था. इस सूचना के आधार पर श्री शिंदे ने बंबई के सहायक पुलिस आयुक्त श्री रणवीर लिखा को फोन से सूचित किया वे इस दूकान की तलाशी लेने की व्यवस्था करें. इसके बाद, उन्होंने राजू को जुडीशियल मैजिस्ट्रेट कोर्ट नं. 2, सेलम के सामने पेश किया, जहां उसे 26 अक्तूबर, 1981 तक पुलिस कोठरी में रहने का आदेश मिला.

मामले की पूरी तहकीकात करने के बाद पुलिस ने 1 फरवरी, 1982 को अभियुक्त राजू उर्फ 'बंबई गोविंदन्', कन्नन, लक्ष्मीलाल, नानालाल, मदनलाल जैन व सेलुराज के विरुद्ध सिटी मैजिस्ट्रेट, 23वें कोर्ट, एस्प्लेनेड में आरोप-पत्र दाखिल किये. 21 मार्च, 1983 को कोर्ट से कन्नन को दो वर्ष और एक हजार रुपये जुर्माने, और राजू को (जो जमानत पर जाकर फरार हो गया था लेकिन दुबारा पकड़ा गया) को ढाई वर्ष का कारावास और तीन हजार जुर्माने की सजा मिली. □

(महाराष्ट्र राज्य पुलिस मुख्यालय की विशेष अनुमति से 'दक्षता' के दिसंबर, 1987 अंक में प्रकाशित एक सत्यकथा पर आधारित प्रस्तुति)

अपराध कथा : दो

नटेश्वर

पद्माकर मलकापरे

महाराष्ट्र के इतिहास में यह अपने ढंग का पहला मुकद्दमा है. क्या विशेषता थी इस मुकद्दमे में!

वणी (महाराष्ट्र) तालुका में वणी से नायगांव जाने वाली सड़क पर शिरपुर गांव के पास ऊकणी नाम का एक गांव है. इस गांव में मुडे-परिवार के लोग कई पीढ़ियों से कृषि-व्यवसाय में लगे थे. इस परिवार के प्रमुख थे— श्री हरबाजी मुडे, जिन्होंने पहल करके अपने बेटे को स्कूल की शिक्षा दिलायी थी. इस शिक्षा तथा गांव में मुडे-परिवार की पुरानी प्रतिष्ठा के बल पर, उसे पंचायत समिति के कार्यालय में ग्राम-सेवक की नौकरी मिल गयी थी. सन् 1968 में उसका विवाह सरोदे-परिवार की कन्या लता से हुआ.

कुछ समय बाद, लता ने दो पुत्रियों को जन्म दिया. नौकरी तथा कृषि से होने वाली आय इस छोटे से परिवार के, जिसके सदस्य थे, गोपाल, लता, गोपाल की विधवा मां, और दो छोटी पुत्रियां, भरण-पोषण के लिए काफी थी. परिवार के सदस्यों को कोई विशेष अभाव नहीं था.

लेकिन, न जाने कैसी सोहबत के असर से गोपाल को 'वरली मटका' खेलने का व्यसन लग गया. हर जुआरी की तरह गोपाल भी चाहता था कि एक ही बार में हजारों के वारे न्यारे हो जायें. इसलिए वह आगे चल कर, अपनी तनख्वाह की ज्यादातर रकम के अलावा वह रकम भी मटके में लगाने लगा जो वह घर-पट्टी (गांव के घरों का किराया) आदि मदों में लोगों से वसूलता था.

धीरे-धीरे यह रकम बढ़कर इतनी ज्यादा हो गयी कि गोपाल को लगा कि वह अपनी सीमित आय तथा सीमित साधनों से उसकी भरपाई नहीं कर पायेगा. और तब उसे जेल जाना पड़ेगा, नौकरी से बर्खास्त होना पड़ेगा और गांववालों की हिकारत की नजरों का शिकार होना पड़ेगा. इस अपमानजनक स्थिति से बचने के लिए उसने एक आसान सा तरीका खोज निकाला.

एक दिन वह, बिना किसी को कुछ बताये, सन् 1978 में अपने घर से गायब हो गया.

गोपाल की पत्नी लता मुडे को पति के इस प्रकार, कोई पूर्व-सूचना दिये बिना, लापता हो जाने की अप्रत्याशित घटना से दुख तो बहुत हुआ, लेकिन उसने धीरज न खोया. वह मेहनत करके अपनी सास अंजनाबाई मुडे और दो पुत्रियों— मंजूषा और वर्षा— का पेट पालने लगी. उसकी सास धार्मिक वृत्ति की थी, और उसका विश्वास था कि साधु-संतों की सेवा करने से उनके आशीर्वाद से उसका गोपाल वापस लौट आयेगा. अतः वह जो भी साधु दिखाई दे जाता, उसे घर बुला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माईबाई

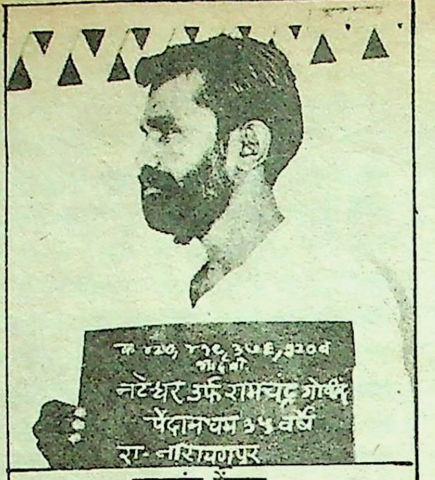
रामचंद्र पेंदाम

उपनिरीक्षक फूलझेले

लाती और उसकी खूब सेवा करती. कभी-कभी लता भी इस कार्य में उसकी सहायता करती.

इस बीच संयोग से लता को गांव में ही एक नौकरी मिल गयी. एकात्मिक बाल विकास योजना के अंतर्गत शिरपुर में अंगणवाड़ी प्रकल्प आरंभ हुआ और उसमें लता प्रशिक्षण प्राप्त कर एक शिक्षिका के रूप में कार्य करने लगी. प्रशिक्षण महाविद्यालय के प्राचार्य लता की परिस्थिति से भली भांति परिचित थे इसलिए सदा उसके साथ सहानुभूति का व्यवहार करते थे. उन्होंने अपने एक परिचित ज्योतिषी से लता के पति के पुनरागमन की संभावना के बारे में पूछा तो ज्योतिषी ने अपना हिसाब लगाकर उन्हें बताया कि गोपाल के मार्च, 1984 तक वापस घर लौटने की पूरी संभावना है. प्राचार्य से यह भविष्यवाणी सुनकर लता को काफी संतोष हुआ. तब से वह स्वयं भी साधु-संतों और ज्योतिषियों का समागम तथा उनकी सेवा करने लगी.

तभी ऊकणी गांव में 'माईबाई' (जुलजाबाई) नाम की एक भक्तिन का आगमन हुआ. वह अपना समय भजन-पूजन में लगाती थी और गांव के लोग धीरे-धीरे उसे एक देवी की तरह पूजने लगे. एक दिन वह सुबह ही सुबह लता के घर आयी और उससे कहने लगी, "तुम्हारा पति गोपाल मुझे आलंदी (महाराष्ट्र का एक तीर्थ-स्थल) में मिला था. उसने मुझे बताया था कि उसे घर छोड़े 7-8 वर्ष हो गये. तुम कहो तो मैं उसे तुम्हारे पास ला सकती हूं." साधुओं और भक्तिनों पर अंधश्रद्धा करनेवाली लता और उसकी सास ने उसकी बात पर सहज ही विश्वास कर लिया. अब वे गोपाल के 'माईबाई' के साथ आने की प्रतीक्षा करने लगीं.

इस घटना के छह महीने बाद एक दिन सुबह ग्यारह बजे के करीब साइकिल पर सवार दो युवक— महादेव मेश्राम और बलीराम सोनवणे— लता के घर आये और उसे बताया कि 'माईबाई' गोपाल को लेकर आयी हैं और वणी के नटेश्वर मंदिर में ठहरी हैं. लता अंगणवाड़ी के काम से जाने वाली ही थी. वह अपनी सास को साथ लेकर वणी पहुंची. उसने अपनी सास को नटेश्वर के मंदिर के पास छोड़ा और स्वयं अपना काम पूरा करने के लिए अंगणवाड़ी के कार्यालय में गयी.

नटेश्वर के मंदिर में हाथ में त्रिशूल लिये और लुंगी-शर्ट पहने एक जटाधारी युवक की ओर इशारा करके 'माईबाई' लता की सास से बोली, "यही है तुम्हारा गोपाल! जाओ, उसे लेकर अपने घर जाओ और सुख से रहो." अंजनाबाई को उसकी बात पर विश्वास नहीं हुआ, कारण गोपाल की आकृति और इस जटाधारी युवक की आकृति में कोई साम्य नहीं था. लेकिन, 'माईबाई' यही कहती रही, "यही गोपाल है! तुम्हारे पहचानने में चूक हो रही है." इतना ही नहीं, वह दोनों को धकेलती हुई, बस-स्टैंड तक भी ले आयी, ताकि वे सब ऊकणी जाने वाली बस से ऊकणी जा सकें.

इस बीच ऑफिस का अपना काम पूरा करके लता भी बस स्टैंड पर आ गयी थी. जब उसे 'माईबाई' ने बताया कि यह जटाधारी युवक ही उसका पति गोपाल है तो उसे यह बात अविश्वसनीय लगी उसका संदेह तब और बढ़ गया जब उसने जटाधारी युवक से उसका नाम पूछा और उसने गोपाल के स्थान पर गोपाल के पिता हरबाजी का नाम बताया. मगर, 'माईबाई' ने उसे अपने संदेह व्यक्त करने का अवसर ही नहीं दिया और यही कहती रही, "यही तुम्हारा गोपाल है. उसे साथ लेकर अपने घर जाओ.

रास्ते में अंजनाबाई ने 'माईबाई' से कहा, "देखो माईबाई, हम दोनों को तो कतई विश्वास नहीं है कि यही युवक गोपाल है. किंतु यदि गांववालों ने इसे गोपाल मान लिया तो हम दोनों भी इसे गोपाल स्वीकार कर लेंगे." ऊकणी गांव के उन लोगों ने, जिन्होंने गोपाल को छुटपन से देखा था, जटाधारी युवक को गोपाल मानने से इंकार कर दिया लेकिन जब 'माईबाई' उसे ही गोपाल बताती रही तो वे लोग चुप हो गये. वे भक्तिनी में बहस से नहीं उलझना चाहते थे. अब इस तथाकथित गोपाल की हकीकत के बारे में शंका-कुशंका करने वाला कोई न रहा. वह अब लता के पति और अंजनाबाई के पुत्र के रूप में सानंद घर में रहने लगा. लता के शरीर का सुख भी उसने अनेक रातों में प्राप्त किया.

लता के जन और मन पर अपने अधिकार का सिक्का जमाने के बाद, अब इस नकली गोपाल ने धीरे-धीरे अपना असली रूप दिखाना आरंभ किया. लता और अंजनाबाई को अक्सर उसके एक इरादे के बारे में सुनने को मिलने लगा. परिवार के पास 35 एकड़ कृषि-भूमि थी. नकली गोपाल उसमें से दस एकड़ जमीन अपने नाम करने की जिद बार-बार करने लगा. उसकी इस विचित्र और संदेहास्पद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मांग ने लता और अंजना दोनों की शंकाओं को पुनर्जीवित कर दिया. दोनों उसकी मांग की उपेक्षा करती रहीं. उन्होंने कभी उसे गंभीरता से नहीं लिया.

उनकी इस उपेक्षा से नकली गोपाल का गुस्सा-भड़कने लगा. उसने एक दिन दोनों से एक सादे स्टैंप-पेपर पर सही करने को कहा. कहा क्या, सीधा हुक्म ही दे डाला. स्टैंप-पेपर पर कुछ भी लिखा हुआ नहीं था. दोनों ने हस्ताक्षर करने से साफ इंकार कर दिया. अब उन दोनों को शत प्रतिशत विश्वास हो गया कि उनके साथ कपट करके रहने वाला यह युवक किसी भी हालत में गोपाल नहीं हो सकता.

सीधी उंगली से घी न निकलते देखकर, नकली गोपाल ने अब रौद्र रूप धारण किया और दोनों को खुले आम धमकी देने लगा कि दस एकड़ जमीन उसके नाम न की गयी तो वह दोनों के टुकड़े-टुकड़े करके फेंक देगा. गांव वालों को भी वस्तुस्थिति का पता चलने लगा. उनकी सहानुभूति लता व अंजना के साथ थी. घर में अपना ही दूध पीकर पल रहे आस्तीन के सांप को नष्ट करने के उद्देश्य से एक दिन अंजनाबाई ने नकली गोपाल के विरुद्ध शिकायत गांव के पुलिस पाटिल के पास कर दी. इस बीच, लता ने नकली गोपाल की धमकियों से बचने के लिए अपने भाई को अपने पास बुला लिया, ताकि वह जरूरत पड़ने पर उसके प्राणों की रक्षा कर सके.

गांव के कई प्रमुख व्यक्तियों ने मामले को शीघ्रता से आगे बढ़ाने के उद्देश्य से 26 अगस्त, 1984 को शिरपुर के थाने में नकली गोपाल के विरुद्ध शिकायत दर्ज करायी. थानेदार श्री फूलझेले ने मामले से संबंधित सब व्यक्तियों से मिलकर सच्चाई को जानने का प्रयास किया. मामला चूंकि महत्वपूर्ण था इसलिए उन्होंने उसकी सूचना जिला, यवतमाल के पुलिस अधीक्षक श्री सुभाषचंद्र गाढ़े को भी दी. श्री गाढ़े ने मामले के सब पक्षों पर सावधानीपूर्वक विचार करके श्री फूलझेले को आवश्यक निर्देश दिये, जिनके आधार पर श्री फूलझेले ने शिरपुर पहुंचकर, मामले की छानबीन का काम आगे बढ़ाया.

सबसे पहले उन्होंने 2 सितंबर को थाने में श्रीमती लता मुडे का बयान दर्ज किया. उस अवसर पर लता के भाई श्री रमेश सरोदे (नागपुर) तथा गांव के अनेक पुराने

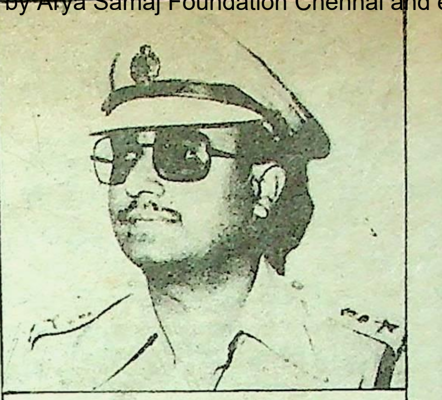

रामचंद्र गाढे,
जिला पुलिस अधीक्षक यवतमाल

प्रतिष्ठित लोग भी मौजूद थे जिन्होंने लता के इस वक्तव्य की पुष्टि की कि उसके घर में रहने वाला युवक गोपाल नहीं है.

इस बयान के आधार पर श्री फूलझेले ने गांव के लोगों से अलग-अलग पूछताछ आरंभ की. श्री एकनाथ कुचनकार नाम के एक व्यक्ति से उन्हें एक महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त हुई. उन्होंने थानेदार साहब को बताया कि गोपाल मुडे बनकर लता के घर में बैठा हुआ युवक वास्तव में पास के कोना नामक गांव में इसबगोल औषधि बेचा करता था. उसका नाम रामचंद्र था. यह जानकारी प्राप्त कर वे कोना गांव की ओर रवाना हुए, जहां दो प्रतिष्ठित गांववासियों— श्री भगवान हनुमंते तथा श्री बोधणे ने उन्हें रामचंद्र के बारे में और अधिक जानकारी प्रदान की. उनसे यह जानकर कि वह मूलतः वर्धा जिले की हिंगणघाट तहसील के नारायणपुर गांव का रहने वाला है, वे 3 सितंबर को उस गांव में पहुंचे. वहां उन्होंने जैसे ही सरपंच श्री विठ्ठल सदाशिव पुसदेकर से रामचंद्र नाम के युवक के बारे में पूछा तो उन्होंने रामचंद्र की सारी कुंडली ही जैसे बखान कर दी. सरपंच ने रामचंद्र की जो जानकारी दी, वह इस प्रकार थी :

उसका पूरा नाम रामचंद्र गोविंदा पेंदाम था, और वह गोंड नाम की आदिवासी जाति का एक सदस्य था. उसके पास तीन एकड़ कृषि-भूमि थी. भूदान-आंदोलन के दिनों में उसे पांच एकड़ जमीन और मिली थी. इस प्रकार, वह कुल मिलाकर 8 एकड़ जमीन का मालिक था. उसने अपनी सारी जमीन ठेके पर दे रखी थी, लेकिन उससे होने वाली आमदनी उसके लिए पूरी नहीं होती थी, क्योंकि उसके दो पत्नियां थीं. नारायणपुर

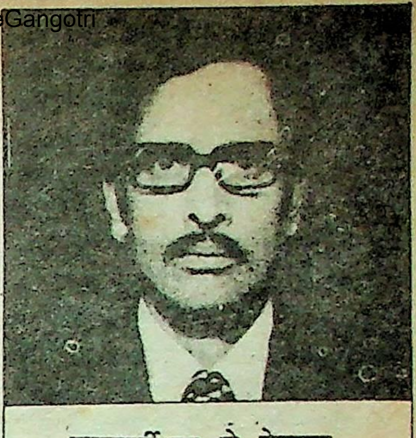

न्यायमूर्ती एस्. जे. देशमुख,

के एक प्रतिष्ठित निवासी श्री यशवंत भोयर के घर उसने अपने दो साथियों की मदद से ज़ेवरों की चोरी की थी. उसने गांव का एक घर एक साथ तीन व्यक्तियों को बेचने का दुःसाहस भी दिखाया था.

नारायणपुर के सरपंच श्री पुसदेकर तथा एक अन्य प्रतिष्ठित निवासी श्री ज्ञानेश्वर खामनकर के रामचंद्र पेंदाम विषयक बयान लेकर, सब इंसपेक्टर श्री फूलझेले वापस जीप से ऊकणी आये, और वहां के सरपंच श्री अंडूसकर तथा सर्वश्री बालकृष्ण लाड, पांडुरंग बोरबे, नत्थूजी बालकी के बयान लेकर रामचंद्र पेंदाम को गिरफ्तार किया.

पेंदाम की गिरफ्तारी के बाद, 'माईबाई' (तुरजी महादेव जुमनाके) तथा दोनों साइकिल सवारों को पकड़ने में इंसपेक्टर फूलझेले को विशेष कठिनाई नहीं हुई. इन चारों के विरुद्ध पुलिस ने यवतमाल के अतिरिक्त एवं जिला सत्र न्यायाधीश न्यायमूर्ति श्री एम.जी. देशमुख के न्यायालय में मुकद्दमे चलाये. मुख्य आरोपी रामचंद्र पेंदाम उर्फ गोपाल उर्फ नटेश्वर पर, भारतीय दंडविधान की 419, 420, 376 व 120 धाराओं के अंतर्गत नकली पति बनकर लता मुडे को फंसाने और उसकी 10 एकड़ जमीन हड़पने का प्रयास करने के अपराध थे तथा अन्य तीन आरोपियों पर इस षड्यंत्र में सम्मिलित होने का.

'महाराष्ट्र के इतिहास में अपने ढंग का यह पहला मुकद्दमा' (एक समाचारपत्र के अनुसार) 8 अगस्त, 1985 को आरंभ हुआ, और 1 सितंबर को समाप्त हुआ. मुकद्दमे की सुनवाई के दौरान 10 प्रमुख साथियों ने अपने बयान दिये. रोज मुकद्दमे की सुनवाई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के दौरान हजारों उत्सुक दर्शक ... पत्रकार उपस्थित रहते थे. सरकारी पक्ष के अधिवक्ता थे– एडवोकेट श्री सुरेश बोरा.

न्यायमूर्ति श्री देशमुख ने दोनों पक्षों के बयानों और तर्कों को बड़े धैर्य और सावधानी के साथ सुनकर अपना निर्णय सुनाया, जिसके अनुसार, रामचंद्र पेंदाम और 'माइबाई' (तुरजी महादेव जूमनाके) को 3-3 वर्ष का सश्रम कारावास का दंड ... सकने की स्थिति में 6 महीने का कारावास. दोनों साइकिल-सवारों को न्यायमूर्ति ने निर्दोष मुक्त कर दिया.

अपने निर्णय में न्यायमूर्ति श्री देशमुख ने पुलिस की उस कार्यनिष्ठा व तत्परता की भरपूर प्रशंसा की जिसके बल पर उसे अंधश्रद्धालुओं का शोषण करने वाली स्वार्थी तथा समाज-विरोधी तत्वों को शीघ्र पकड़ने में सफलता मिली.

जिस कुशलता और सामर्थ्य के साथ एडवोकेट बोरा ने अभियोग-पक्ष की ओर से तर्कपूर्ण दलीलें प्रस्तुत कीं, उनकी भी न्यायमूर्ति महोदय ने विशेष प्रशंसा की. □

महाराष्ट्र राज्य पुलिस मुख्यालय की विशेष अनुमति से 'दक्षता' के दिसंबर 87 अंक में प्रकाशित एक सत्यकथा पर आधारित.

अपराध कथा : तीन

मंहगा चुंबन

□ अनंतराव पूर्णपात्रे

रात के ग्यारह-साढ़े ग्यारह बजे का समय. चारों ओर पूर्ण शांति व स्तब्धता व्याप्त थी. तभी, उन दोनों घरों में से एक के अंदर से एक वृद्ध महिला के जोर से चिल्लाने और गालियां बकने की आवाजें सुनाई देने लगीं.

"जाड़ों के दिन थे. जिस कमरे में वृद्धा सोयी थी, उसमें अंधेरा छाया था. ठंड से बचने के लिए उसने अपने मुंह पर चादर ओढ़ रखी थी.

सहसा, किसी ने चुपके से आकर उसके मुंह से वह चादर हटा दी और धड़ाधड़ उसके होंठों और गालों को चूमने लगा. वृद्धा के चिल्लाने पर चुंबन लेने वाला तरुण स्तब्ध रह गया और एक-दो मिनट तक वह मूक और हतबुद्धि खड़ा रहा. जब वह इस मनःस्थिति से उबरा, तब उसकी समझ में आया कि चूक में उसने कैसा भयंकर करतब कर दिया है. स्थिति की गंभीरता को ध्यान में रखते हुए उसने चुपचाप उसी दरवाजे से, जिससे वह अंदर आया था, बाहर जाने की कोशिश की, लेकिन नाकामयाब रहा. कारण, तब तक वृद्धा की चीख-चिल्लाहट सुनकर मुहल्ले के सब लोग उसके घर के द्वार पर जमा हो गये थे. अब उसके लिए भागकर अपनी जान बचाना भी कठिन हो गया.

अगले क्षण उसने पाया कि लोगों ने उसे घेर लिया है. पहले तो लोगों ने समझा था कि वह कोई चोर है और चोरी करने आया था. लेकिन जब वृद्धा बार-बार सबको सुनाकर यह बताने लगी कि उसने उसके मुंह से चादर हटाकर उस पर चुंबनों की वर्षा की थी तो कुछ लोगों ने वृद्धा की बात पर विश्वास नहीं किया. लेकिन वृद्धा उस तरुण को पुलिस थाने ले जाने के लिए जोर दे रही थी.

पुलिस थाने का नाम सुनकर तरुण वृद्धा के पांव पड़कर उससे क्षमा मांगने लगा लेकिन उसकी क्षमा-याचना का क्रुद्ध वृद्धा पर कोई प्रभाव नहीं हुआ. उसने मुहल्ले के उन लोगों की भी एक न सुनी जो बार-बार उससे कह रहे थे, "जाने भी दो दादी! गलती हो गयी बेचारे से. माफ़ कर दो." और जब उसके पड़ोस में रहने वाली एक युवती ने भी उस तरुण को क्षमा कर देने के लिए वृद्धा से कहा, तो वृद्धा ने कहा, "तू चुप रह. मुझे सिखाने की कोशिश मत कर. अपना काम कर."

तरुण को जब पुलिस स्टेशन ले जाया गया तो वहां के अधिकारी ने तरुण को देखते ही उस पर गालियों की बौछार शुरू कर दी. थाने के सब लोग वहां जमा हो गये. उन्हें सुनाते हुए उस अधिकारी ने कहा, "साले ने पुलिस विभाग की इज्जत धूल में मिला दी!" तब कहीं जाकर सब लोगों को पता चला कि तरुण पुलिस कर्मी है.

मैं चूंकि सरकारी वकील था, इसलिए यह मामला मेरे पास आया. मैं तरुण का विरोधी वकील बना. एक पुलिसकर्मी के विरुद्ध मुकद्दमा दायर करते हुए मुझे अच्छा तो नहीं लग रहा था लेकिन एक पुलिस प्रॉसीक्यूटर होने के नाते मैं लाचार था.

लेकिन मुकद्दमे से पूर्व, मैं यह जानने के लिए उत्सुक था कि आखिर उसने ऐसा अशोभनीय कृत्य और वह भी एक वृद्धा के साथ क्यों किया! शायद थाने के सब-इंसपैक्टर को वास्तविक कारण मालूम हो. इसलिए एक दिन मैं सुबह ही सुबह उसके घर पहुंचा. उसने मेरा स्वागत किया और मेरी जिज्ञासा का उत्तर देते हुए कहा, "वृद्धा के घर के बाजू में ही, ठीक उसके जैसे घर में एक तरुणी स्त्री रहती है, जिसके साथ चोपड़ा का प्रेम-संबंध था जो इस प्रसंग से पूर्व काफ़ी प्रगाढ़ हो गया था. वह अक्सर रात को छिपकर उस तरुणी के घर भी जाया करता था. लेकिन उस रात, दोनों घरों की बनावट एक सी होने के कारण उससे चूक हो गयी और वह गलती से वृद्धा के घर में इस विश्वास के साथ घुस गया कि वह तरुणी के घर में ही आया है. बस, उसके बाद में जो कुछ हुआ वह तो आपको पता है ही."

अदालत में बचाव-पक्ष के वकील ने, शायद तरुणी को इस मामले से अलग रखने के उद्देश्य से यह तर्क दिया कि उसके मुवक्किल ने उस रास्ते से गुज़रते एक तरुण को वृद्धा के घर से निकलते देखा था. वह उसे पकड़ना चाहता था कि अंधेरे का लाभ उठाकर वह गायब हो गया. इस बीच वृद्धा चिल्लायी और सकी चीख-पुकार सुनकर तथा उसके साथ जो कुछ घटा वह सुनकर लोगों ने उसे पकड़ लिया.

लेकिन, गवाहों ने जो गवाहियां दीं, उनसे यह तर्क तार-तार हो गया.

निर्णय देते समय, न्यायमूर्ति ने कहा, "वादी और प्रतिवादी के बीच कोई वैमनस्य नहीं है. दोनों का इस घटना से पूर्व, परिचय भी नहीं था. यह मानने का भी कोई कारण नहीं है कि आरोपी के विरुद्ध फरियाद झूठी थी. गवाहों की गवाहियां विश्वसनीय थीं. आरोपी ने जो निंदनीय कृत्य किया, वह एक पुलिसकर्मी के लिए अशोभनीय था. उसे भा. दं. वि. की 354 वीं धारा में अंतर्गत तीन महीने के सश्रम कारावास का दंड दिया जाता है."

इस दंड के कारण पुलिस-विभाग ने चोपड़ा को नौकरी से भी निकाल दिया. इस प्रकार एक अनचाहे चुंबन ने एक निर्दोष पुलिसकर्मी को जेल भिजवाया, उसकी नौकरी छुड़वायी, और उसके जीवन की दिशा ही बदल दी. □

महाराष्ट्र राज्य पुलिस मुख्यालय की विशेष अनुमति से 'दक्षता' के मई, 1988 अंक प्रकाशित एक सत्यकथा की प्रस्तुति)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजेंद्र राव

पुरस्कार को नमस्कार

साहित्यकारों को दिये जाने वाले सरकारी-गैर-सरकारी पुरस्कारों की संख्या बढ़ती जा रही है. सर्वाधिक पुरस्कार हिंदी भाषी राज्यों में बंटते हैं और कुछ कुछ लाटरी परिणामों की तर्ज पर कहते हैं खुदा देता है तो छप्पर फाड़ कर देता है–, एक वरिष्ठ और सर्वमान्य लेखक को नहीं मिले तो चालीस साल तक नहीं मिले, फिर लगभग एक साथ दो राज्य सरकारों के शिखर पुरस्कार उनके चरणों में आ गिरे. उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान और हिमाचल प्रदेश में प्रति वर्ष लेखकों की लाटरी खुलती है. तीन हजार से लेकर एक लाख तक जिसके भाग्य में जो बंटा हो. दिल्ली में हिंदी के अलावा उर्दू और पंजाबी के खिलाड़ियों को आर्थिक राहत बांटी जाती है, नाम चाहे जो दे दिया जाये. धीरे-धीरे स्थिति ऐसी आ सकती है कि पुरस्कार अधिक हो जायें और लेने वाले कम. यह भी संभव है कि विवाद अधिक बढ़ जाने पर बारी-बारी से सबको मिलने लगे. लेकिन इतना धैर्य लेखकों में कहां कि उस आगामी स्वर्णिम कल की प्रतीक्षा करें. कुछ लोग संस्थाओं की मार्फत पूरा खर्च उठाकर अपने आपको पुरस्कृत करवा लेते हैं तो कुछ मंत्रियों, सचिवों और अध्यक्षों के आगे पीछे घूमना शुरू कर देते हैं. ये लोग पहले तो झांसापट्टी देते रहते हैं परंतु जान छूटते न देखकर कह देते हैं, 'लो भई, इस बार तुम भी ले लो पुरस्कार.'

किसी भी लेखक के लिए पुरस्कार-सम्मान एक अच्छी खबर होती है. उसके सामने एक सुखद क्षण होता है. चर्मोत्कर्ष की उपलब्धि का मनभावन एहसास जो कि धीमे नशे की तरह चढ़ता है और देर लगती खुमार उतरने में. साहित्यजगत की फंतासी जाल की तरह उसे कसती जाती है, कुछ समय के लिए वह देश-काल-परिस्थिति से बेखबर इंद्रधनुषी कल्पनाओं में खोया रहता है... इसके बाद भारत भारती, सारस्वत, ज्ञानपीठ, पद्मश्री और जाने क्या क्या! कुछ पुरस्कृत हिंदी लेखकों ने तो नोबुल प्राइज के चांद खिलौने को पाने के लिये अपने नन्हें नन्हें हाथों को आकाश की ओर उठाकर गुहार मचाई.

येहि धनु पर ममता केहि हेतु

पुरस्कार-सम्मान की गफलतभरी मदहोशी में निमग्न भाग्यशाली और सपने सच करने के लिए 'हम होंगे कामयाब, एक दिन' का कोरस गाते हुए भाग-दौड़ कर रहे संभावनाशील लेखकों का मोह भंग करने के लिए, खरी खरी सुनाने के लिए प्रसिद्ध शैलेश मटियानी ने अपनी सुपरिचित प्रहारात्मक मुद्रा में एक अत्यंत प्रासंगिक और गंभीर लेख 'साहित्यकार और पुरस्कार' लिख डाला है जिसमें कुछ चुभते हुए प्रश्न उठाए गये हैं. तथाकथित महान लेखकों की हिप्पोक्रेसी और अवसरवादिता को बेबाक ढंग से उजागर करके मटियानी ने एक बेमानी सन्नाटे को भंग किया है. गंगा (जुलाई '88) में प्रकाशित इस लेख को लगभग अनौपचारिक श्वेतपत्र माना जा सकता है. अज्ञेय, महादेवी, नागार्जुन, नरेश मेहता और परसाई को जिरह के लिए कटघरे में खड़ा करके कही गई जिरह में निर्भीक-निडर मटियानी के तेवर देखते ही बनते हैं, ''हम फिर जोर देकर कहना चाहेंगे कि पुरस्कार व्यक्तिगत वस्तु नहीं. राज्य व्यवस्था और लेखक दोनों की प्रतिष्ठा का अनुष्ठान है यह. छवि निर्माण के इस प्रसंग में हमारा महत्व न पुरस्कार देने वाले से कम है न लेने वाले से. और अपने इसी बुनियादी हक के तहत हम राज्य व्यवस्था से पूछना चाहेंगे- 'येहि धनु पर ममता केहि हेतू?' और अपने वाणीपुत्रों से अनुरोध करेंगे– 'कहिय कृपा करि भृगुकुल केतें'!''

हिंदी बोलनेवाले अहिंदीभाषी

हमें अच्छी तरह याद है कि छठे और सातवें दशक में जब पंजाब में भाषा विवाद जोर से उठा तो वहां रहने वाले हिंदुओं ने अपनी मातृभाषा पंजाबी के बजाए हिंदी लिखवायी थी. इसी आधार पर राज्य का विभाजन हुआ और सिखों-हिंदुओं के बीच एक दरार पड़ी जो निरंतर बढ़ती ही गयी. आज भी पंजाब में रहने वाले हिंदू (अधिकतर) अपनी मातृभाषा हिंदी ही मानते हैं. भले ही उनकी बोल-चाल और यहां तक कि सोचने की भाषा भी पंजाबी ही हो. खैर, यहां हम पंजाब से बाहर रह रहे पंजाबी हिंदुओं का जिक्र करना चाहते हैं जिन्हें पंजाब में तो हिंदी भाषी माना जाता है परंतु उ.प्र. दिल्ली या म.प्र. में अहिंदीभाषी समझा जाता है. समझ में नहीं आता कि रवींद्र कालिया या राजी सेठ किस लिहाज से अहिंदीभाषी हिंदी लेखक हैं? क्या महज अहिंदी भाषी लेखक पुरस्कार के लिए यह विशेषण इन्हें दिया गया या सचमुच इन्हें अहिंदीभाषी माना जाता है? शुक्र है यशपाल, अश्क और भीष्म साहनी को इस उपाधि से विभूषित नहीं किया गया.

पुरस्कारों का नगर

ज.ले.स. के भोपाल में हुए तीसरे राष्ट्रीय सम्मेलन में स्वागताध्यक्ष शरद जोशी के भाषण का एक अंश उद्दृत करने का लोभ संवरण करना मुश्किल लग रहा है, ''आप जानते हैं कि यह वह नगर (भोपाल) है, जहां प्रायः ही, जब भी दिल्ली से कोई हवाई जहाज रुकता है, कोई लेखक, कोई संस्कृतिकर्मी अक्सर उतरता रहता है. जब भी आप देखें कि कोई झोला डाले, डाढ़ी बढ़ाए, अजीब सा आदमी दिख रहा है तो समझ लीजिए सरकार ने उसे बुलाया है. ये वो शहर है दोस्तो, जहां रह रहकर बार-बार, कुछ-कुछ दिनों में लेखक सम्मानित किये जाते हैं. कब किसका कहां सम्मान हो जाये, किस कारण सम्मान हो जाये, कहा नहीं जा सकता. यहां जिन्हें सम्मानित किया जाता है, उनकी साख नष्ट कर दी जाती है. जो सम्मान पाते हैं, अपनी साख खो देते हैं. यह वो जंकशन है मित्रो, कि जहां लेखक आकर अपना पाला बदलता है, अपना एरिया बदलता है. वो लोगों से छूटता है तो सरकार की गोद में जाकर बैठ जाता है.''

(नया पथ (5-6 से साभार)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फाइल पढ़ि-पढ़ि जग मुआ

गोपाल चतुर्वेदी

हाय! बरसात में...

न हमें बादल देखने पड़ते हैं, न मौसम विभाग की सूचना सुननी पड़ती है. जैसे चुनाव प्रभावित क्षेत्र में मंत्रियों के हैलीकाप्टरों का झुंड आकाश में और छुट-भइयों का जमीन पर नजर आता है, बारिश के पूर्व बत्तियों पर पतंगे और दीवार-दरवाजे की हर छोटी सेंध से चींटे उमड़ पड़ते हैं. क्या पता मौसम विभाग के वैज्ञानिक भी इधर बारिश का अनुमान हमारी ही तरह लगाते हों. मौसम के ज्योतिषी ने चींटों की कतार आंगन के पार द्वार देखी और दूरदर्शन को फोन कर दिया कि मानसून चल पड़ा है. कौन जाने इसीलिए मौसम की भविष्यवाणी में हाल-फिलहाल सच्चाई की मिगदार बढ़ती जा रही है. जैसे ही बारिश के इमकान दिखे, हम अपने निजी और नितांत घरेलू बाढ़ नियंत्रण केंद्र को कारगर बनाने में जुट जाते हैं. यही अवसर है जबकि लाल किले से बारी-बारी सूखा या बाढ़ से युद्ध स्तर पर निबटने की घोषणाएं हर साल की जाती हैं. हमें पता है कि पिछले साल सूखे की थी और इस वर्ष बाढ़ की बारी है. सरकार के नेक इरादों के रहते अपनी आप ही करनी है. हर साल नियम से राहत बंटती है. बांध बनते हैं और सत्ता के बिचौलिये वर्ग में समाजवाद आता है.

पतंगा-दर्शन के पहले मंगल को हम अपने घर के पास वाले मंदिर जरूर आते हैं. बरसात के जूतों की व्यवस्था यहीं से होती है. प्रभु-कृपा से पुरानी टूटी चप्पल को त्याग, मनभाये जूते पहन, हम घर की ओर टहल लेते हैं. आदमी अनुभव से सीखता है. कई जोड़े नये जूते और छाते गंवाकर यह गुर अपने हाथ लगा है. पढ़े-लिखे लोग किताबों को इधर से उधर करने को चोरी नहीं समझते हैं. भक्तों की जूते- छाते के बारे में यही धारण होनी चाहिए. पता नहीं औरों की है कि नहीं, अपनी तो है. ऐसी सभी भौतिक वस्तुओं में रखा ही क्या है. नयी हों या पुरानी. इन्हीं छुट-पुट सद्प्रयासों से मन धीरे-धीरे गृहस्थाश्रम से वानप्रस्थ की ओर प्रस्थान करता है. हम पुनर्जन्म के उसूल में यकीन रखते हैं. इस जन्म में अच्छे जूते गंवाये भी तो क्या हुआ. दूसरे जन्म में पा लेंगे. हो सकता है कि लगातार जूता गंवाकर स्वर्ग में चांदी की चप्पल मिले.

बरसात में ख़ास तरह के कपड़ों की भी दरकार होती है. यदि पानी भरी सड़क पर तैरते पांव कीचड़ में सन जायें तो पतलून को धोने की नौबत नहीं आनी चाहिए. न उस हाल में जब पूंजीवादी कार या समाजवादी सिटी बस छींटों के फूल बरसाती गुज़र जाये. बारिश में कोई गारंटी तो है नहीं कि कपड़े धुलने के बाद सूखेंगे. अकसर सूरज की कृपा होते-होते बादलों का प्रतिघात हो जाता है. जैसे बादल बादल न होकर बोफोर्स की डील हों. कोई-न-कोई प्याज की पर्त खुलती ही जाती है. यों भी बरसात में नगरपालिका का जल-जल विभाग समझदारी से काम लेता है और अपने बचत अभियान में लगन से जुट जाता है. जब भगवान आसमान से पानी गिराने पर उतारू हैं तो नलों में उसे चलाने की बेवकूफी क्यों की जाये. लिहाजा बारिश के शिकार को कपड़े धोने के लिए बारिश का ही पानी तलाशना पड़ता है. इसीलिए ज्ञानी कह गये हैं कि ज़हर को ज़हर मारता है.

जाहिर है कि बारिश में सफेद कपड़े राजनीति में ईमानदारी जैसे बेकार हैं. सूरदास की मनपसंद काली कांबर या उससे मिलता-जुलता रंग ही इस स्थित में आदर्श है. लगते रहें छींटों के दाग. आसपास से बस जाये या स्कूटर. पैर नाले में पड़े या नाली में, क्या फर्क पड़ता है. लिहाजा हम अपने पुराने कपड़ों का बक्स ढूंढने लगे. पत्नी ने सुख-दुख में साथ रहने का कर्तव्य निभाते हुए जानना चाहा कि हम क्यों इधर-उधर हाथ-पांव फेंक रहे हैं. उनका मतलब हम समझ गये. अपनी नियत कुर्सी और चारपाई की लक्ष्मण रेखा को लांघने के दुस्साहस पर उनको एतराज था. हमने उनसे सहयोग चाहा और अपने पुराने कपड़ों के बक्स का अता-पता पूछा. उन्होंने जवाब दिया कि लड़का बड़ा हो गया है. खेत के प्रश्न पर खलिहान के उत्तर से मुझे अपनी श्रवण-शक्ति और उनके दिमागी संतुलन पर शक होने लगा. कहीं मेरी प्यारी बीवी को रूमानी दौरा तो नहीं पड़ गया. कुछ को चांद और कुछ को बादल दिखते ही यह रोग लग जाता है.

इसके बीमार खोये-खोये रहते हैं. कुछ फिल्मी गीत गुनगुनाते हैं, कुछ गजलें. शून्य में ऐसे ताकते हैं जैसे ब्रहमा का रहस्य खोज रहे हों. अधिकतर निराशा की तुकबंदी करने लगते हैं. इसमें चांद-चांदनी धूप, फूल, धूल, शूल, नैन, चैन, रैन, कजरी, अंजुरी आदि शब्दों का प्रयोग प्रचुरता से होता है. वह अपने आपको अकारण भीड़ में अकेला महसूस करते हैं और ऊलजलूल हरकतों में लगे रहते हैं. जैसे चाट की दूकान पर जब सब गोलगप्पे या आलू की टिकिया खायें तो रूमानी रोगी अपने अंत समय की अपेक्षा में गंगा जल की मांग करते हैं. कच्ची उम्र के बीमार फिल्मी पत्रिकाएं पढ़ते मिलते हैं, पक्की आयु के (अर्थात् चालीस के आसपास वाले) घर का हिसाब-किताब. दिक्कतशुदा बात यह है कि मिर्गी के समान रोमांस भी एक मानसिक रोग है जिसका दौरा कभी भी पड़ सकता है. यहां जूता सुंघाने क्या, लगाने से भी काम नहीं चलता. उनके दिमाग में कहीं-न-कहीं मोर नाचता रहता है.

मुझे अपने जीवन-साथी को लेकर चिंता हो गयी. हम इस मामले में भुक्त-भोगी रहे हैं और बीमारी की गंभीरता से बाकिफ हैं. हुआ यों कि तीन सावन पहले जब हम दफ्तर से घर लौट रहे थे कि अचानक बारिश शुरू हो गयी. पहले हमने एक पेड़ का छाता लगाया. पर जब उसके असंख्य छेदों से भीगकर ठिठुरने लगे तो भागकर एक पक्की इमारत के बरामदे में शरण ले ली. वहां एक और निचुड़े सज्जन खड़े थे. चोर-चोर मौसेरे भाई हों या प्रतियोगी, भीगे लोगों में स्वाभाविक भाईचारा होता है. उन्होंने एक सिगरेट निकाली और उसके दो बराबर के हिस्से कर एक मुझे दे दिया. इकलौती सिगरेट का बंटवारा करना सामान्य समय में उदारता और जाड़े-बरसात जैसी कठिन परिस्थितियों में, दरियादिली का प्रतीक है. मैं तेहेदिल से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनका शुक्रिया अदा कर ही रहा था कि सामने से एक गरजती हुई मोटर-साइकिल गुजरी. आगे लड़का बैठा था और पीछे उससे लिपटी एक लड़की.

"देखा आपने," सिगरेट का धुआं उगल कर आह भरते मेरे भीगे भागीदार बोले.

"जी हां! एक मोटर-साइकिल थी. सवार भीगने से बचने के लिए जल्दी में थे. पीछे की सवारी सीट की सतह से कम और लड़के की गर्दन के सहारे अधिक टिकी हुई थी. वर्ना कभी की गिर गयी होती," मैंने अपनी शरलोक होम्स वाली प्रतिभा का परिचय दिया.

"माफ करियेगा, आप कतई गलत फरमा रहे हैं. वह मना रहे होंगे कि यों ही बारिश होती रहे और वह भीगते हुए घूमते रहें," उन्होंने अपनी राय जाहिर की.

"यह कैसे होगा! पानी बरसता भी रहा तो पेट्रोल तो खत्म हो ही जायेगा." मैंने शंका उठायी.

"आप अजीब 'ड्राई' किस्म के इंसान हैं," उन्होंने मेरे भीगे व्यक्तित्व पर तोहमत लगायी और चालू रहे, "बारिश का असली मजा तो यही उठा रहे हैं. हम भी स्कूटर पर लड़की को यों ही घुमाते थे. पर अब तो उससे शादी हो गयी," वह उदास हो गये.

"अच्छा किया आपने कि भीगने की प्रतियोगिता में हिस्सा लेना बंद कर दिया. इससे खांसी-जुकाम भी हो सकता है." मैंने उनकी हौसला-अफजाई की कोशिश की. पर इसके बाद चुप्पी छायी रही. बारिश थमी तो हम लोग अपनी राह लग लिये.

पर इस घटना के बाद यकायक अपने को भी कुछ हो गया. दफ्तर से 'लोन' लेकर [illegible] आनन-फानन एक स्कूटर खरीदा और फिर उसके बाद से शीला, नीला, गीता, रीता, मीता, सीता को लिफ्ट देने पर आमादा हो गये. दफ्तर के बाद इंतजार करते कि कोई लड़की कृपा करे तो हम उसे घर तक छोड़ आयें. नतीजन घर देर से पहुंचते. साग-सब्जी न लाते. किसी अंधेरे कोने में बैठ कभी रीता का सोचते कभी सीता का. अपना रूमानी भूत तब उतरा जब एक दिन घटामय वातावरण में हमने रीता को उसके घर तक 'लिफ्ट' देने की पहल की और उसने मुस्कराते हुए समझाया, "अंकल! मेरी मानें तो आप भी बस से ही आया-जाया करें. यों भी बिना चश्मे के आपको धुंधला नज़र आता है. कहीं आप नगर-बस को न तक पाये तो!" वह दिन था कि आज का दिन है, हम अपनी रूमानी सूरमाई भूले हुए हैं. हमने पारिवारिक खुशी में इजाफा किया और स्कूटर अपने पुत्र को भेंट कर दिया. कहीं फिर अंकल न कहे, इसलिए हम रीता से बचकर रहने लगे.

हम अतीत में खोये थे कि पत्नी की आवाज़ सुनाई पड़ी, "लड़का बड़ा हो गया है. सारे पुराने उसके काम आ चुके हैं." उनकी कैफियत से जान में जान आयी. कपड़े गये तो गये. बीवी तो सलामत है. औरतों की आज़ादी के माहौल का खतरा समझ आने लगा. यदि पति ऐरे-गैरों को 'लिफ्ट' दे सकता है तो पत्नी क्यों नहीं ईंट का जवाब पत्थर से दे सकती!

हमने लड़के द्वारा तजे कपड़ों का निरीक्षण कर एक नीली जीन्स और उससे मेल खाती कमीज अपने लिए चुनी. अपनी वर्दी में दफ्तर पहुंचे तो हमें देखकर दूसरों की 'खी-खी' की जैसे छूत की बीमारी लग गयी. "जो थोड़े बहुत बचे हैं, उन बालों को रंग लीजिये तो पूरा कायाकल्प हो जायेगा." एक आवाज़ आयी. हमने दूरदर्शन के विज्ञापन की तर्ज पर सबको समझाया कि बरसात में ऐसे कपड़ों के इस्तेमाल में ही समझदारी है. न सिर्फ पतलून मैलखोर है, आजकल फैशन में भी है. सबकी निगाहें अपनी ओर टिकी देखकर हमें लगा कि हम दफ्तर के देश में इलाहाबाद का उप चुनाव हो गये हैं. शाम तक सब अपनी दूरदर्शिता के कायल हो चुके थे. दोपहर के बादल घिरे. कुछ अंधेरा सा छाया और गरज के साथ छींटे पड़ने लगे. हमने दफ्तर के बाद अपने यौवन के नायक राजकपूर की आवारा स्टाइल में पतलून के पांइचे ऊपर चढ़ाये और छाता खोल अकेले हो 'श्री चार सौ बीस' के युगल-गीत 'प्यार हुआ इकरार हुआ' की धुन गुनगुनाते हुए बस-स्टाप की तरफ चल दिये.

हमने विजयी मुद्रा में पीछे मुड़कर छाता-हीन नियमित कपड़े पहने अपना मजाक उड़ाने वाली टोल को हिकारत की नज़र से ताका. चश्मे पर पड़ी बूंदों से धुंधलायी दृष्टि के बावजूद हम जैसे किसी 'मेनहोल' में गिर गये. हमें 'अंकल' कहनेवाली रीता किसी मुस्तंडे के साथ मोटर-साइकिल पर जा रही थी. हम हड़बड़ाये और छाते वाला हाथ नीचे आकर एक साइकिलवाले से जा टकराया. वह हमारे ऊपर गिरा और हम चारों खाने चित्त सड़क पर. दफ्तर और बस-स्टाप की भीड़ ने मुफ्त के दमदार दंगल के तमाशे पर हो-हल्ला मचाया. साइकिलवाले ने असभ्य भाषा का प्रयोग कर हमारे पुरखों तक को ठिकाने लगाने की धमकी दी. पर कोई भी माई का लाल इस पतित को सहारा देने आगे न आया. हम हांफते-कराहते हुए उठे और जान बचाने के ओलंपिक में दौड़ लिये. साइकिलवाले दुश्मन ने पहले हमारे गिरे चश्मे को पैरों से रौंदा और फिर आसानी से हमें पकड़ लिया. वह हमारी गर्दन गर्दन मरोड़ने जा ही रहा था कि किसी संत सिपाही ने हमें सता होने से बचा लिया.

हमारे मन के किसी कोने में बसा रोमांस का राजकपूर हमेशा-हमेशा के लिए मर चुका था. पर 'बरसात' तो रहेगी. खास कर मोटर-साइकिल पर जाती, अगूंठा दिखाती मुंह बिराती बरसात! □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गोविंद मिश्र

त्यों त्यों प्रकट होत उर अंतर कांच कलस जल झाईं

जतीपुरा गांव.

रघु को यह जगह बहुत भायी थी इसलिए इस बार जो उनका मन उचटा तो यात्रा के कार्यक्रम से हटकर पीछे लौट आये.

पर्वत की छोटी-सी श्रेणी, ऊंचाई इतनी मामूली कि पहाड़ी ही कहेंगे... पर नाम– गोवर्द्धन– कितना बड़ा हो गया है उस अनुपात से. ऊपर श्रीनाथजी का पुराना मंदिर... मंदिर का झंडा फर्रर्... फरर... अपनी कम, गोवर्द्धन की कीर्तिपताका ज्यादा फहराता हुआ. पर्वत पर जहां-तहां चरती गायें और बीच-बीच में चिहक-चिहक उठते मोर... कोई मोर बड़ी शान से पर्वत की चोटी पर खड़ा, गर्दन ठुनका-ठुनका कर चारों ओर देखता हुआ. नीचे मुखारविंद का स्थान.

गांव की मुख्य सड़क पर से परिक्रमा बह रही थी. गोवर्द्धन की परिक्रमा साल-भर चलती रहती है, पर एकादशी से पूर्णमासी के बीच ज्यादा ही लोग होते हैं. देश के हर कोने से आये लोग... कोई पुरानी मनौती के पूरा होने पर आते हैं, कोई नयी करने... और कुछ ने ऐसे ही नियम बांध रखा है, इसलिए. मुड़िया पूनो को तो परिक्रमा के लिए मेला लग जाता है– आषाढ़ की पूर्णमासी... बसों की खचाखच, उमसवाली गर्मी. यात्रियों के लिए कोई सुविधा नहीं जैसी बड़े तीर्थों में होती है... फिर भी आदमी भर-भराकर गिरता है. श्री चैतन्य के प्रिय शिष्य श्री सनातन गोस्वामी परलोकवासी हुए थे तो चारों ओर से लोग दौड़े आये. सभी ने मुंडन कराया, पूर्णिमा के दिन विमान सजाकर उन्हें श्री गोवर्द्धन की सातकोसी परिक्रमा करायी और वृंदावन में श्री मदनमोहन मंदिर के पीछे समाधिस्थ किया. तभी से चली आ रही है मुड़िया-पूनो. यह परिक्रमा तो पूरे साल चलती रहती है. परिक्रमा माने... गिरिराज के किसी बिंदु से आरंभ करके सात कोस का चक्कर नंगे पैर लगाकर उसी बिंदु पर खत्म करना. जब यात्रा यहां ठहरी थी तब एक दिन परिक्रमा के लिए रखा गया था– जो चाहें परिक्रमा कर आयें. रघु टाल गये थे... कौन चले पंद्रह किलोमीटर पैदल, वह भी नंगे पांव. पाल में पड़े किताब बांचते रहे थे. ब्राह्मणी चुपचाप सरक गयी थी. वह तो सोचती ही नहीं, थकती भी नहीं. जब भी इधर आती है तो परिक्रमा लगा आती है, दस-बारह बार तो लगा ही चुकी होगी!

रघु आज जतीपुरा के चौराहे के एक चबूतरे पर बैठे एकदम पास से देख रहे थे– परिक्रमा बह रही है... रह-रहकर तरह-तरह के लोग निकलते जा रहे हैं. औरतों की टोलियां, कितनी बच्चों को कांख में दबाये, कोई मोटी औरत पसीना-पसीना... अपने को हर हाल में आगे की ओर खींचती हुई. एक बूढ़ा लाठी टेक-टेक कर डग भरता हुआ! कोई रोगी! किसी को ठीक से दिखता नहीं, फिर भी चला जा रहा है. जाहिर है ये लोग इतना कष्ट नहीं उठा सकते, पर नशे-जैसी कोई तंद्रा-सी उनके चेहरे पर है... यह उन्हें खींचे लिये जा रही है. कुछ ध्यान में नहीं है इस वक्त... सिर्फ चलना, चलते जाना! वे चल रहे हैं, अपने कष्टों के बावजूद चल रहे हैं, चले जा रहे हैं.

चलो... चलते रहो. अपने हिस्से के दुःख की गठरी कांख में दबाये चलो, हर हाल में चलो, चलते रहो जब तक चक्र पूरा नहीं हो जाता...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यही तो है परिक्रमा और यही है जीवन... रघु का कांधा और पता नहीं क्या हुआ कि अगले क्षण वे अपनी चप्पलें एक दुकान में रख परिक्रमा में उतर गये और चलने लगे.

चौराहे से गांव के बाहर निकलने-निकलने तक जहां-तहां से उखड़ी हुई वह सड़क पावों में गड़ी, पर गांव के बाहर आते ही तलहटी थी- गोवर्द्धन पर्वत के ठीक नीचे मंझौले पेड़ों की छाया में से गुजरता हुआ रास्ता, पांव तले चिकनी-चिकनी रेत. नंगे पांव चलना भला लग रहा था. शांति मन पर बिछती-सी लगी... पर जैसा रघु के साथ हमेशा होता है, शांति में स्थिर-मन होते-होते रह गये. फिर ढेरों सवाल उठने लगे- धर्म ही क्यों, प्राकृतिक रमणीयता में आनंद लेने मात्र के लिए भी यह परिक्रमा की जा सकती है. जीवन अपनी सुंदरता के लिए भी क्यों अपने से बाहय तत्वों पर आश्रित हो... क्यों धर्म चाहिए ही यहां? जीवन का स्वभाव तो पानी-जैसा है — न खट्टा, न मीठा, न तीखा, न फीका. हमारी मनोदशा ही उसमें अलग-अलग गुण पैदा करती है, पर मनोदशा कहां से आती है... दुःख-सुख से, या कि दुःख-सुख है ही नहीं — ये वे रंग हैं जो हम अपने मनोभावों द्वारा ग्रहण करते हैं, स्वयं निर्मित करते हैं. पर नहीं, संयोग-वियोग तो प्रत्यक्ष दिखाई देते हैं — प्रिय मिला तो सुख, बिछुड़ा तो दुःख... यहां यह भी कह सकते हैं कि प्रिय तो अपने रास्ते चला जा रहा है, हमी हैं जो ग्रहण करते हैं — सुख या दुःख. तो वह किसकी प्रेरक शक्ति से कहां चला जा रहा है...

सवाल... सवाल. इधर से उधर जाती छोटी-छोटी पगडंडियों से— कहीं एक-दूसरे पर सवार, कहीं एक-दूसरे को काटते हुए, कहीं उछले तो कहीं धुंधले— थोड़ा आगे जाकर खोते हुए...

राह... कहां? गोवर्द्धन कस्बा सामने था पर परिक्रमा वाला रास्ता किधर से था? रास्ता न दिखाई दे तो— महाजनो येन गता:... रघुनाथ अपनी चाल थोड़ा तेज कर चलने वाले की बराबरी पर आ गये. उसके साथ-साथ कस्बे वाली सड़क को काटते हुए बाजार के बीच से राधा-कुंड की तरफ.

"मैंने सोचा था पर्वत के नीचे-नीचे ही जाना होगा, पर परिक्रमा तो एक बस्ती से दूसरी में लिये जा रही है." रघुनाथ ने बात छेड़ी.

"गोवर्द्धनजी चार मील लंबे हैं. ऊंचाई बहुत नहीं है. कहीं-कहीं तो वे भूमि के बराबर हैं. ऐसी जगहों पर बस्तियां बस गयी हैं. इसलिए परिक्रमा इन बस्तियों से भी होकर जाती है." आदमी ने सूचना-सी दे दी और अपनी रफ्तार चलता रहा.

"पुराणों में गोवर्द्धन की लंबी कथा आयी है" — रघु को बतास सताने लगी थी. कुर्ते की जेब से सुंघनी निकाली और झटके से एक खींच लेकर बोलने लगे, "कहा है जब भगवान श्रीकृष्ण पृथ्वी का भार उतारने के लिए भूतल पर आने को प्रस्तुत हुए, उसी समय यह चौरासी कोस वाली भूमि चौबीस वनों के साथ भगवान के लोक से यहां आयी. गोवर्द्धनजी ने भी तभी पश्चिम दिशा में कहीं द्रोणाचल के घर पर जन्म लिया. एक समय पुलस्त्य ऋषि उधर से निकले और उन्होंने गोवर्द्धन को देखा. उन्होंने गोवर्द्धन के पिता द्रोणाचल से कहा— मैं काशी का निवासी मुनि हूं, काशी में कोई पर्वत नहीं है, वहां के लिए तुम अपने पुत्र को मुझे प्रदान करो. द्रोणाचल ने मुनि के डर से प्रस्ताव स्वीकार कर लिया. लेकिन गोवर्द्धन ने कहा, "मुने, मेरा शरीर आठ योजन लंबा, दो योजन ऊंचा और पांच योजन चौड़ा है. आप किस प्रकार मुझे ले चलेंगे." पुलस्त्यजी ने कहा, "बेटा, तुम आनंद से मेरे हाथ पर बैठे चलो. गोवर्द्धन तो भगवान के लोक-गोलोक से आये थे और उनकी ललक ब्रजभूमि में रहने की थी इसलिए उन्होंने शरारत से एक शर्त रख दी — मुनि ने जहां उन्हें हाथ से उतारा, गोवर्द्धन फिर वहीं बैठ जायेंगे." मुनि ने शर्त मान ली. ब्रज आते ही गोवर्द्धन ने अपना भार बढ़ाना शुरू किया, मुनिवर को थकान आने लगी, लघुशंका से निवृत्त होने तक के लिए उन्होंने गोवर्द्धन को हथेली से उतारकर भूमि पर रख दिया. लौटकर जब वे पुनः गोवर्द्धन को उठाकर हथेली पर रखने लगे तो पर्वत टस-से-मस न हुआ. उसने मुनि को शर्त की याद दिलायी. मुनिवर को द्रोण-पुत्र की चालाकी समझ में आयी, उन्होंने शाप दिया, "पर्वत! तू बड़ा ढीठ है. तूने मेरा मनोरथ पूर्ण नहीं किया, इसलिए तू प्रतिदिन तिल-तिल भर क्षीण होता चला जा!"

"तो मुनि के शाप से गोवर्द्धनजी दिन-प्रति-दिन थोड़ा-थोड़ा पृथ्वी में धंसते चले जा रहे हैं." साथ चलने वाला चकित था, मन में रघु के ज्ञान के लिए आदर-भाव.

"देखिएगा... कि गोलोक स्वामी श्रीकृष्ण को पृथ्वी पर आना था, इसलिए ऊपर से अपने साथ सब कुछ लेते आये- राधाजी, जमुना जी, गोलोक भूमि और गोवर्द्धन पर्वत भी. साथ ही, ऐसा नियमन कि सब कुछ अंततः वहीं पहुंच जाये जहां से वह आरंभ हुआ था. हमारे यहां सब कुछ वृत्त में है! समय भी आगे नहीं जाता, चक्र में घूमता है. परिक्रमा ही परिक्रमा है. ब्रज-यात्रा भी एक परिक्रमा, उसके भीतर गोवर्द्धन की परिक्रमा, नंदगांव की परिक्रमा, भीतर-भीतर मंदिरों में परिक्रमा. आरंभ और अंत एक ही. इसीलिए समय की यात्रा को भी कालचक्र कहते हैं. किसी के वापस जाने की यात्रा भी ऐसे संपन्न होती है जैसे ईश्वर को उससे कोई लेना-देना ही नहीं — पुलस्त्य का शाप उपक्रम बन जाता है. गोवर्द्धन जहां से आये, वहीं चले जायेंगे...

"क्या ऐसे ही कभी यमुनाजी भी...?"

"हां, सूख जायेंगी." कुछ दृढ़ता से, कुछ कठोरतापूर्वक कह गये रघु काल की जो स्थापना वे कर रहे थे, उसमें यहीं पहुंचना था.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसा लगा कि सहयात्री को रघु की बात अच्छी नहीं लगी. उसने अपनी चाल तेज कर दी थी. रघु पीछे छूटते चले गये.

बस यही दिक्कत है... जहां कोई ऐसी बात निकली जो इन लोगों के विश्वास को ठेस पहुंचाये कि बस मुंह मोड़ लेंगे. अरे भाई! रघु भी धर्म को मानता है पर उसे बुद्धि और तर्क से समझो. यह क्या कि यमुनाजी तो देवी हैं... इसलिए चिरंतन हैं. इसी तरह जतीपुरा में कोई बता रहा था कि जिन पर गोवर्द्धन की कृपा होती है, उन्हें वे परिक्रमा में सर्प, सिंह, ग्वाल-बाल या गौ के रूप में दर्शन देते हैं. अब सर्प सिंह न सही, गौ-गोप तो मिलेंगे ही, क्योंकि रास्ते में बस्तियां हैं. इन्हीं सब चीजों ने हमारे धर्म को उपहास की चीज भी बनाया है. ऐसे ही एक जमावड़े में रघु कह बैठे कि दरअसल कृष्ण मथुरा के यादवों में आशा-किरण के रूप में उभरे थे, इतिहास-पुरुष बन गये... इसलिए पहले यादवों ने, बाद में उत्तर भारत ने उन्हें भगवान मानना शुरू कर दिया. उनकी मां देवकी को अपना पुत्र देखे बिना सोलह वर्ष बिताना पड़े थे. सांत्वना के लिए उन्हें पकड़वा दी गयी थी एक बालक की मूर्ति... जिससे वे बोलती-बतियाती रहतीं. इस तरह शुरू हुई और चल पड़ी- बाल-गोपाल की पूजा. यह सुनते ही लोग उठ-उठकर जाने लगे कि कहां का नास्तिक आ गया. रघु पूछता है क्यों नहीं किसी जीवित व्यक्ति को भगवान की तरह पूजा जा सकता... देवकी ने पूजा ही था. सोलह वर्ष के कृष्ण जब मथुरा आ गये, उन्हें देख भी लिया तब भी वे पूजती रहीं. जिससे भी आपको तृप्ति, शांति मिले. उसमें अवतार, रहस्यात्मकता... यह सब जोड़ने की जरूरत कहां है, खुद को भुलावा क्यों दिया जाये!

आदमी को ऐसे भुलावे क्यों चाहिए? पशु-पक्षियों की तरह क्यों नहीं सिर्फ खाते-पीते, चहकते-फुदकते, बैठते-उड़ते ही धरती पर का अपना समय खत्म किया जा सकता. ऐसे भुलावों को ही सम्मिलित रूप से धर्म क्यों मान लिया जाता है? शायद साधारण आदमी की जरूरत के लिए यह चाहिए. जीवन को कोई बना-बनाया अर्थ मिल जाता है... बना-बनाया विचारों-भावनाओं का एक स्ट्रक्चर– एक लीक जिस पर आंख मूंद चले चलो. मार्क्सवाद भी यही है. दोनों से ही रघु को शिकायत रही है कि वे व्यक्ति की स्वतंत्रता के लिए गुंजाइश नहीं छोड़ते. वे शायद हैं भी इसीलिए, उनके लिए जिसके पास सोचने की शक्ति नहीं है. मार्क्सवाद धर्म से बैर इसीलिए देखता है कि कहीं उसकी पोल न खुल जाये. रघु पूछेगा कि कोई मार्क्सवादी होते हुए भी धार्मिक क्यों नहीं हो सकता तो उसे पार्टी से निकाल दिया जायेगा.

डामर की जमी जमायी सड़क... कंकड़ नंगे पैरों में चुभते थे. रघु सड़क से हटकर कच्चे में चलने लगे. एकाएक कोई बबूल का कांटा चुभा... गनीमत कि छूते ही पैर ऊपर हो गया. उधर कंकड़, इधर कांटे. रघु वापस सड़क पर... कंकड़ ठीक. पांव पत्थर-कंकड़ों के थोड़ा अभ्यस्त हो गये हैं, वे उनको दरकिनार करते हुए पड़ते हैं, जहां न बच सके वहां पैर अपने आप हल्के होकर पड़ते हैं, या पड़ते ही हल्का हो जाते हैं. इधर-उधर स्वतः मुड़ जाते हैं ताकि आघात सीधा और जबर्दस्त न लगे.

सड़क पर एक तरपन एक वृद्धा डंडौती-परिक्रमा कर रही थी. उसके सामने बिछा बोरे का एक छोटा टुकड़ा... टुकड़े के छोर पर टिकी भगवान की फोटो, बगल में एक सौ आठ गिट्टियों से भरा टीन का कनस्टर. यह कनस्टर, बोरे का टुकड़ा और प्रभु का चित्र लेकर वह उस जगह से शुरू करती है जहां कल छोड़ा था. पृथ्वी के उस बोरे-भर टुकड़े के ऊपर दंडवत्– हाथ-पैर फैलाकर पट लोट जाना कि शरीर के हर अंग से भूमि का स्पर्श हो, स्वयं को हर तरह से दीन और असहाय मान पूर्णरूपेण प्रभु को समर्पित कर देना. एक दंडवत के बाद एक गिट्टी वह पीछे के ढेर से आगे के ढेर पर डाल देती है, गिनती के लिए. इसी तरह उसकी जगह पर 108 बार, फिर जहां हाथ छूते थे वहां से आगे. बोरा बिछा देना... और उस स्थल पर 108 बार. रघुनाथ महिला के पास रुक गये.

"मां जी, कहां से उठाई थी परिक्रमा?"

"राधाकुंड. यह दूसरी है."

"एक पहले कर चुकी हो?"

"हां... पहली की थी कि हे भगवान, हमारे ये पांव ठीक कर दो... चलते नहीं बनता था बेटा!"

"ठीक हो गये पैर?"

"हां.. देख लो. अब तो दौड़ भी सकती हूं." वृद्धा की आंखों में चमक थी.

"पिछली परिक्रमा में कितने वर्ष लग गये थे?"

"छः साल से थोड़ा ऊपर."

"इस बार?"

"कौन जाने... अभी तो उठाई ही है."

"पिछली बार तो मानता थी कि पैर ठीक हो जायें, इस बार भी कोई मानता है?"

"कुछ नहीं... सोचा भगवान ने पांव ठीक कर दिये, लंगड़ी हो जाती तो क्या होता अपना! पहली बार परिक्रमा अपने स्वत्व से उठायी थी, इस बार सोचा ऐसे ही कर डालूं पांव ठीक हो गये, चलो इसीलिए."

चली जा रही है... यह भी तय नहीं कि परिक्रमा जीवन के शेष वर्षों में पूरी भी कर सकेगी वह.

एक यही महिला नहीं, रघुनाथ को रास्ते में डंडौती परिक्रमा करते कई स्त्री-पुरुष मिले. उनकी जैसी साधारण परिक्रमा करने वाले यात्री पास से निकलते हैं, कुछ दान-दक्षिणा बोरे या दरी के टुकड़े पर डालते हैं. उसी में गुजर-बसर. अयाचित प्रवृत्ति बगैर मांगे जो मिल जाये उसी से गुजर-बसर. संपत्ति के नाम पर केवल एक पत्थर-भरा कनस्टर, बोरी या दरी का टुकड़ा और सामने भगवान का चित्र. रघु को यह अपरिग्रही भावना अच्छी लगती है. कितने ऐसे जो एक सौ आठी की जगह साधारण डंडौती परिक्रमा करते हैं– एक दंडवत् और बढ़े आगे, इसी तरह दिनभर में जितना आगे पहुंच गये, अगले दिन वहां से शुरू.

कितने लोग सालों से गिरिराज की ये तरह-तरह की परिक्रमाएं करते चले आ रहे हैं और यह सब ब्रजभूमि-भर में नहीं, भारत के कितने स्थानों पर... और जो यह क्रम सैकड़ों नहीं, हजारों वर्षों से चला जा रहा है... यह सब क्या मात्र अंधविश्वास, मूर्खता है? हर युग में आयी नयी-नयी समझ वर्षों लंबी और भारत के दूर-दूर कोनों तक चौड़ी फैली इस परंपरा को क्यों नहीं खत्म कर पायी? जो इन चीजों से जुड़े हैं, वे सबके सब अंधविश्वासी कहे जा सकते हैं? आधुनिकता, शिक्षा या तर्क के आने से जहां पर आस्था सूख जाती है, वहां भी जैसे कोई जड़ बची रह जाती है. क्यों रघुनाथ के मन में कहीं कुछ हिल्गा रहा और ये यात्रा पर निकल आये? □

अगले अंक में जारी...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुधीश पचौरी

अभिधा में कथा नहीं चलती

'अमीर खुसरो' धारावाहिक पर प्रकाशित प्रतिक्रियाएं संप्रेषण की एक महत्वपूर्ण समस्या की ओर इशारा करती हैं: 'तमस' के दौरान भी ऐसी समस्या सामने आयी थी किंतु उसकी श्रेष्ठ कलात्मकता ने कला रूपों को 'अभिधा' में समझनेवालों को मुंह तोड़ उत्तर देते हुए संदेश और 'माध्यम' के सफल संप्रेषण का नया मानदंड स्थापित किया था.

खुसरो की सबसे कमजोर रग यही है कि वह एक यथार्थ की रचना की जगह इतिहास की अभिधामूलक व्याख्या को कच्ची सामग्री की तरह पेश करता है जो सच तो है मगर मौजूदा माहौल में जिसके अर्थों को सांप्रदायिक और धर्मांध रंग दे दिया गया है. इसलिए यदि सिर्फ 'खुसरो' को संप्रेषित किया जाता तो खुसरो पर उठनेवाला विवाद अधिक सार्थक होता.

निःसंदेह, 'खुसरो' को एक निश्चित इतिहास खंड में रखकर देखना जरूरी था. खुसरो को सांप्रदायिक सौहार्द और एकता का एक बड़ा प्रतीक मानकर चलना भी सर्वथा उचित है. यदि हिंदी साहित्य का कोई भी इतिहास उठाकर देखें तो हम पाते हैं कि खुसरो मध्यकालीन नवजागरण के कदाचित प्रथम पुरुष हैं और कई मामलों में उनका व्यक्तित्व नवजागरण में जन्मनेवाली बहुआयामी प्रतिभा का पुंज है जो अन्यत्र दुर्लभ है. वे इस्लाम में स्वच्छंदतावाद के प्रवर्तक हैं और सूफी प्रेम काव्य के पुरोधा हैं. वे हिंदी के आदि कवि कहे जाते हैं और भक्त कवियों से भी पहले के लोक भाषा के कवि हैं. वे संगीत के मर्मज्ञ पंडित एवं रचयिता भी हैं. उनका व्यक्तित्व इस तरह इतिहास कम, किंवदंती अधिक है. ऐसे व्यक्तित्व को कुछ मूढ़मति यदि इतिहास में हुए तीन-चार 'खुसरो' के चेहरों से मिला-मिलाकर देखते हैं और फिर इस सीरियल को बंद करने की मांग करते हैं तो स्पष्ट हो जाता है कि ऐसों के लिए इतिहास की वही व्याख्या अंतिम है जिसे ऐसे स्वतः निर्वाचित इतिहासज्ञ उचित समझते हैं. मगर लोकतंत्र में ऐसे मूढ़ों के हाथों इतिहास की कमान नहीं दी जा सकती. खुसरो पर आयी दलीलें अधिकतर ऐसे ही अभिधार्थियों की हैं.

मगर, 'खुसरो' की सार्थकता को रेखांकित करते हुए यह स्वीकारा जाना चाहिए कि ऐसी प्रक्रियाएं बहुत कुछ एक धारावाहिक के रूप में 'खुसरो' की कलात्मक कमियों की वजह से भी पैदा हो रही हैं एक धारावाहिक के संप्रेषण की समस्या यहीं उठती है. विवाहस्पद और संवेदनशील विषयों को अपने केंद्र में रखकर चलने वाले सीरियल की चुनौती 'तमस' की तरह दुहरी होती है. वहां न कला के लिए संदेश की तिलांजलि दी जा सकती है और संदेश के लिए कलात्मकता की. 'खुसरो' में संदेश इस कदर अभिधेय बना दिया गया है, कई बार लगता है कि हम सीरियल न देखकर यू.जी.सी. का कोई शिक्षा कार्यक्रम देख रहे हों. खुसरो के चरित्र और व्यक्तित्व की परिकल्पना को साकार करने के बजाय असली मेहनत कहीं और की गयी है और वह भी कोई मेहनत नहीं है.

हम जानते हैं कि इतिहास को निनंधारियों और मिथों के रूप में देखने वालों ने मध्यकालीन इतिहास को सांप्रदायिक किस्सों में बदल दिया है. जिनमें मुसलमान शासकों की व्याख्या धार्मिक दृष्टि से की जाती है और इन्हें आसान बनाकर खूब प्रचारित भी किया गया है. इतिहास की ऐसी व्याख्या न केवल इतिहास विरोधी है बल्कि जन विरोधी और सांप्रदायिक भी है. कोई भी आधुनिक और प्रगतिशील सोचवाला निर्माता, निर्देशक यदि इस तरह की चीजों के विरुद्ध कुछ करता है तो उसके पुनीत उद्देश्य का स्वागत किया जाना चाहिए.

मगर हम सोचें कि जैसी अपेक्षा थी, वैसा स्वागत 'खुसरो' को क्यों न मिल जाए? कारण स्पष्ट है कि वह 'तमस' की तरह यथार्थ की रचना कम, यथार्थ का अभिधा संस्करण अधिक है. सीरियल एक रचना भी है जो रचना के जरिए व्याख्या करती है उसे 'आलोचना' या 'उपदेश' में तो कतई नहीं घटाया जाना चाहिए. एक इतिहास की गलत व्याख्या का जवाब एक सही व्याख्या ही हो सकती है मगर ऐसी किताबों, मिथों और किस्सों-कहानियों का जवाब किताबों से लिखित शब्द से बेहतर दिया जा सकता है. शिक्षा के पाठ्यक्रमों में अगर ऐसा जहर भरा है तो उसे उस स्तर पर निपटना जरूरी है. पाठ्यक्रमों के दोषों को दुरुस्त करने के लिए शिक्षा प्रणाली में रद्दो-बदल जरूरी है. उसके रोगों को एक सीरियल में उपदेश देकर दूर नहीं किया जा सकता. सीरियल से पूरे देश की ठीक वैसी ही कक्षा नहीं लगायी जा सकती जैसी कि फकीर बाबा दंगाग्रस्त माहौल में फंस गये पब्लिक स्कूल के बच्चों की लगाते हैं. इसीलिए पटकथाकार सांप्रदायिक विद्वेषवादी व्याख्याओं से लड़ने के लिए जो रास्ता तलाशता है, वह गंभीर कम, ऊबाऊ अधिक लगता है. यह रास्ता खुसरो के रास्ते फकीर बाबा तक मुड़ता है और फिर वह नेहरू की 'आत्मकथा' तथा 'डिस्कवरी' में कैद हो जाता है. जबकि इतिहास की सुसंगत व्याख्याएं नेहरू के जमाने से काफी आगे आ चुकी हैं.

नेहरू की धर्मनिरपेक्षवादी दृष्टि इतिहास में महत्वपूर्ण योगदान करती है मगर सीरियल में उसकी सही व्याख्या की जगह चालू 'सर्वधर्म समभाव' पर ही अधिक जोर दिया गया है. एक खंड में हिंदू धर्म के एकेश्वरवाद और इस्लाम के एकेश्वरवाद की तुलना करा दी गयी है. इससे निष्कर्ष निकाला गया है (यही उद्देश्य भी था) कि सब धर्म एक हैं. तर्क यों चलेगा कि चूंकि सब धर्म एक ही हैं. अतः धर्मों में लड़ाई उचित नहीं.

इसके मुकाबले 'तमस' सांप्रदायिकता की उपदेशात्मक या किताबी व्याख्या न होकर रूपात्मक रचना और व्याख्या दोनों थी. वह एक यथार्थ रचती थी और वही एक संदेश बन जाता था. यथार्थ के रूप से उसका संदेश कहीं अलग से नहीं गिरता था, इसलिए यदि उसका विरोध था तो उसने अपना सहजात समर्थक भी तैयार किया, जबकि 'खुसरो' के विरोधी तो आसानी से बने मगर समर्थक आसानी से नहीं बने. खुसरो की असफलता में यही संदेश दिया हुआ है जिसे गंभीर रचनाकारों को हृदयंगम करना चाहिए □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ क्षण, रस्किन के संग

सुधाकर मिश्रा

"अभी दो मिनट में आया. जरा अपने इष्ट देव को प्रणाम कर लूं." कहकर रस्किन मुस्कुराते हुए अपने बैडरूम में चले गये.

इष्ट देव और रस्किन! मेरे लिए यह बिल्कुल नया अनुभव था. इनका कौन इष्ट देव हो सकता है? अपने को रोक न पाया. अंदर चला ही गया. देखा कि दिवार पर चिपकी लारेल व हार्डी की किसी अंग्रेजी कामिक से फाड़ी तस्वीर से सम्मुख खड़े कुछ कर रहे हैं.

"तो ये हैं तुम्हारे इष्ट देव!" मैंने ठहाका लगाते हुए कहा.

"हां! भाई! जितना इन दोनों ने मुझे हंसाया है, शायद किसी और ने नहीं. बस जरा नजरिया बदलने की देर है, बोझिल से बोझिल क्षण भी कैसे हल्के हो जाते हैं, यह मैंने इन्हीं से सीखा है."

मेरे घर के पास ही एक अंग्रेजी स्कूल है. जहां राकी पढ़ता है. उसको दाखिल कराने जब वे आये तो मुझे भी साथ ले लिया. हैड मिस्ट्रेस ने टैस्ट लिये तो वह गणित के घटाने के प्रश्नों में फेल, जोड़ के प्रश्नों में पास. वे बोलीं कि अंग्रेजी तो ठीक है लेकिन राकी गणित में कमजोर है, घटाने के प्रश्न ठीक नहीं कर पाता. रस्किन हंसते हुए बोले, "मैम! यह गणित में कमजोरी नहीं, बल्कि यही दर्शाता है कि राकी का जीवन के प्रति दृष्टिकोण कितना आशावादी (पाजिटिव) है, तभी तो घटाने जैसे नकारात्मक (नेगेटिव) पहलुओं पर ध्यान नहीं दे पाता. हैड मिस्ट्रेस के लिए व्याख्या बिल्कुल नयी व रोचक थी. मुस्कराते हुए दाखिला कर लिया.

एक दिन टैक्सी में उनके साथ देहरादून से आ रहा था. बगल में बैठे एक सज्जन रस्किन के उपन्यास 'रूम आन दि रूफ' बड़े मगन होकर पढ़ रहे थे. मुझसे न रहा गया. रस्किन की ओर संकेत करते हुए उनसे बोला, "यह किताब इन्हीं की ही है." वे सज्जन गुस्से में भर गये. कहने लगे, "कैसे! अभी ही तो मैंने इसे स्टेशन की बुक स्टाल से खरीदा है!" रस्किन ने हंसते हुए मुझे चुप रहने का इशारा किया

रस्किन से मेरी मुलाकात बहुत पहले जब मैं मसूरी आया ही था, बड़े मजेदार ढंग से हुई थी. मैं अपने कमरे की खिड़की से कुछ भारी बदन, चश्मा लगाये हुए, भूरे बाल वाले, मंझोले कद के लगभग तीस बत्तीस वर्षीय एक अंग्रेज को एक छोटे से हिंदुस्तानी बच्चे का हाथ पकड़े अकसर आते-जाते देखा करता था. कई बार उस लड़के को गढ़वाली लहजे वाली हिंदी में और उस अंग्रेज को अंग्रेजी लहजे वाली टूटी-फूटी हिंदी में, अंग्रेजी में बातचीत करते हुए सुना था. अकसर बच्चों के सवाल लंबे और बड़ों द्वारा दिये गये उत्तर छोटे या 'हां' 'हूं' में होते हैं लेकिन इन दोनों के बीच लड़के के सवाल छोटे और उनके जवाब लंबे हुआ करते थे. वह अंग्रेज बातें करते-करते कभी रुक जाता, कभी किसी जंगली फूल, झाड़ी या पेड़ के पास खड़े होकर उस लड़के को कुछ बतलाता रहता. कभी-कभी मैं इन दोनों को सड़के के किनारे की मुंडेरों पर बैठे सूर्यास्त या वर्षा से धुली-धुलाई दून घाटी की ओर निहारते देखता.

इनसे मिलने की उत्सुकता बढ़ती ही गयी. एक दिन जब उस अंग्रेज के साथ वह लड़का नहीं था तो मुझे बातचीत करने का बहाना मिल गया.

"क्या बात? आज वह लड़का आपके साथ नहीं है." मैंने पूछ ही लिया अंग्रेजी में.

"कौन? राकी! वह तो अपनी मां के साथ कल गढ़वाल अपने गांव चला गया. उसके पिता मेरे यहां ही काम करते हैं काफी अरसे से. आप भी शायद यहीं कहीं रहते हैं." उन्होंने बहुत-सी मीठी आवाज में अंग्रेजी में कहा.

उनकी इस खट आत्मीयता में मुझे गद्गद कर दिया. मैंने अपने मकान की ओर संकेत करते हुए कहा कि मैं वहां रहता हूं और उनके साथ ही चलने लगा.

"अरे! मैं भी पहले इसी मकान में रहता था लेकिन मिस बीस के भूत के कारण इसे छोड़ना पड़ा." वे हंसकर बोले.

"मिस बीस! ये कौन हैं, मैंने तो इनके बारे में कुछ नहीं सुना." मैंने विस्मय से पूछा.

"यह एक लंबी कहानी है. कभी इस पूरे मकान में यही मिस बीस अकेले रहा करती थी. कुत्ते पालती थी और बेचती थी. बहुत रोबीली महिला थी. एक दिन वे अपने बैडरूम में मृत पायी गयी. सुना उनकी

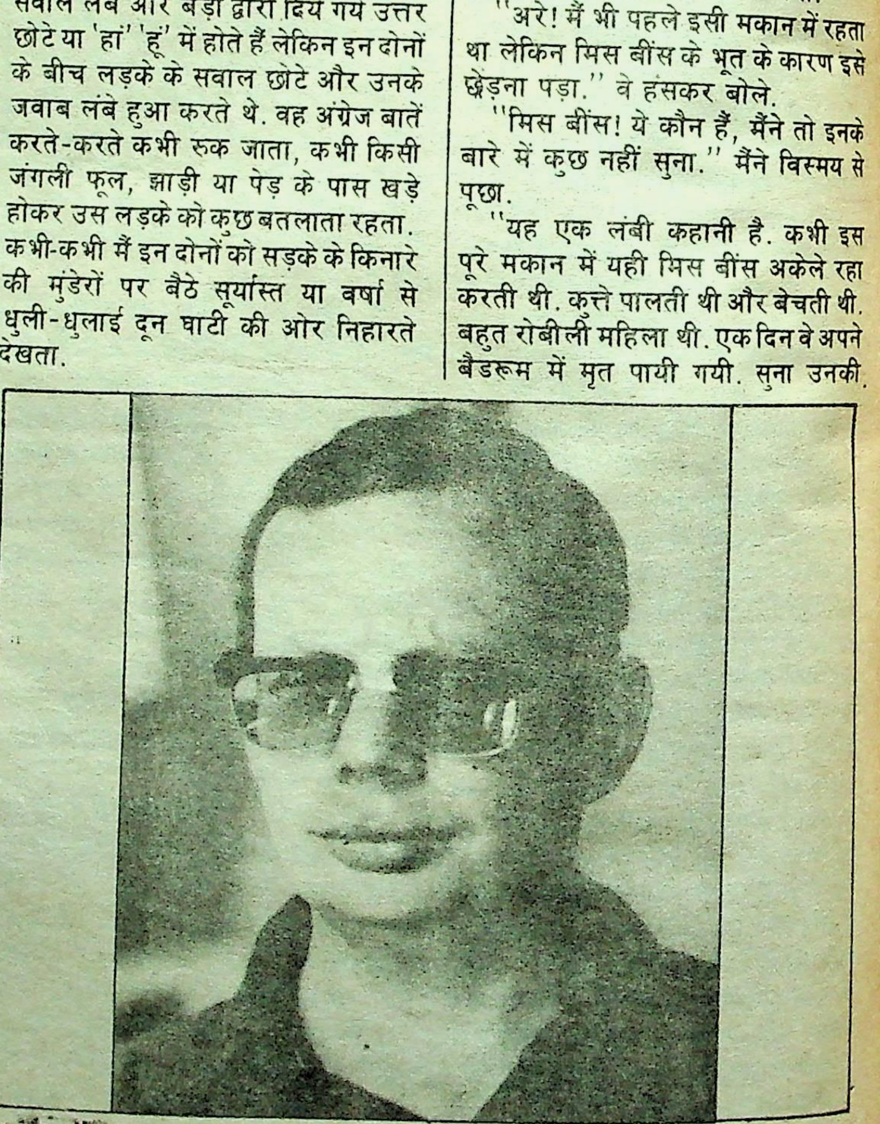

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हत्या की गयी थी, वे भी पड़ोस की एक अबोध कन्या द्वारा.''

मैं आश्चर्यमगन हुआ उनकी बातें सुनता जा रहा था कि तब तक हम बाजार पहुंच चुके थे. जब मैं उनसे विदा लेने लगा तो बोले कि जरा किताबों की दुकान तक चलो. वहां उन्होंने एक छोटी-सी किताब मुझे उठाकर दी. नाम था 'एन एक्स फार ए रानी'. लेखक थे रस्किन बांड. बोले इसको पढ़ना मिस बींस की हत्या का रहस्य समझ में आ जायेगा.

''तो आप ही हैं रस्किन बांड?''

हंसते हुए बात बदलते हुए बोले कि मिस बींस की हत्या के बाद जो चर्चाएं चलीं, व अफवाहें उड़ीं उन्हीं को जोड़-तोड़कर मैंने यह कहानी लिख डाली थी.''

मैंने रस्किन बांड का नाम तो सुना था और ये भी जानता था कि वे मसूरी में ही रहने लगे हैं. अंग्रेजी पत्र-पत्रिकाओं में उनके छोटे-छोटे लेख व कहानियां भी पढ़ी थीं. सोचता था कि वे होंगे अधेड़ उम्र के कोई गंभीर प्रकृति के बुजुर्गवार. लेकिन जैसे उनको देखा व पाया वह रूप तो दूसरा था. पहली ही भेंट में उनकी बच्चों जैसी सरलता और खुलेपन ने मुझे निहाल कर दिया और यह तो मैंने बाद में ही जाना कि अंग्रेजी भाषा में बाल-साहित्य के वे अंतर्राष्ट्रीय ख्याति के लेखक हैं.

उनके घर से जब मैं चलता तो मुझे छोड़ने दरवाजे तक अवश्य आते लेकिन उस दिन वे नहीं उठे. बोले जाते समय जरा दरवाजा बंद कर देना. मुझे कुछ अटपटा लगा. पूछ ही लिया, ''रस्किन, तबीयत तो ठीक है?''

''मैं बिल्कुल ठीक हूं. बात यह है कि मेरे साथ मेरी रजाई में डौली सो गयी है और उसने मुझे बिल्कुल गीला कर दिया है. मैं उठूंगा तो यह भी उठ जाएगी.'' वे लेटे-लेटे ही बोले.

डौली, राकी की छोटी बहन. और उस समय वह छः मास ही रही होगी.

प्रेम शुरू से उनके साथ है. घर के सभी काम वही करता है. राकी व बंटी प्रेम के लड़के, डाली उसकी लड़की है. सब बच्चे रस्किन को 'दादा' और रस्किन बच्चों की मां को 'मम्मी' ही कह कर बुलाते हैं. बच्चे अंग्रेजी स्कूलों में ही पढ़ रहे हैं. एक बाथरूम और दो कमरों के मकान में सभी एक साथ रहते हैं. उनको बच्चों के झगड़े सुलझाने में और उनको अपने बाप की डांट से बचाने में बड़ा आनंद आता है.

पहाड़ों से रस्किन को बहुत प्यार है. अंग्रेजी की 'इंप्रिंट' नामक मासिक पत्रिका का संपादन भी इन्होंने मसूरी में रहकर किया और जब इनसे बंबई आकर संपादन करने का आग्रह किया तो संपादक का पद ही छोड़ दिया.

एक दिन मैंने उनसे यूं ही पूछ लिया कि रस्किन,अगर तुमको मसूरी छोड़ना ही पड़ा तो कहां जाओगे. कुछ देर सोचा और फिर बोले, ''सामने वाले पहाड़ पर जहां परियां रहती हैं.'' उनका मतलब सामने वाली चोटी-परी टिब्बे से था.

मैंने उनका गुस्सा भी देखा है. और उस दिन तो वे मुझे सब दिनों से अधिक सुंदर दिखाई पड़े थे. घटना यूं घटी. श्याम प्रेम के गांव से आया था नौकरी की तलाश में और न मिलने पर उसी के साथ रहने लगा और धीरे-धीरे बन गया रस्किन की गृहस्थी का एक अभिन्न भाग. कुछ समय बाद श्याम को एक जान पहचान के सज्जन ने अपने यहां खाना बनाने पर रख लिया. लगभग दो वर्ष से वह उनके साथ था कि इसी बीच एक फिल्म कंपनी रस्किन की एक छोटी कहानी पर फिल्म बनाने मसूरी आयी. उन सज्जन को भी इसमें काम मिल गया खाने वगैरह का इंतजाम करने का. इनका पहला काम था श्याम की छुट्टी करना और एक नये रसोइये को काफी ऊंची तनखाह पर रखना.

फिल्म के मुहूर्त पर एक पार्टी का आयोजन किया गया. रस्किन का बुलाया जाना तो स्वाभाविक ही था. मुझे भी बुला लिया गया. मुझे भी उस फिल्म में एक 'मूर्ख' का रोल करना था. खाना खाते समय वही सज्जन रस्किन के पास आकर कहने लगे, ''देखा! कितना स्वाद खाना है. श्याम तो खाना बना ही नहीं सकता था.''

रस्किन को श्याम को दो वर्ष काम लेने के बाद बिना किसी कारण निकाल दिये जाने पर गुस्सा तो पहले ही था. उन सज्जन की इस टिप्पणी पर तो वह एकदम आग बबूला हो गये. खाने की प्लेट उन पर फेंकते हुए बोले, ''हां! पाखंडी! दो साल श्याम से खाना बनवाने के बाद तुम्हें अब पता चला कि श्याम खाना ही नहीं बना सकता.'' और यह कहकर उसी समय पार्टी को छोड़कर चले गये.

गढ़वाल के किसी अनजान कोने से आने वाले बेबस इनसान के प्रति हुए अन्याय के विरुद्ध उनके मन में उठे गुब्बार को इस पार्टी का रोबीला माहौल रोक सकने में असमर्थ था.

मैं तो एक साधारण व्यक्ति हूं. कभी-कभी उनके पास बहुत देर तक बैठे रहने में संकोच भी होता है. शायद मेरे भावों को एक दिन उन्होंने ताड़ लिया. बोले ''मालूम है दोस्त की पहचान क्या है? आप किस से, किस-किस मुद्दे पर, कितनी देर तक बातें करते रहे सकते हैं, बस यही न.''

नदी के शांत प्रवाह का जो संगीत उनकी रचनाओं से फूटता रहता है, उसकी स्वर-रचना उनके दिन प्रतिदिन के जीवन से ही अनायास हुई है. उनसे एक क्षणिक भेंट भी ऐसी लगती है जैसी गंगा में डुबकी लगा ली हो; जैसे अचानक 'शांति पात' हो गया हो. उनके पास से मैं कभी 'छोटा' बनकर नहीं लौटा. मन ने सदैव ही अपने को एक अनूठी उपलब्धि, महत्व व खुशी से भरा अनुभव किया है. □

मेरे घर के पास ही एक अंग्रेजी स्कूल है जहां राकी पढ़ता है. उसका दाखिला कराने जब वे आये तो मुझे भी साथ ले लिया. हैड मिस्ट्रेस ने टैस्ट लिये तो वह गणित के घटाने के प्रश्नों में फेल. जोड़ के प्रश्नों में पास. वे बोलीं कि अंग्रेजी तो ठीक है लेकिन राकी गणित में कमजोर है, घटाने के प्रश्न ठीक नहीं कर पाता. रस्किन हंसते हुए बोले. ''मैम! यह गणित में कमजोरी नहीं, बल्कि यही दर्शाता है कि राकी का जीवन के प्रति दृष्टिकोण कितना आशावादी (पाजिटिव) है. तभी तो घटाने जैसे नकारात्मक (नेगेटिव) पहलुओं पर ध्यान नहीं दे पाता.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिनेश चंद्र दुबे

विलंबित न्याय के मूल-मोड़

मैं ग्राम वहेलिया रहता हूं. मेरा पिता चार पांच साल पहिले खत्म हो गया है. मेरे घर पर मेरी मां, बहिन मीना बाई, मालती बाई, गीता और मैं रहते हैं. आज शाम छः बजे मैं अनंतसिंह प्रचापत के यहां लगुन में गया था. लगुन बंच जाने के बाद मैं, अपने घर आया. जैसे ही मैं अपने बाड़े तक गया, मुझे बनिया की औरत ताराबाई ने बताया कि तुम्हारी बहिन को भभूतसिंह, जसवंत, त्रिलोक, कोमल, जाहर जबरदस्ती पकड़कर ले गये हैं. और उसकी शादी अब्बू से कर रहे हैं. तो मैं त्रिलोक के घर गया. मैंने देखा मेरी बहिन और मां वहां थीं. गजराज बोला कि खवास (नाई) को बलवाओ और मीना को हल्दी जढ़वाओ. तो मैंने गुस्से में उसे भला-बुरा कहा. जो हल्दी चढ़वायेगा उसकी..... इतना कहकर मैं घर आ गया. वहां से जाहरसिंह, सीरीवारे निकले मैंने उनका ट्रैक्टर रोका. उन्हें सारा हाल बताया. और जाहरसिंह के साथ रिपोर्ट करने आया हूं. मेरी बहिन अभी त्रिलोकसिंह के घर पर ही है. कार्यवाही की जाये.

29.4.85 को, आक्रोशित 14 वर्षीय मंगलसिंह की यह रिपोर्ट लिखी गयी थाना-रेहली (सागर) पर. थानेदार मौके पर गये. लड़की वास्तव में थी. उन्होंने उसे छुड़ाया. अपराधी गिरफ्तार किये. सबके बयान लेकर न्यायालय में 29.4.85 को इस घटना की रिपोर्ट पर चालान दिनांक 29.6.85 को प्रस्तुत कर दिया. छः नामजद मुलमिजमान के साथ, तफ्तीश कुनिंदा ने आठ और व्यक्ति सहअपराधी के रूप में चालान किये, जिनमें एक अब्बू भी भी ज़िससे जबरन शादी करायी जाना रिपोर्ट में था.

अवयस्क मीना के, मां के संरक्षण से 'अपहरण' और विवाह के लिये ले जाने के हेतु वश 'व्यवरहरण' के अवैध कृत्य के कथित व्यक्तियों को धारा 363, 366, 147 सपंठित 149 ता.हि. के अंतर्गत, मॉंथ न्यायिक दंडाधिकारी ने सत्रन्यायालय उपार्पित कर देते हैं.

विधि निर्माताओं ने गंभीर मामले सत्र न्यायालय द्वारा सुनवायी योग्य रखे हैं. मुख्य न्यायिक-दंडाधिकारी को, चूंकि यह अपराध, एकमेव सत्र न्यायालय द्वारा सुनवायी योग्य थे अतः उपार्पण करना जरूरी था.

सत्र न्यायाधीश और अपर सत्र न्यायाधीश दंड पारण की सक्षमता में बराबर हैं. सत्र न्यायाधीश प्रशासकीय हेड होता है और अन्य अपर सत्र न्यायालयों में प्रकरण भेजता है. न्यायालय संख्या मुकद्दमों पर निर्भर है.

कचहरी की जिंदगी और जिंदगी की कचहरी की ऐसी घटना-कथाएं इस नये स्तंभ में आपको नियमित रूप से पढ़ने को मिलेंगी जो आम तौर पर एक अजानी दुनिया से साक्षात कराएंगी...

उपार्पण के बाद यह मामला सत्र न्यायाधीश धारा 409(9) दंड प्रक्रिया संहिता के अन्तरगत मानकर इसे द्वितीय अपर सत्र न्यायाधीश को सुनवायी के लिए 'मेड ओवर' कर देते हैं.

सुनवाई होती है. 29 पेशियों में 18.3.86 को आरोप प्रस्थापन, साक्ष्प में 12 गवाह अभियोजित के और 4 गवाह बचाव-के होकर, मामला अंतिम नर्क के नजदीक 22.4.88 को पहुंच जाता है.

लेकिन तभी एक अजीब हादसा होता है. जज के नाम एक पत्र आता है. 'आपके नाम एक लाख रुपए गांव में एकत्र किये गये हैं. अपराधियों को बरी करें तो रुपया लिये बगैर नहीं.'

'न्याय केवल होना नहीं चाहिये बल्कि वह दिखना भी चाहिये कि हो रहा है.'

न्याय सिद्धांत जज के सामने प्रश्न चिन्ह बनकर खड़ा हो जाता है. यदि कानून, अभियोजित लोग वरी हुई तो कुछ लोग तो यही समझेंगे कि...

क्या करें. क्या न करें?

किकर्तव्यविमूढ़, संवेदकशील जज, जो अपने प्रति आस्था को अपनी सबसे बड़ी शक्ति मानता है. अंततः निर्णय करता है कि प्रकरण वह निराकृत नहीं कर पायेगा. द्वितीय अपर सत्र न्यायाधीश तब पत्र लिखकर सत्र न्यायाधीश से प्रकरण अन्य न्यायालय में स्थानांतरित करने की प्रार्थना करते हैं.

सत्र न्यायाधीश जज की स्थिति महसूस कर प्रकरण तृतीय अपर सत्र न्यायाधीश के यहां 'मेड ओवर' कर देते हैं.

कोई आपत्ति कई पेशियों पर नहीं होती. नये जज दो बार बाहर से किसी बड़े वकील को अंतिम तर्क के लिये लाने हेतु समय दे देते हैं.

अंततः म.प्र. के एक महानगर से वहां के सबसे बड़े माने जाने वाले अभिभाषक आकर बहस करते हैं.

यह शायद इत्तफाक न होगा कि जो अभिभाषक लाये गये थे, वे वह थे जो स्वयं जज के मित्र जैसे थे और जिनके पास स्वयं जज का, उच्च न्यायालय में पैंडिग प्रकरण था.

बहरहाल बहस कई घंटे सुनने के बाद जज एक सवाल अभिभाषक से करते हैं.

यहि जैसा कि आपका बचाव है सारी घटना जाहरसिंह के द्वारा बनवायी गयी है और विवाह की कार्यवाही मीना की मां की मर्जी से हो रही थी तो वह क्या कारण है कि मीना, उसकी मां न केवल पुलिस के समक्ष बल्कि न्यायालय में भी इसे झूठा बताते हैं. फिर एक 14 वर्षीय किशोर बालक क्या मां, बहिन के समक्ष इतना आक्रोशित रहा हो सकता है कि मौके पर गालियां बककर इतने लोगों को चैलेंज करता, पुलिस लाता और न्यायालय में बयान तक अपनी बात पर अड़ा रहता? क्या भर इसलिये कि वह घर से ब्याह चाहता था और मुलजिम उसकी इच्छा के विरुद्ध मंदिर में ब्याह कर रहे थे? अपेक्षाकृत पितृविहीन मंगलसिंह के लिये तो बहिन का ब्याह और वह भी खर्च रहित शायद ठीक रहता? फिर जाहरसिंह जिसके द्वारा खुद मीना को रखैल बनाकर रखने का सुझाव है, क्या यह ग्राह्य है क्योंकि वह 35 वर्षीय विवाहित व्यक्ति है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

र मीना 15 वर्षीय हालांकि आपने सकी आयु अधिक कही है?

अनुभवी, वरिष्ठ अभिभाषक चौंके थे. न्होंने संभावित निर्णय शायद आंका था. हां आकर वार में जज के 'रेंपुटेशन, ब्यू' उन्हें लगा था शायद जज उनके विपक्ष फैसला दे। तब... तब?

और तब यकायक उन्हें एक तर्क सूझा

अनुभव के आधार पर यह कहा जाता है कि सफल वकील वह है जो अपने मुव्वलिक के विपक्ष में कभी फैसला न होने दे. दीवानी मामलों में तो यह सरल है ही. पर फौजदारी मामलों में भी अब यह, व्यावसायिक श्रेष्ठता, हम महसूस कर रहे हैं. लोग कहते हैं जब देश के प्रधानमंत्री की हत्या का मामला तक, वर्षों तक अंतिम परिणाम तक न पहुंचने देने के लिये हमारे अधिवक्ता ज्ञान रखते हैं तो छोटे-छोटे मामलों की क्या बिसात! शायद यही कारण है कि देश की अदालतें आज मामलों से अटी पड़ी हैं. इसी सबसे उत्साहित होकर वे लोग भी जो भले ही कानून में रुचि न रखते हों अंततः 'लॉ' कर लेते हैं.

एक नयी तर्क... इस न्यायालय को यह प्रकरण सुनने का अधिकार ही नहीं है. आरोप भी गलत प्रस्थापित हुआ है.

वस्तुतः धारा 409(2) जा.फौ. में यह प्रावधान है कि 'सुनवाई आरंभ होने के पहिले' एक सत्र प्रकरण, अन्य सत्र न्यायालय में भेजा जा सकता है. शायद इसलिये कि गवाह, जिस जज के सामने होते हैं, उसे उनके न्यायालय व्यवहार को देखकर, फैसला लिखना सरल रहता है.

उधर 'व्यपहरण' किसी भी आयु की महिला का हो सकता है. पर 'अपहरण' केवल अवयस्क अर्थात 18 वर्ष से कम आयु की महिला का.

द्वितीय अपर सत्र न्यायाधीश के द्वारा लिखे आरोप पत्रों में 366 के आरोप-पत्र में 'व्यपहरण' की जगह 'अपहरण' टाइप हो गया था, लिपिक द्वारा.

गौर तलब बात यह है कि पूरी बहस कई घंटे होने के बाद यह तर्क किया गया कि इस न्यायालय को सुनवाई अधिकार नहीं है. उधर आरोप गलत था और उससे मुलजिमान को 'प्रेजूडिस' होता यह बात पूरी ... की जा सकने के मध्य नहीं उठायी गयी.

जिला जज ने सामान्यतः धारा 408(2) के तेहत प्रकरण स्थानांतरित किया जिसमें जज के रिपोर्ट पर स्थानांतरण कर सकना वर्जित है.

कई वर्षों से चल रहे प्रकरण में, 14 लोग, बिना यह निर्णय पाये कि उन्होंने कोई जुर्म किया भी या नहीं, बहरहाल फिर निर्णय दिनांक 29.6.88 को द्वितीय अपर सत्र न्यायाधीश ने वापस कर दिये हैं. उनके अभिभाषक का तर्क स्वीकार योग्य था. अतः स्वयं अभियोजन ने धारा 395 जा.फौ. के अंतरगत प्रकरण समुन्नित न्यायालय में 'वैधिक रूप से' स्थानांतरण के लिये भेजने का प्रार्थना पत्र प्रस्तुत कर दिया है.

जज ने आवेदन स्वीकार कर लिया है. लोकल अभिभाषक का कहना है कि अब उनके मुब्बाकिलों को फिर उच्च न्यायालय से नोटिस आने पर वकील कर 200 किलोमीटर जाना होगा. फिर नयी जगह मुकद्दमा स्थानांतरण पर बाहर से बहस के लिये मोटी फीस देकर वरिष्ठ अभिभाषक लाना होगा. उन्होंने अपने मुब्बाकिलों से कहा था कि...

यह तो हुई छोटे वकील के जरिये 14 लोगों की पीड़ा. लेकिन एक प्रश्न और अंत में विचार के लिये शेष रह जाता है. वह यह, कि सुनवाई जज जब फैसला कर पाने में किंकर्तव्यविमूढ़ता महसूस करते हैं तो मान लिया जाये कि प्रकरण उच्च न्यायालय अन्य न्यायालय में नियमानुसार भेज देता है तब क्या 409(2) जा.फौ. में वर्णित मतव्य हल होगा? और यदि मूल जज के समक्ष ही प्रकरण लौटा दिया तो क्या वे सामान्य मन से फैसला दे सकेंगे? इस सबसे परे यदि प्रकरण फिर द्वितीय अपर सत्र न्यायाधीश के समक्ष लौट आया तो क्या फिर नये ढंग से सभी गवाहान पर जिरह का अवसर, ब्यान मुलजिम, बचाव, बहस होकर कई वर्ष निरर्थक रूप से इस सबमें नहीं लगेंगे.

और इस सबके पार इस बार यदि अभियोजित लोगों ने पत्र लिख दिया कि उन्हें सजा कराने के लिये रुपया जोड़ा गया है तब?

इन सारी स्थितियों में एक सामान्य मामला, कब तक, कितने न्यायालयों में, कितने शासकीय और व्यक्तिगत धन खर्च के बाद निपट पायेगा? □

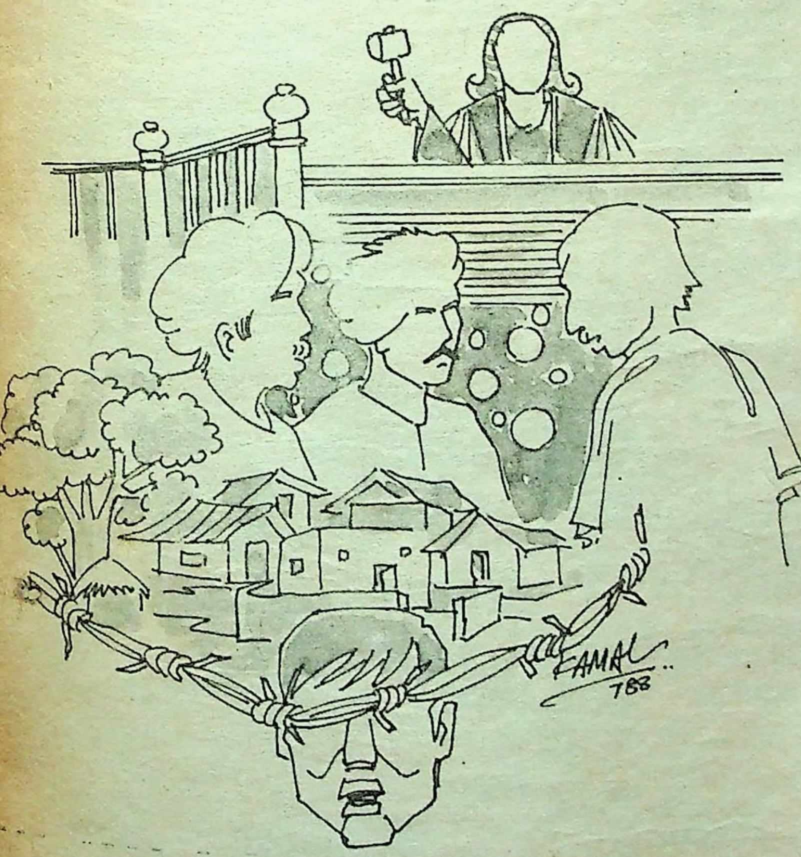

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जन्म : 23 नवंबर 1935 खैराबाद, सीतापुर उपन्यास लेखन में विशेष रूचि, 'स्वप्न के संकेत', 'आकाश के आंसू' व 'सूरज का कलंक' प्रमुख उपन्यास.
संप्रति : प्राध्यापक, हिंदी विभाग, आर.के. तलरेजा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बंबई.

शुभकार कपूर

बेचारे लोग

ज्यों ही वह प्लेटफार्म पर पहुंचा, उसने देखा 'कल्याण लोकल' छूटने को तैयार खड़ी थी. उसे दो मिनट के अंदर ही सामने खड़ी गाड़ी में धंस जाना था. लेडीज कंपार्टमेंट को उसने लंबे कदमों से चलकर पार किया. प्लेटफार्म पर दौड़ना उसे अच्छा नहीं लगा. उसे दौड़ते देखकर लोग क्या कहेंगे? कोई उसका स्टूडेंट ही देख ले. क्या कहेगा वह! देखो सर कैसे भाग रहे हैं. वह तेज चलने के साथ-साथ अपने प्रोफ़ेसर होने की भावना को भी घसीट रहा था. वह ज्यों-ज्यों आगे बढ़ता जा रहा था, डिब्बों में भीड़ बढ़ती ही जा रही थी और वह तृतीय श्रेणी का टिकट लेकर इस लोकल से आराम से जाने की सोच रहा था. उसके बाद के आये लोग भाग-भागकर डिब्बों में चढ़ रहे थे और वह डिब्बों को पीछे छोड़ता हुआ आगे बढ़ता जा रहा था.

गाड़ी छूटने जा रही थी. सामने प्रथम श्रेणी का डिब्बा था. कुछ-कुछ खाली मगर उसके पास प्रथम श्रेणी का टिकट नहीं था. अतः वह भी भागकर आगे बढ़ा. अनजाने ही वह भी दौड़ने लगा था.

क्या सचमुच हम लोग इतने निरीह हो गये हैं कि कैसे भी हालात क्यों न हो जायें... हमारी ज़बान बंद ही रहेगी और हम नपुसंक आक्रोश में घुलते रह जायेंगे!

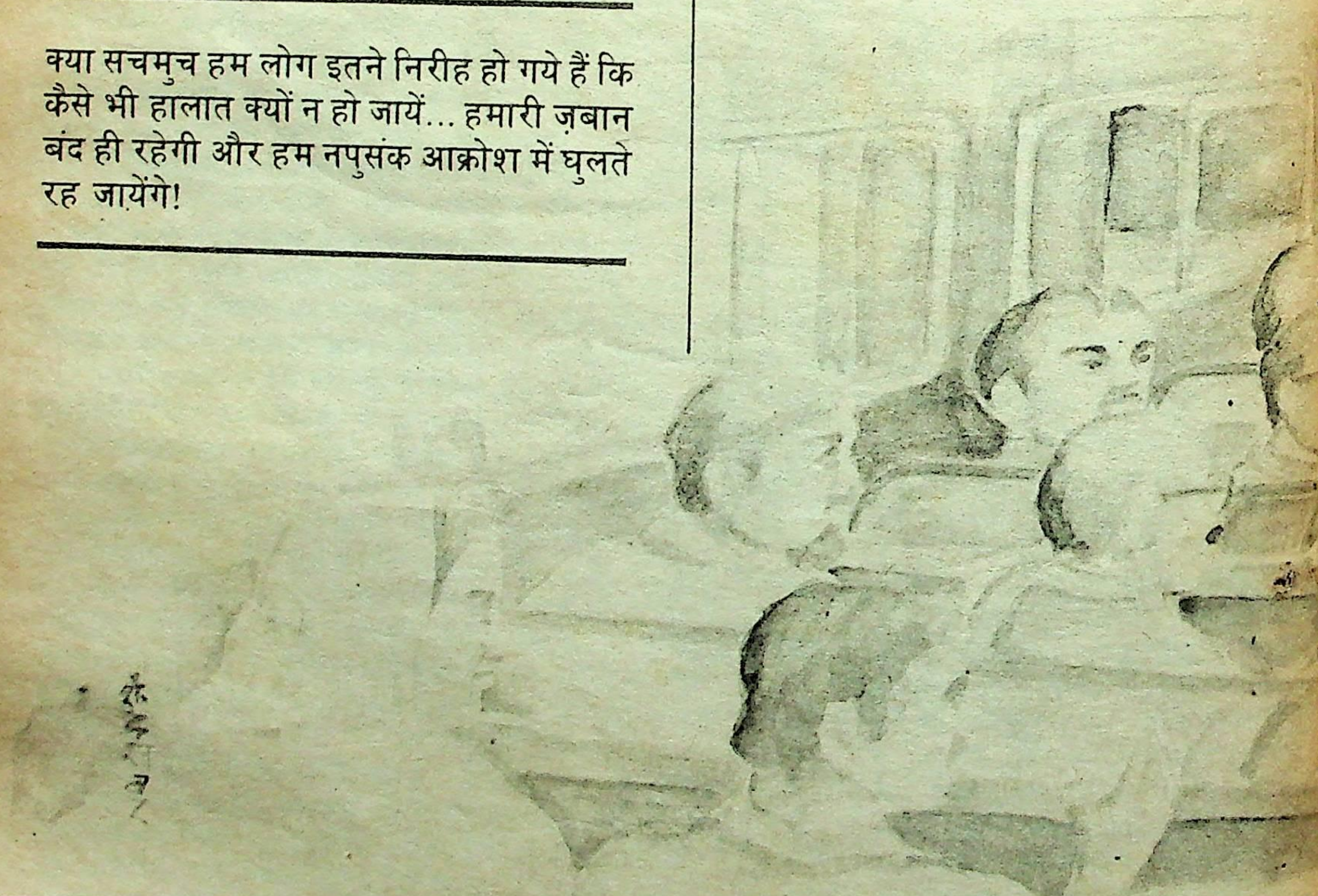

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अगला स्टेशन आने को ही था. डिब्बे के अंदर कशमकश शुरू गयी थी. उसने अंदर धंसने के लिए अपना अगला पैर कुछ ागे खिसकाया. पिछले पैर को भी पूरी ताकत से अंदर को खींचा. नों पैर थोड़े-थोड़े अंदर बढ़े, किंतु अंदर उसकी स्थिति और भी यनीय हो गयी. चारों ओर के दबाव से वह बुरी तरह पिसने लगा था.

चार-छः स्टेशनों के बाद इन अनायास मिलनेवाले धक्कों ने उसे डिब्बे में एक किनारे पहुंचा दिया था. अगले स्टेशन पर डिब्बा ज्यादा खाली हुआ. थोड़ी-सी कशमकश के पश्चात् उसे अंदर सीट के पास खड़े रहने की जगह मिल गई. खिड़कियों से आती हुई ताजी हवा के एक झोंके के लगने पर उसे लगा कि अब वह मात्र उड़ती हुई गंध न होकर आदमी हो गया है. घाटकोपर स्टेशन के बाद उसे सीट पर चौथे नंबर पर सिमटकर बैठने की जगह मिली. डौंबिबली स्टेशन पर पहुंचते-पहुंचते वह आराम से बैठकर ऊंघने लगा था.

कल्याण स्टेशन पर उतरकर उसे बस पकड़नी थी. बस की लंबी लाइन से बचने के लिए वह स्टेशन पर गाड़ी रुकते ही तेजी से भागा. कितने ही अन्य लोग तेजी से भाग रहे थे.

बस-स्टैंड पर उसके पहुंचने से पहले ही एक लंबी कतार लगी हुई थी. वह भी उसी में जाकर जुड़ गया. भाग-भागकर आकर लोग कतार से जुड़ते जा रहे थे और वह कतार बल खाती हुई आगे बढ़ती जा रही थी. पंक्तिबद्ध खड़े लोग जिस बस की प्रतीक्षा कर रहे थे, उसका कहीं दूर-दूर तक पता न था. धीरे-धीरे लोग ऊबने और बड़बड़ाने लगे थे. लंबे डील-डौल के एक सज्जन इस सरकार की निक्रिष्टता पर खीझ रहे थे. उन्हीं की बगल में खड़े एक सिंधी सज्जन बसवालों की लापरवाही का रोना रो रहे थे. "ये साले सबके सब बदमाश हैं. भला बोलो, एक घंटे से लाइन में खड़े सड़ रहे हैं और साली कोई बस ही नहीं."

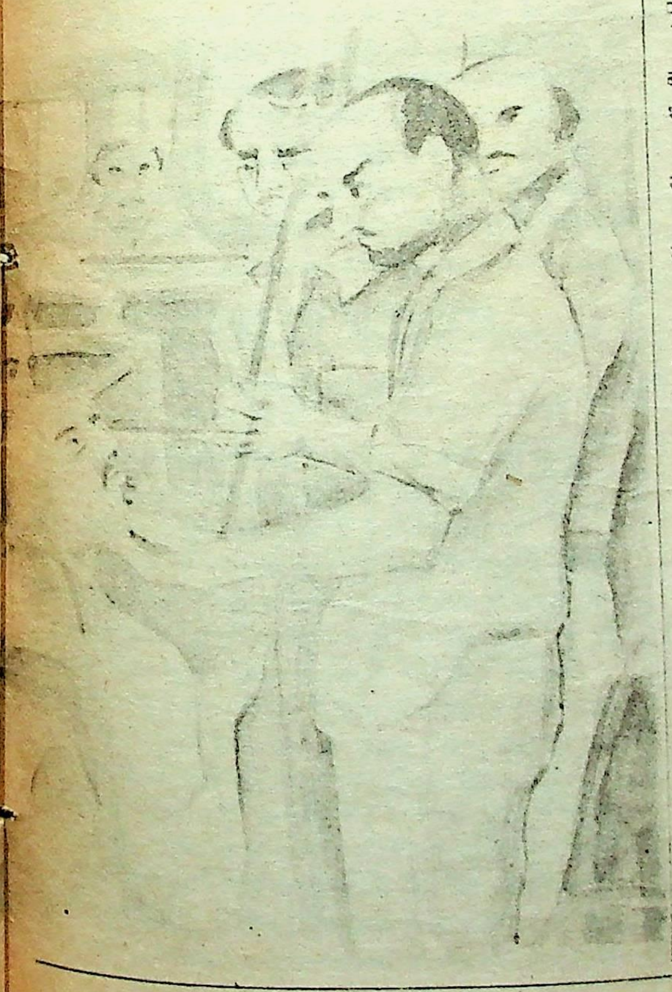

"यह मुलक साला कचरा-पट्टी हो गया है. कोई अपना काम नहीं करता. सब जगह बेईमानी."

"बेईमानी तेरा सहारा" कहकर एक साहब हंसे.

"यह हंसने की नहीं बाबा रोने की बात है."

"ठीक है रो लेता हूं." कहकर वह फिर हंसा.

"अरे विश्वकर्माजी, आप भी यहीं खड़े हैं?" उसी लाइन में कुछ आगे खड़े विश्वकर्माजी को देखकर उसने कहा.

"अरे प्रोफेसर साहब, आप! आप भी क्या बंबई से आ रहे हैं?" विश्वकर्माजी ने लाइन से निकलकर उसके पास आते हुए कहा, "यह बस भी बड़ा बवाल है साहब! आज कोई साली टैक्सी भी नहीं. एक घंटे से यहां खड़ा मर रहा हूं, मगर साली बस है कि वह ऐसी गायब हो गई है मानो गधे के सिर से सींग." कहते हुए विश्वकर्माजी हें-हें करके हंसे और अपने भारी-भरकम बैग को बायें हाथ में करते हुए दाहिने हाथ को मिलाने के लिए उसकी ओर बढ़ाया.

उसने भी अपना दायां हाथ आगे बढ़ाया. हाथ पकड़कर विश्वकर्माजी बोले, "इन बसों का कोई ठिया नहीं है. यहां रोज ही यह चलता है."

"साहब, इसलिए यह सब चलता है कि हम लोग मिट्टी के पुतलों की भांति खड़े रहते हैं." वही सिंधी सज्जन बोले थे.

"नहीं, तो क्या करें साहब? जब बस नहीं आ रही है तो क्या बस पैदा कर दें." यह एक दूसरे सज्जन की आवाज थी. वे अपना थुलथुल पेट संभाले चुपचाप खड़े हुए थे.

"तो साहब आप अपना झोला-झंपट लेकर यहीं रात भर खड़े रहिए."

"अरे साई, अपन यहां खड़ा है तो आप कौन चले जा रहे हैं. जहां आप रात भर सडेंगे, वहां अपन भी सड़ लेंगे."

"भाई लड़ो नहीं, देखो सामने से कंडक्टर साहब आ रहे हैं."

सभी की दृष्टि उस ओर मुड़ गई. सचमुच सामने से एक कंडक्टर साहब चले आ रहे थे. पैसों की थैली और टिकटों का बाक्स दोनों को संभाले हुए.

सभी की उत्सुक नजरें उस ओर मुड़ गयीं.

"क्यों साहब, आप अकेले चले आ रहे हैं? बस क्या रास्ते में रह गई?"

"लगता है घर से आ रहे हैं?"

"मगर साली बस क्यों नहीं आई?"

"अरे कंडक्टर साहब की जेब में तो नहीं है? तलाशी लीजिए न?" एक हंसती हुई आवाज.

सब आवाजों को नजरअंदाज करते हुए कंडक्टर साहब किसी दूसरी ओर मुड़ जाते हैं.

'हम सब साले हिजड़े हैं हिजड़े! इस कतार में कितने आदमी खड़े हैं, मगर सब माटी की मूरत की तरह! कंट्रोलर साहब का आफिस बंद, बाबू लोग गायब. कंडक्टर साहब इधर खड़े आंखे तरेर रहे हैं, मूछें ऐंठ रहे हैं—मानो पब्लिक को खाने की तैयारी कर रहे हों... क्या साला जमाना आ गया है." काफी समय बाद चोपड़ा साहब का स्वर गूंजा था. फिर एक बार जलती हुई आंखों से कंडक्टर साहब की ओर देखा.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो-तीन लोग लाइन से निकलकर कंडक्टर साहब के पास जाकर कुछ खुसुर-फुसुर कर रहे थे. सिह उन सबकी आवाज नहीं सुन पा रहा था. उसे लग रहा था कि कुछ लोग अपनी आदत के अनुसार पूंछ हिलाने के लिए कंडक्टर के चारों ओर घूम रहे हों और वह बीच-बीच में धत्-धत् कर रहा हो. कुछ क्षणों बाद उसे कंडक्टर की गुर्राती हुई आवाज सुन पड़ी. "साला बस हमारा पाकेट में पड़ा है, निकाल लो..." और इसके साथ ही दो-चार कुत्सित गालियों से संपृक्त वाक्य उसके फड़कते अधरों से बाहर आ टपके.

खुस-पुस करती हुई लाइन में एक सनसनाहट-सी आ गई. लगता था उस कंडक्टर की अपमानभरी बातों ने सबको क्रुद्ध कर दिया था. लाइन एक भीड़ में परिणित होने लगी थी. कई लोगों ने क्रोध से भर कर कंडक्टर को घेर लिया था. अभी चखचख चल ही रही थी कि इसी समय बस स्टेशन की ओर आती हुई एक बस की आवाज ने सबका ध्यान अपनी ओर खींच लिया. भीड़ फिर लाइन के रूप में अपने को ढालने लगी. कंडक्टर क्या कह रहा है, अब इस ओर किसी का ध्यान ही नहीं था.

लाइन कई स्थानों से दोहरी-तिहरी हो गयी थी. बस के आने से पहले ही लोग पीछे से आगे आ जाने के सुप्रयास में लगे हुए थे. पूरी की पूरी पंक्ति एक विचित्र प्रकार की अव्यवस्था का शिकार हो चुकी थी.

बस आकर खड़ी हुई. एकदम खाली थी. पहले पीछे के दरवाजे से कंडक्टर साहब सीटी मुंह में दबाए हुए बाहर निकले और धक्कम-मुक्का करती लाइन को बड़ी उपेक्षा के साथ देखते हुए वे आगे बढ़ गए.

ड्राइवर साहब ने गाड़ी की घरघराहट बंद की. बगल का दरवाजा खोला और अपनी सीट से नीचे की ओर कूदने की मुद्रा में छलांग लगाई. नीचे आकर रूमाल से अपना मुंह साफ किया और फिर मुंह में दबे पान की पीक पिच्च से थूकते हुए वे भी उसी ओर बढ़ गए जिधर कंडक्टर साहब गये थे.

उस तरफ खड़े हुए कंडक्टर और क्लीनर भी बस से उतरनेवाले कंडक्टर की ओर बढ़ गए थे.

बेचैन खड़ी लाइन में भी फुसफुसाहट और आतंक का वातावरण था. कुछ लोग तो भी निर्भीक शहीदाना-मुद्रा में बोल रहे थे. ड्राइवर साहब ने अपनी सीट के पास वाला दरवाजा खोला और 'हाईजंप' की मुद्रा में छलांग लगाकर अपनी सीट पर जा बैठे. पीछे के दरवाजे से 'कंडक्टर एंड कंपनी' के लोग बस में जा बैठे. बस के साथ आए हुए कंडक्टर साहब ने अपना टिकट-बाक्स और सीटी संभाली और दरवाजा खोलकर खड़े हो गए. फिर कुछ कठोर स्वर में बोले, "आप लोग लाइन में एक-एक कर आकर बैठ जाए. टिकट बाद में बांट देंगे."

लाइन में लगे लोग झपट कर धक्का-मुक्की करते हुए बस में चढ़ने लगे. कंडक्टर साहब एक मूक दर्शक की भांति लोगों की धकापेल देखते रहे. चोपड़ा साहब चढ़े, प्रोफेसर सिंह चढ़े, वह सिंधी नवयुवक चढ़ा, उसके पश्चात वे कुछ लोग और चढ़े जो उस समय विवाद में कुछ मुखर थे. उन सभी के चढ़ते ही मूक दर्शक की भांति गेट पर खड़े हुए कंडक्टर साहब ने अकस्मात् खींचकर दरवाजा बंद कर लिया और एक लंबी सीटी देकर बस स्टार्ट करने का संकेत दे दिया.

बस स्टैंड के बाहर निकलकर सड़क पर आ गयी थी किंतु वह अपने निर्धारित मार्ग को छोड़कर दूसरी सड़क पर आकर मुड़ गयी थी. सिर को सहलाते हुए विश्वकर्माजी ने खिड़की से बाहर की ओर झांका. ड्राइवर के पीछे की सीट पर ही वे लोग बैठे [illegible]

"ड्राइवर साहब क्या रास्ता चेंज कर दिया?" विश्वकर्मा[illegible] पूछा.

उनका प्रश्न अनुत्तरित ही रहा. इसी समय बस एक [illegible] डिपो' के गेट को पार करती हुई अंदर जाकर खड़ी हो गई.

बस रुकते ही कंडक्टर साहब दरवाजा खोलकर बाहर गए. दूसरे कंडक्टर साहब और उनके साथ के लोग आकर दरवाजे पर खड़े हो गए. क्लीनर ने आगे बढ़कर दरवाजा भड़ बंद कर लिया.

पूरी बस में एक विचित्र प्रकार के भय का आतंक छाया हुआ था. सब भौंचक्के से एकदूसरे को देख रहे थे. सिह की बगल वाली सीट पर चोपड़ा साहब बैठे हुए थे. उनके मुख पर घबराहट छा रही थी. अगली सीट पर गोल-मटोल सिंधी सज्जन बैठे हुए थे. उन्होंने अपने तरबूज के समान गोल सिर को थोड़ा घुमाकर पीछे की ओर देखा. उनकी चिमघी आंखें भय के कारण कुछ और चिमघी हो गयी थीं.

बस के बाहर कुछ हलचल हुई. कई गूंजती हुई आवाजें बाहर से आती हुई लगीं. प्रो. सिह ने खिड़की से धीरे से झांककर देखा. बाहर गए हुए कंडक्टर साहब के साथ कई लोग हाथों में बस के हैंडिल और डंडे लिए खड़े हुए थे. उन लोगों ने बस को लगभग पूरी तरह से घेर लिया था. सिह के पूरे शरीर में सनसनाहट दौड़ गयी. उसके साथ-साथ कई लोगों ने बाहर खड़े हुए 'हथियार बंद' लोगों को देखा था और सबके सब भयभीत से, सिकुड़े बैठे हुए थे. सिह ने पूरी बस पर एक उचटती हुई नजर दौड़ाई. सबके चेहरे बझे हुए थे. दिल धड़क रहे थे. चोपड़ा साहब का रोबदार चेहरा भी इस समय अपने को छिपाने का प्रयास कर रहा था. सिंह को लगा कि माथे पर चिंता और भय अलथी-पलथी मार कर बिराज रहे हैं.

इसी समय भड़ाक से बस का पिछला दरवाजा खुला और साथ ही एक चीखती हुई आवाज के साथ दो लोगों ने हाथ में हैंडिल लिये हुए प्रवेश किया. उनके साथ ही कंडक्टर साहब थे. बस में

धर्मराज के अवतार

विष्णु प्रभाकर

'**धर्मराज के अवतार' के रूप में उनकी प्रसिद्धि अक्षुण्ण थी. बिक्रीकर अधिकारी तक उनके प्रशंसक थे. वर्ष पर वर्ष बीत रहे थे, कोई भी अधिकारी उनके द्वारा प्रस्तुत हिसाब में शंका करने का कोई कारण नहीं खोज सका था. व्यापारी जगत में, कहा जा सकता है यह एक अपवाद ही था, फिर भी था और चर्चा का विषय बना हुआ था.**

अचानक एक दिन व्यवधान उपस्थित हो गया. नये कर अधिकारी ने उसके हिसाब में गहरी जांच पड़ताल के बाद उन पर दस हजार रुपये का कर लगा दिया.

वे जैसे आसमान से गिर पड़े. 'धर्मराज के अवतार' का उनका विरुद्ध खतरे में पड़ गया था. इस कलंक को धोने के लिये उन्होंने अधिकारी से बार-बार बातचीत की. समझाने की कोशिश की कि उनके द्वारा प्रस्तुत हिसाब अक्षरशः सही है. उन्होंने कभी झूठ नहीं लिखा है. उनसे पहले कभी

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के पास खड़े हुए कंडक्टर और उनके साथ के लोग अपनी सीट र जमे हुए थे. मूछों पर हाथ फेरते और गालियों की बंदूक छोड़ते आगे बढ़े. "वह साला, सबसे ज्यादा वही साला.. शोर मचा रहा" वे चोपड़ा साहब की ओर इशारा करते हुए पीछे की सीटों को गभग फांदते हुए बढ़े आ रहे थे.

"साला, बेटी... अपन को लीडर की... समझता है. इसकी मां की..." गालियां वीभत्स से वीभत्स होती जा रही थीं.

चोपड़ा साहब चुपचाप सिकुड़े-दबे से सिर नीचा किए बैठे हुए थे. उनका भारीभरकम शरीर धीरे-धीरे कांप रहा था.

कंडक्टर ने आगे बढ़कर उनकी कमीज के कालर को तेजी से पकड़ कर खींचा. नीचे झुका हुआ उनका सिर एक झटके के साथ सीधा तन गया. उन्होंने घबराये हुए चेहरे से चारों ओर देखा फिर लगभग कांपती हुई आवाज में बोले, "यह क्या बदतमीजी..."

उनकी बात पूरी भी नहीं हो पाई थी कि पीछे से कंडक्टर साहब ने उनके सिर को आगे की सीट से टकरा दिया. दर्द के मारे वे करार उठे. अभी तक भय के कारण दबा हुआ अंदर का क्रोध अकस्मात् उबल पड़ा. वे कंडक्टर के हाथ को छुड़ाते हुए सीट पर तन कर खड़े हो गए. चारों ओर बस में उन्होंने नजर दौड़ाई. मुर्दा से लोग दबे-सिकुड़े बैठे हुए थे. स्थिति को समझकर उन्होंने उमड़ते हुए क्रोध को रोकते हुए कहा, "क्यों साहब, मैंने क्या गलती की है..." उनकी बात की उपेक्षा करते हुए कंडक्टर साहब ने सामने बैठे सिंधी सज्जन की ओर संकेत करते हुए अपने साथियों से कहा,, "इस साले तोंदिए को भी उतारो. वह भी साला खड़ा-खड़ा फलसफा पढ़ा रहा था."

"अरे साहब, मैंने क्या किया है! मैं.. मैं..." गिड़गिड़ाती हुई सिंधी सज्जन की आवाज थी. उनकी आवाज ऐसी लग रही थी मानों किसी के बकरे का मुंह दाबकर आवाज निकाली हो.

उनकी गिड़गिड़ाहट का कोई प्रभाव नहीं हुआ. पीछे के लोगों ने हाथ पकड़कर उन्हें भी खड़ा कर दिया था. एक क्लीनर जैसा आदमी उनकी तोंद पर बस का हैंडिल गड़ाकर खड़ा हो गया मानो

प्रोफेसर सिंह का सारा शरीर क्रोध, भय और आतंक से कांप रहा था. उन्होंने कुछ बोलना चाहा किंतु विश्वकर्मा ने उनका हाथ दबाकर चुप रहने का संकेत किया. उन्होंने छिपी दृष्टि से बस के लोगों की ओर देखा. सभी के चेहरे भय से फक्क थे. ज्यादातर लोग अपने चेहरों को आगे की सीट पर टिकाए-छिपाए बैठे थे. लगभग चालीस-पैंतालीस यात्री उस बस में बैठे हुए थे, मगर सबके सब मुर्दा के समान.

चोपड़ा ने थोड़ा प्रतिकार किया फिर वे अपना ब्रीफकेस लेकर बाहर जाने के लिए खड़े हो गए. एक बार उन्होंने फिर बस के यात्रियों की ओर देखकर गुहार लगाई "देख रहे हैं साहब, क्या जमाना आ गया है. सब... के सामने यह गुंडागिरी..."

"अबे गुंडागिरी का दादा..." चोपड़ा साहब की बात पूरी होने के पूर्व ही कंडक्टर का रंदा चोपड़ा साहब के कंधे पर पड़ा. अकस्मात झटके से उनके हाथ का ब्रीफकेस छूटकर नीचे जा गिरा.

इस अपमान और प्रहार को वे सह न सके. उन्होंने कंडक्टर के, हाथ को पकड़ लिया. मुंह उनका क्रोध से लाल था और मुंह से कुछ अस्फुट ध्वनियां निकल रही थीं.

बस के मुर्दा-यात्री इस समय भी चुपचाप सिर छिपाए बैठे थे और छिपी नजरों से इस पूरे दृश्य को तमाशबीनों के समान देख रहे थे.

थोड़ा धींगा-मुश्ती हुई. थोड़ी-सी जोरअजमाई हुई और उन चार-पांच लोगों ने चोपड़ा साहब को लगभग घसीटते हुए बस के बाहर ढकेल दिया. उनके ब्रीफकेस को भी उठाकर उन्हीं पर झोंक दिया.

"यह क्या तमाशा है?" सिंह धीरे से बुदबुदाया किंतु विश्वकर्माजी ने उसे फिर इशारे से चुप रहने की बात कही वह अंदर से खोलता हुआ चुपचाप बैठा रहा.

इसी समय उसने देखा मोटे सिंधी सज्जन को भी वे लोग खींचकर उतारने लगे हैं. उसका मोटा थुलथुल शरीर वे लोग ऐसे खींच रहे थे मानो मोटी भेड़ को जिबह करने के लिए घसीटकर लिए जा रहे हों. उसके मुंह से करुणा भरी जो आवाजें निकल रही थीं, वे भी उसे भेड़ के मिमियाने की ही आवाज लगी.

कोई पांच मिनट में उन लोगों ने कोई चार-पांच लोगों को बस से उठा-उठाकर फेंक दिया और बस में बैठे शेष चालीस लोग एक दर्शक की भांति निरपेक्ष भाव से बैठे यह तमाशा देखते रहे, मानो वे टी.वी. देख रहे हों अथवा कोई ऐसा दृश्य जिससे उनका कोई संबंध नहीं है. सिंह अपने नपुंसक आक्रोश को पीकर अंतर्मुखी हो गया था.

उसका ध्यान बस के आकस्मिक झटके से टूटा. उसने देखा बस घरघराती हुई 'गेट' के बाहर जा रही थी. उसने छिपी दृष्टि से बस के पिछले 'गेट' की ओर देखा. केवल एक कंडक्टर अपनी बिच्छू के डंक के समान कटीली मूछों को खड़ा ऐंठ रहा था. और शेष लोग भय के कारण सीट से चिपके, दबे-धंसे बैठे हुए थे. कुछ लोग आंख बंद कर चुपचाप सोने का अभिनय कर रहे थे.

चौथे बस स्टाप पर उसके साथ कई लोग उतरे. बस लगभग खाली हो गयी थी. उसने अनुभव किया कि बस से उतरते ही लोगों ने छुटकारे की लंबी सांस ली हो मानो वे जेल से छूटे हों. बस के स्टार्ट होते ही लोगों का बोलना 'स्टार्ट' हो गया था. लगता था मुर्दे फिर जिंदा हो गए हैं. उनके नपुंसक क्रोध को देखकर उसको हंसी आ गई... सचमच कितने बेचारे हैं हम लोग... □

किसी अधिकारी ने उन पर आरोप नहीं लगाया है.

अधिकारी हर बार मुस्करा कर उत्तर देता, "मैं जानता हूं पर मैंने भी जो कर लगाया है वह सही है."

अंततः जब उन्हें किसी भी तरह सफलता नहीं मिली तो उन्होंने मित्रों और वकीलों की शरण ली. गहरी मंत्रणा के बाद एक मार्ग खोज निकाला गया. जिससे होकर बीस हजार रुपये उन पर अधिकारी की पत्नी के पास पहुंचे. उसके बाद अधिकारी ने अपनी आपत्ति आप ही रद्द कर दी. वह गद्‌गद थे, उनका 'धर्मराज के अवतार' विरुद्ध अब सुरक्षित था.

भाव-विह्वलता के उन क्षणों में उनके एक अंतरंग मित्र ने यह पूछे बिना न रह सके, "मैं समझ नहीं पा रहा कि आपने दस हजार रुपये कर के रूप में क्यों नहीं दे दिए. बीस हजार रुपये की रिश्वत क्यों दी."

मित्र की ओर करुणा से देखते हुए वे बोले, "मेरे भोले भाई! दस हजार रुपये कर के रूप में देता तो मेरा 'धर्मराज के अवतार' वाला विरुद्ध छिन न जाता. उसकी रक्षा तो मुझे किसी भी तरह करनी ही थी. मुझे खुशी है मैं कर सका." □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिंदी आलोचना के सर्वाधिक चर्चित और विवादास्पद प्रवक्ता नामवरजी ने पिछले दिनों अपने जीवन के साठ वर्ष पूरे किये. पिछले अंक में घोषित योजना के तहत प्रकाशित होने वाली विशिष्ट सामग्री के क्रम में प्रस्तुत है यथार्थवाद और सौंदर्यशास्त्र जैसी महत्वपूर्ण आलोचना पुस्तक के लेखक राजकुमार सैनी का आलेख... यह क्रम अगले अंकों में भी जारी रहेगा...

प्रौढ़, व्यापक और परिपक्व अनुभव-संसार के धनी : नामवर सिंह

पिछले तीन दशकों से हिंदी आलोचना के सर्वाधिक विवादास्पद प्रवक्ता के रूप में डा. नामवर सिंह अक्सर साहित्यिक चर्चाओं/परिचर्चाओं का केंद्र रहे हैं. इनका जन्म 1 मई, 1927 को वाराणसी जिले के जीवनपुर गांव में हुआ था. 1951 में काशी हिंदु विश्वविद्यालय से एम.ए. किया. फिर 1956 में पी.एच.डी. की. तब से लेकर आज तक उनकी प्रकाशित पुस्तकों की सूची इस प्रकार है :

1. बकलम खुद. 2. हिंदी के विकास में अपभ्रंश का योग
3. पृथ्वीराज रासो की भाषा (शोध प्रबंध)
4. आधुनिक हिंदी साहित्य की प्रवृत्तियां
5. छायावाद इतिहास और आलोचना
6. कहानी नयी-कहानी 7. कविता के नये प्रतिमान
8. दूसरी परंपरा की खोज.

इसके अतिरिक्त कुछ पुस्तकों का संपादन किया है और हिंदी आलोचना की महत्वपूर्ण पत्रिका 'आलोचना' का संपादन कर रहे हैं. अनेक भाषणों और साक्षात्कारों के रूप में इनके वक्तव्य विविध पत्रिकाओं/चयनिकाओं में बिखरे पड़े हैं. इसके अतिरिक्त उन्होंने कविताएं भी लिखी हैं.

एक जागरूक आलोचक के रूप में वे अक्सर यथार्थवादी विवेक और रोमानी संविवेक के द्वंद्व से ग्रस्त रहे हैं. कभी-कभी ऐसा भी हुआ है कि पक्षधारता से दामन छुड़ाते-छुड़ाते, पक्षपात ने उनका दामन थाम लिया है. अगर भैरव और मार्कंडेय की कहानियां दोषयुक्त थीं तो निर्मल वर्मा की कहानियां दोषमुक्त नहीं थीं. लेकिन निर्मल वर्मा की कहानियों में उछले प्रश्न से उन्हें लेनिन की कृति के शीर्षक (क्या करें?) की याद आयी. इसी तरह बाद की पीढ़ी में उन्हें इसराइल, मधुकर सिंह आदि कभी याद नहीं आए! कमियां और खामियां तो उनमें भी रही होंगी जो उन्हें अक्सर और बार-बार याद आते रहे. कविता की आलोचना में उन्हें नागार्जुन बहुत देर से याद आए. आदि, आदि.

लेकिन कविता हो या कहानी, दोनों क्षेत्रों में कंटेट और फार्म दोनों स्तरों पर उन्होंने **परंपरागत कविता और परंपरागत कहानी तथा नये ढंग की कविता और कहानी** के बीच के अंतर को रेखांकित किया. इस प्रकार उन्होंने बड़े ही सटीक ढंग से पुरानी और नयी रचना के फर्क को समझाया. नयी विचारशीलता और संवेदनात्मकता का समीकरण पेश किया. यह उनके कृतित्व का सकारात्मक पक्ष है कि उन्होंने पुराने और नये मूल्यों के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

टकराव को पहचाना और उस पहचान को स्पष्ट किया.

किंतु मूल्यों के टकराव को, व्यावहारिक आलोचना करते समय, उन्होंने पीढ़ियों के टकराव के साथ मिलाकर एक मोहक भ्रम की सृष्टि की. इसका बाद की पीढ़ियों पर असर पड़ा, जो स्वास्थ्यवर्धक नहीं था. मूल्यों का टकराव मुख्य अंतर्विरोध था, पीढ़ियों का टकराव गौण. दोनों को गडमड कर देने से स्थितियां स्पष्ट होने के बजाय और उलझती गयीं. साहित्य में जो नये ढंग का रीतिवाद आया, उसको भी डा. नामवर सिंह ने अनदेखा किया. बल्कि जब-जब इस नये ढग के रीतिवाद संबंधी राज-तिलक समारोह हुए तब-तब वे उनमें 'शामिल' भी हुए, 'शामिल' कहना शायद ज्यादती होगी, लेकिन उनमें वे 'उपस्थित' तो रहे ही.

अमरकांत, भीष्म साहनी, शेखर जोशी, ज्ञानरंजन जैसे कथाकारों के साथ उन्होंने यथा-समय न्याय किया लेकिन और बहुत से लेखकों की उन्होंने उपेक्षा की जो नये ढंग के रीतिवाद के साथ अपने-अपने ढंग से जूझ रहे थे. यदि यह उपेक्षा अनजाने होती तो कोई बात नहीं थी. लेकिन यह उपेक्षा जब-तब जानबूझ कर की गयी.

अपनी आलोचनाओं में डा. नामवर सिंह ने क्रांतिकारी रोमांस और सक्रिय यथार्थ को चित्रित करने वाली रचनाओं की कलात्मक संभावनाओं पर आशंका व्यक्त की और निष्क्रिय ढंग की रोमानी-यथार्थवादी रचनाओं की मगन-भाव से चर्चा की. मुक्तिबोध साहित्यालोचन के साथ-साथ आत्मालोचन भी करते थे जबकि डा. नामवर सिंह सिर्फ साहित्यालोचन करते हैं.

लेकिन इन सीमाओं के होते हुए भी उनके महत्वपूर्ण योगदान को नकारा नहीं जा सकता. उन्होंने हिंदी कहानी और हिंदी कविता की आलोचना को विश्व-स्तर पर होने वाली कहानी और कविता संबंधी आलोचना से जोड़ कर देखा. भारतीय आलोचना और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर होने वाले अद्यतन साहित्यालोचन के बीच एक संपर्क कायम किया.

प्रेमचंद की 'बूढ़ी काकी' की परंपरा के विकास के रूप में भीष्म साहनी की 'चीफ की दावत' का उल्लेख करना इस बात का सबूत है कि डा. नामवर सिंह की समीक्षा-दृष्टि अंतर्विरोधों के बावजूद भोंथरी नहीं हो पायी है.

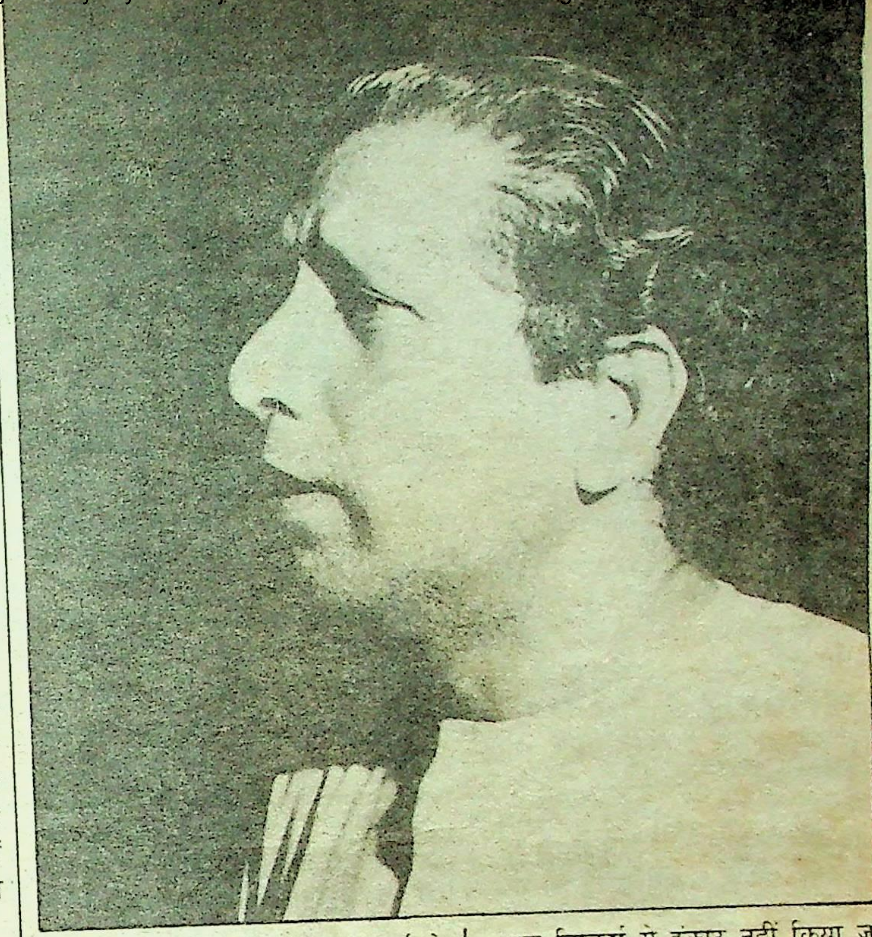

मुक्तिबोध और हरिशंकर परसाई के साहित्य के बारे में डा. नामवर सिंह का यह कथन अत्यंत महत्वपूर्ण है कि हिंदी में यही दो लेखक थे जिन्होंने आजादी के बाद मोहभंग की पीड़ा का पहलेपहल साक्षात्कार किया था. लेकिन इस संदर्भ में भी (अनजाने या जानबूझकर?) वे और कई नाम भूल गए! डा. रामविलास शर्मा, नागार्जुन, हंस राज रहबर आदि जो मोहभंग के शिकार कभी हुए भी नहीं.

अपने हाल ही में दिए एक इंटरव्यू में डा. नामवर सिंह ने कहानी और उपन्यास के अंतर को बड़ी सफाई के साथ रेखांकित किया है. वे कहते हैं— ''जहां काम आवै सुई, कहा करे तलवार. सूई से तलवार का काम नहीं लेना चाहिए. यह वही आदमी लेता है जो स्वयं सूई के महत्व को नहीं समझता है. तलवार के महत्व को तो समझता ही नहीं है. यह मैं जब कहता हूं तो मोटे तौर से बात करने की सुविधा के लिए की सूई को मैं कहानी मान लेता हूं और उपन्यास को तलवार.''

(सुरेश पांडेय को दिया साक्षात्कार, पहल पुस्तिका-7 पृष्ठ 56)

इस निष्कर्ष से इंकार नहीं किया जा सकता कि कहानी की अपनी सीमाएं और मर्यादाएं होती हैं. कहानी उपन्यास का लघु-संस्करण नहीं है.

हम कामना करते हैं कि वे चालीस वर्ष और जिएं. अपने भाषणों, वक्तव्यों, वाचन और लेखन से साहित्य-संसार को विचारोत्तेजित करते रहें.

वे हिंदी संसार को अपनी श्रेष्ठतम और कालजयी कृति दें. हम उनसे ऐसी उम्मीद कर सकते हैं **क्योंकि उनमें उच्चकोटि की प्रतिभा है, उनका अनुभव-संसार प्रौढ़, व्यापक और परिपक्व हो चुका है.** विपुल और विविधात्मक अध्ययन सामग्री का वे अवगाहन कर चुके हैं. सुविधा-साधन संपन्न हैं. गुरुदेव रवीन्द्रठाकुर के शिष्य आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के शिष्य हैं. अब उनकी अवस्था ऐसे महाकाव्य के सर्वथा उपयुक्त है. क्योंकि इस अवस्था में राग-द्वेष शांत रहने लगते हैं. और आदमी के भीतर का जहर निकल चुका होता है. उनके आगे के चालीस साल अत्यंत संभावनापूर्ण और सार्थक हों, यही कामना है. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एम.ए. हिंदी, शोध कार्यरत.
संप्रति : प्रकाशन एवं पुस्तक प्रकाशन के अतिरिक्त स्वतंत्र लेखन.
संपर्क : 38, लिटन रोड, देहरादून-248001

अतुल शर्मा

पार्क की बैंच पर चश्मा

उन्हें लगा कि उनकी बगल में पड़ा चश्मा उन्हें घूर रहा है. उन्हें उससे डर लगने लगा. डर की हालत में उन्होंने अपने पैर बैंच के ऊपर रख लिए... प्रस्तुत है नये हस्ताक्षर के अंतर्गत यह कहानी

शुरू में उन्होंने चश्मे को कोई तवज्जो नहीं दी थी. एक सरसरी नजर से उसे देखा था – वह बैंच के बिल्कुल कोने में इतमिनान से पड़ा हुआ था. उसके मेरून रंग के नये फ्रेम ने भी उनका ध्यान एकदम से नहीं खींच लिया था. वे, बस चुपचाप उसकी बगल में बैठ गये थे. पार्क में शाम ढले एक खाली बैंच का मिल जाना ही उन्हें सुकून देने के लिये काफी था.

कुछ पल वे अकेले लोगों को गुजरते और टहलते देखते रहे. फिर उनकी नजर चश्में पर जा पड़ी, जो उनकी बगल में बैंच पर पड़ा था. उन्होंने नजर चश्में से हटायी और आसमान की तरफ घुमा ली. आसमान पर नजर ज्यादा नहीं टिक सकी, फिर फिसलकर चश्मे पर जा पड़ी. उन्होंने सामने बैंच पर एक अजनबी को अपनी आंखों में चश्मा चढ़ाते देखा और उनकी नजरें फिर बगल में पड़े चश्में पर आ टिकीं. यह चश्मा जरूर कोई यहां भूल गया है. यह खयाल तब उनके जेहन में उगा हालांकि उसे तभी उग जाना चाहिये था जब उन्होंने चश्मा पहली बार देखा था. जब वे बैंच पर बैठे भी नहीं थे. उन्हें इस बात से अपने आप पर शर्म आने लगी और यह शर्म और ज्यादा बढ़ती गयी उन्हें लगा कि वे चश्मे के सामने शर्मिंदा हैं. फिर उन्हें लगा कि वह चश्मा नहीं है बल्कि चश्मा लगाये कोई आदमी है जो अहसास की तरह चुपचाप उनकी बगल में बैठा है और उन्हें घूर रहा है.

"देखिये, भाई साहब... एक मिनट!"

उन्होंने दयनीय आवाज में बैंच के पास से गुजरते एक आदमी को पुकारा. आदमी रुक गया तो उन्होंने चश्मे को देखा, जैसे उससे माफी मांग रहे हों और भरोसा दिला रहे हों कि अब सब कुछ ठीक हो जायेगा.

"भाई साहब! ये चश्मा यहां पड़ा है. पता नहीं किसका है." उन्होंने आदमी को रुका हुआ पाकर कहा. आदमी ने एक-दो पल चश्मे को घूरा. फिर वह उसके नजदीक गया और चश्में को छुआ.

"कोई यहां बैठा होगा, इसी बैंच पर आपकी तरह और जाते हुए इसे ले जाना भूल गया होगा." अपनी तरह से आदमी ने कहा और आगे चल दिया.

आदमी के जाते ही वे चश्मे की ओर देखने लगे. जरूर यह छूट गया है और कोई इसे छोड़ गया है. जो यहीं बैठा था. इसी बैंच पर, उनकी ही तरह. उसने यह बात कही है, इसका मतलब वे भी अपना चश्मा ऐसे ही भूल सकते हैं. जब उन्होंने अपनी आंखों पर चढ़े चश्मे को भी महसूस किया. अपनी उंगलियों से उसे छुआ और एक सुकून महसूस किया. तभी उन्हें लगा कि उनकी बगल में पड़ा चश्मा उन्हें घूर रहा है. उन्हें उससे डर लगने लगा. डर की हालत में उन्होंने अपने दोनों पैर बैंच के ऊपर रख लिये. छड़ी को अपने और चश्में के बीच रख दिया. पर उससे भी चश्मे की स्थिति में कतई फर्क नहीं आया. उन्हें लगा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चश्मा उनसे नाराज है, और उसके भीतर बैठा आदमी गुस्से के कारण चुप है.

"देखो भाई! इसमें मेरा क्या कुसूर है, मैं तुम्हें पहचानता नहीं. मुझ जैसे पचासों आदमी यहां आते हैं, तुम्हें पता है कि तुम उनके लिए क्या हो? देखो भाई! चश्मा उनकी आंखों और उनकी क्षमताओं का पर्याय है."

वे रुक गये और उन्होंने चश्मे को एक बार फिर गौर से देखा. लगा जैसे चश्मा उन्हें अब घूर नहीं रहा है, उन्हें अपलक ताक रहा है. उन्हें अपनी बगल में सरसराहट-सी महसूस हुई. पार्क में शाम की हवा अपने खास अंदाज में चलनी शुरू हो गयी थी और एक छोटा लड़का अपने टोकरे में चने लिये उनके सामने खड़ा था.

"बाबू साहब! आपने मुझे बुलाया..." लड़का ढीठ बनकर उनके सामने खड़ा हो गया.

"मैंने,"... वे कुछ पल लड़के को घूरते रहे.

"देख लड़के. ये चश्मा पड़ा है. पता नहीं कौन इसे छोड़ गया है."

लड़के ने चश्मे की तरफ देखा. उसने अपनी टोकरी पार्क की बेतरसीब-सी बढ़ आयी हरी दूब पर रख दी और चश्मे के बिलकुल नजदीक चला आया.

"साब, ये तो उसका दिल और दिमाग ही यहां छूट गया है. वह जहां भी होगा यहीं खिंचा आयेगा..."

उन्हें खुशी हुई कि अब लड़का डर नहीं रहा. वह दिलचस्प आंखों से चश्मे का मुआयना करने लगा. उसने चश्मा उठाया, उसे खोला और उसके भीतर झांका... फिर कांपते हाथों से उसे वापस रख दिया.

"साब! ये औरत का चश्मा है."

"औरत का? कैसे भाई?"

"मेरी दादी के भी था!"

"क्या पता वही भूल गयी हो?"

"दादी तो मर गई साब... और मरने से भी पहले उसका चश्मा टूट गया था."

लड़का अब दूर हट गया. उसने टोकरी उठायी और वापस जाने लगा फिर एकाएक वह मुड़ा और उनके बिलकुल सामने आ खड़ा हुआ.

"साब चना ले लो."

वे चौंके. उन्होंने चश्मे की तरफ देखा और उन्हें लगा शायद लड़के को उन्होंने पहले चने के लिये कह दिया हो.

"हां... हां देता क्यों नहीं, पचास पैसे के दे दे."

"साब... एक रुपये का ले लो...!" लड़का एकाएक उदास हो गया और उसकी आवाज में अजीब-सी मुर्दानगी चली आयी. उन्होंने फिर चश्मे को देखा और उन्हें लगा चश्मा उदास है. इसलिये उनकी तरफ नहीं देख रहा बल्कि ऊपर आसमान की तरफ देख रहा है.

"अच्छा ला... एक रुपये का ही दे दे." उन्होंने लड़के की तरफ हाथ बढ़ाया. लड़के ने पता नहीं कब से कागज की पुड़िया में चने रखे हुए थे और वह उनमें नींबू निचोड़ रहा था. उन्होंने हाथ में चने की पुड़िया महसूस की और जेब से एक रुपये का पुराना नोट निकाला, चश्मे की तरफ देखा और वह नोट लड़के को दे दिया. लड़का चला गया.

"लो भाई खाओ." उन्होंने कहा और पुड़िया अपने और चश्मे के बीच रख दी. खुद खिसक गये और छड़ी को वहां से उठा कर अपनी दूसरी तरफ लिटा दिया.

"मुझे चने अच्छे नहीं लगते, पर दोस्त तुम खाओ और उदास न हो. फर्ज करो तुम मेरा चश्मा होते!" उन्होंने मुस्कुराकर पांव वापस बैंच से उठाकर जमीन पर रख दिया. छड़ी को हाथों में ले लिया और उसे सहलाते-सहलाते कहने लगे, "पर दोस्त तुम मेरा चश्मा नहीं हो सकते. क्योंकि पहली बात, तुम मेरा चश्मा नहीं हो और दूसरी बात यह कि अगर तुम मेरा चश्मा होते तो इस तरह नहीं खो सकते थे. फिर भी फर्क नहीं पड़ता. असल बात यह है कि तुम चश्मा हो और ऐसा ही चश्मा मैंने पहन भी रखा है."

उन्होंने फिर चश्मे को देखा. लगा कि चश्मा अब उन्हें दिलचस्पी से देख रहा है और उसका मन बहलाना चाहिये जैसे वे पहले अपने पोते का मन बहलाया करते थे. उन्हें फिर लगा कि चश्मे के भीतर कहीं उनका पोता छुपा हुआ है. वह छुपने के लिए अजीबोगरीब जगहें ढूंढ लेता था.

"हां... बबलू, चुप चने खाओ. और बेटा तुम्हें याद है, मैंने अपना चश्मा कैसे बनवाया था!" चश्में से; उनके पोते को धकेल कर, फिर उत्सुक आंखें, उन्हें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ताकने लगी थी.

"हां! तुम भी सुनो, तब बबलू बहुत छोटा था. उसे खिलाते-खिलाते मेरा चश्मा टूट गया था. मेरे बेटे ने कुछ दिनों में बनवाने को कहा. जब उसे तनख्वाह मिलेगी. अब मैं तो उसे बचपन से जानता हूं. है तो मेरी ही औलाद. मुझसे क्या चालाकी करेगा. एक-दो महीने तो मैं देखता रहा. अब बने चश्मा– तब बने चश्मा. नहीं बनना था. वह नहीं ही बना. बस फिर मैं अपनी पर आ गया. सब्जी लाने के जो पैसे देता तो मैं पता है क्या करता? मैं बड़ी मंडी से सब्जी लाता. घूमने का घूमना हो जाता और पैसे भी बच जाते. तब एक रोज जब पूरे पैंसठ रुपये जमा हुए..., अरे! मैं बचे हुए पैसे अपने सिरहाने रख देता था. तब मैंने चश्मा लिया था. अब जिसका ये चश्मा होगा वो किस हाल में होगा. तो अब सोचो. किसका चश्मा है ये?"

अचानक अपने नजदीक तीन आदमियों की मौजूदगी से वे चौंके. पार्क की लाईट जल चुकी थी और वे तीनों उन्हें देख रहे थे. चेहरे पर खिचड़ी दाढ़ी छितरी हुई थी.

"देखिये, बात दरअसल ये है कि मैं इस बैंच पर बैठा हूं. और यहीं यह चश्मा पड़ा है. कोई आदमी इसे भूल गया है और अब उसके लिये परेशान होगा. मैं हर गुजरने वाले से पूछ रहा हूं. शायद किसी को वह आदमी मिल जाये. अब देखिये चश्मे के बिना कितनी तकलीफ होती है. जब आपको दुनिया धुंधली दिखायी देने लगती है और चीजें बेडौल..."

"सही कह रहे हैं, साहब!" एक अधेड़ चश्मे के पास चला आया उसने उसे उठाया और पहन लिया, "अरे! मुझे तो कुछ भी दिखायी नहीं दे रहा है." उसने चश्मा वापस बैंच पर रख दिया, "चश्मा साला मिला भी तो काम नहीं दिया."

"चश्मा हमेशा आदमी की आंखों के मिजाज को भांपता है, तब काम देता है..." वे हंसे लगभग ठहाका-सा मारकर. उन्हें हंसता देख तीनों आदमी सहम गये और चुपचाप वहां से चले गये.

"देखो दोस्त, चले गये. तुम कमाल की चीज हो." उन्होंने चश्मे को प्यार से सहलाया, "मैं खामख्वाह डर रहा था और तुम परेशान. अब चश्मे को इस्तेमाल करने के लिये आंखें भी चाहिये और आंखें भी ठीक. वे जिनके लिये चश्मा बना है. दोस्त, तुम्हारी आंखें तुम्हें मिलेंगी, बस एक ध्यान रखना, यहां से कहीं मत जाना. जब मैं बच्चों को अपने साथ ले जाता हूं तो उनसे कहता हूं कि अगर तुम खो गये तो वहीं रहो जहां तुम हो. तुम्हें ढूंढने वाला वहीं पहुंच कर तुम्हें ढूंढ लेगा.

अच्छा दोस्त! अब मुझे चलना चाहिये. रात होने लगी है. मुझे इसलिये भी चलना चाहिये क्योंकि मैं खोया नहीं हूं. और तुम भी कुछ देर बाद खोये नहीं रहोगे. बिल्कुल यहीं तुम्हारी आंखें चली आयेंगी. निश्चित रहो. गलत आंखें तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकतीं."

वे धीरे-धीरे उठे. छड़ी उठाई और पार्क की दूधिया रोशनी में आगे बढ़ गये. दो कदम चलने के बाद उन्होंने पीछे मुड़ कर चश्मे को प्यार से देखा, चश्मे के बगल में चनों की पुड़िया रखी थी और वे चने खाये नहीं गये थे. वे वापस बैंच पर पहुंचे, चनों की पुड़िया उठायी और बोले, "तुम तो चने खा नहीं सकते. पार्क के चौकीदार को दे देता हूं, उसके बहुत प्यारे-प्यारे बच्चे हैं." □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस बार का ज्ञानपीठ पुरस्कार : इंतजार

बालस्वरूप राही

ज्ञानपीठ पुरस्कार-स्थापना की ऐतिहासिक घोषणा 2 अप्रैल, 1962 को हुई थी. घोषणा पर कविवर सियाराम शरण गुप्त की प्रतिक्रिया थी—''अस्मिन् द्वयं श्रीश्च सरस्वती च. (इसमें दोनों हैं लक्ष्मी भी सरस्वती भी.) समय के साथ ज्ञानपीठ पुरस्कार का मान बढ़ता गया और अब यह भारत के सर्वाधिक काम्य और प्रतिष्ठित पुरस्कारों में गिना जाता है. 22वां ज्ञानपीठ पुरस्कार उड़िया में आधुनिक कविता के प्रवर्तक-प्रवक्ता सची राउतराय को समर्पित किया गया था.

22वां पुरस्कार शीघ्र ही घोषित होने वाला है. पुरस्कार का एक नियम यह भी है कि जिस भाषा के लेखक को पुरस्कार मिलता है, उस भाषा पर आगामी तीन वर्षों तक विचार नहीं किया जाता. 20वां पुरस्कार मलयालम (तकषी शिवशंकर पिल्लै), 21वां पुरस्कार गुजराती (पन्नालाल पटेल) और 22वां पुरस्कार उड़िया (सची राउतराय) को प्राप्त हुआ, अतः 23वें पुरस्कार के लिए इन भाषाओं के लेखकों पर विचार नहीं किया जा रहा है. संविधान के 8वें परिशिष्ट में परिगणित शेष 12 भाषाओं में से किसी एक भाषा के लेखक को ही यह पुरस्कार घोषित किया जायेगा.

इस बार पुरस्कार-नियमावली में फिर एक महत्वपूर्ण और प्रभावकारी परिवर्तन हुआ है. अमृता प्रीतम को प्राप्त होने वाले 17वें ज्ञानपीठ पुरस्कार तक नियम यह था कि यह पुरस्कार अवधि विशेष में प्रकाशित सर्वश्रेष्ठ कृति के रचयिता को प्रदान किया जायेगा. कतिपय साहित्य-चिंतकों, और आम पाठकों ने भी, यह आपत्ति उठायी कि इस नियम के चलते कई युग-प्रवर्तक साहित्यकार पुरस्कार की परिधि से परे हो जाते हैं, जिसका कोई औचित्य नहीं है. हिंदीवालों का तो खासतौर पर कहना था कि दिनकर और अज्ञेय को तो ज्ञानपीठ पुरस्कार मिल गया किंतु महादेवी, जैनेंद्र जैसे दिग्गजो को यह पुरस्कार भेंट नहीं किया जा सका. इस आपत्ति कल निराकरण के लिए 18वें पुरस्कार से पुरस्कार की परिधि व्यापकतर बना दी गयी और यह पुरस्कार कृति विशेष पर नहीं, साहित्यकार के भारतीय साहित्य को उल्लेखनीय योगदान के लिए दिया जाने लगा. अभिप्राय यह कि अब विचार पुस्तक पर केंद्रित न रखकर लेखक के संपूर्ण योगदान पर किया जाने लगा. इस नियम के तहत पहला पुरस्कार महादेवी वर्मा को समर्पित किया गया उसके बाद मास्ति वेंकटेश अय्यंगार, तकषी शिवशंकर पिल्लै, पन्नालाल पटेल ओर सची राउतराय को ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया जा चुका हैं.

अब स्थिति भिन्न है. पुरस्कार-नियम में होने वाला परिवर्तन इस प्रकार है—''**पुरस्कार के लिए 15 वर्षों की निधारित अवधि विशेष के दौरान लेखक की समग्र साहित्यिक सृजनात्मकता पर विचार किया जायेगा. उदाहरणत :वर्ष 1987 के ज्ञानपीठ पुरस्कार का निर्णय 1967-82 की अवधि में प्रकाशित कृतियों पर आधारित होगा. सिद्धांत यह है कि जिस वर्ष का पुरस्कार होगा उससे पांच वर्ष पहले से लेकर पिछले 15 वर्षों के मध्य रचित रचनाएं ही पुरस्कार का आधार बनेंगी.** इस नियम से यह लाभ होने की संभावना है कि लेखक के समग्र योगदान के साथ उसकी रचनाधर्मिता की निरंतरता को भी मूल्यांकन के मानदंड के रूप में अपनाया जा सकेगा. इससे पिछले डेढ़-दो दशकों में विशेष सक्रिय लेखकों को यथोचित महत्व प्राप्त हो सकेगा.

दुर्लभ ग्रंथों के जन-सुलभ संस्करण

भारतीय ज्ञानपीठ की विविध आयामी गतिविधियों का एक प्रमुख आयाम है प्राचीन दुर्लभ साहित्य भावी पीढ़ियों के लिए सुरक्षित करना, मूल्यवान ग्रंथों का आधिकारिक संपादन कराकर उनके जन-सुलभ संस्करण प्रकाशित करना. इस संदभ में प्राकृत, अपभ्रंश, कन्नड़, एवं तमिल में प्रामाणिक अनुवाद के साथ अब तक लगभग 130 ग्रंथ प्रकाशित हो चुके हैं जिनमें प्राचीन भारतीय संस्कृति की अमूल्य निधियां सुरक्षित हो सकी हैं. इस ग्रंथमाला की 5 नयी कड़ियां हैं : **षट्खंडागम परिशीलन** (पं. बालचंद्र सिद्धांतशास्त्री), '**तिरुवल्लुवर एंड हिज़ तिरुक्कुरल**' (का.ना. सुब्रह्मण्यम), क्षु. जिनेंद्र वर्णी द्वारा रचित '**जैनेंद्र सिद्धांत कोश**' (नया संशोधित संवर्धित संस्करण)— चार भागों में, आचार्य बट्टेकर प्रणीत प्राकृत ग्रंथ '**मूलाचार**' – दो भागों में (अनु. आर्यिकारत्न ज्ञानमती जी).

भारतीयता का मतलब?

जब हम भारतीय साहित्य की बात करते हैं तब हमारे सामने एक प्रश्न चुनौती के रूप में आ खड़ा होता है, होना भी चाहिए, आखिर भारतीयता है क्या चीज? हम बड़े मज़े से कह देते हैं कि अनेक भाषाओं में रचा जाने पर भी भारतीय साहित्य एक है, भारतीय साहित्य की एक मुख्य धारा है जिसमें सभी भाषाओं का साहित्य समाहित हो जाता है. किंतु यह एकात्मता क्या है, वह मुख्य धारा कौन-सी है? इसका एक बहुत अच्छा उत्तर उपराष्ट्रपति जी शंकर दयाल शर्मा ने हाल ही में श्री शरद पगारे की दो पुस्तकों का विमोचन करते हुए दिया. उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा— ''**भारतीयता का मूल्य तत्व है— समन्वय.**'' हम भारतीय साहित्य की आत्मा के और अधिक निकट पहुंच जाते हैं. भारतीय ज्ञानपीठ ऐसे अवसर जुटाने के लिए प्रारंभ से ही अग्रसर रहा है. इसी उद्देश्य से भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा अभी-अभी प्रकाशित '**भारतीय साहित्यकारों से साक्षात्कार**' (लेखक— डॉ. रणवीर रांग्रा) इस दिशा में अभिनव प्रयास है. इसमें 16 भाषाओं के पचास प्रख्यात साहित्यकारों के साथ विस्तृत अंतरंग और प्रामाणिक साक्षात्कार हैं. इनमें से 14 साहित्यकार ऐसे हैं जिन्हें ज्ञानपीठ पुरस्कार समर्पित हो चुका है : मास्ति वेंकटेश अय्यंगार, ताराशंकर बंधोपाध्याय, सुमित्रानंदन पंत, जी. शंकर कुरुप, डॉ. के. शिवराम कारंत, डॉ. के.वी. पुटप्पा, महादेवी वर्मा, रामधारी सिंह दिनकर, आशापूर्णा देवी, अज्ञेय, उमाशंकर जोशी, तकषी शिवशंकर पिल्लै, डॉ. गोपीनाथ महांती और अमृता प्रीतम. इस ग्रंथ के माध्यम से हम ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त लेखकों से और अधिक निकटता का अनुभव कर सकते हैं. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आप अच्छा साहित्य पढ़ते हैं और स्वयं लेखक बनना चाहते हैं... पर कहीं कुछ ऐसा अवरोध आ जाता है कि आप लिख नहीं पाते. इस स्तंभ के अंतर्गत, ऐसे अनुभव प्रकाशित किये जायेंगे जो 'नयी पौद' की दिक्कतों को सामने रखें. आप क्या और क्यों लिखना चाहते हैं... स्पष्ट करते हुए अपनी कठिनाइयां चित्र सहित 300 शब्दों में लिख भेजिए. लिफाफे पर यह कूपन चिपकाना न भूलें.

'नयी पौद' स्तंभ
सारिका
10 दरियागंज, नयी दिल्ली-110002

आकांक्षा: यथार्थ लेखन की

शांती सिंह 'इशा'

मेरे लेखन में प्रमुख समस्या, अनुभव को लेकर है. काल्पनिकता को परे रखकर, यथार्थ को पन्ने पर उतारना चाहती हूं. और यथार्थ लेखन हेतु, मेरे विचार से, अनुभव आवश्यक है. जब भी, यथार्थ को परे रख, कल्पना पर लेखनी चलाती हूं, कहीं न कहीं लेखनी रुक जाती है, विचार प्रवाह का मार्ग अवरुद्ध हो जाता है. क्यों? शायद इसलिए, कि मैं काल्पनिकता को बहुत कम खींच पाती हूं, क्योंकि यही कल्पना बकवास लगने लगती है.

सोचती हूं, लेखन क्षेत्र हेतु कुछ वर्षों के अनुभव और संजो लूं, फिर लिखूं, परंतु विचारों की नियमितता बनी रहती है, बिना लिखे उलझनें बढ़ती जाती हैं, और जब तक लिख न लूं, किसी अन्य कार्य की रुचि जाती रहती है, कार्य अत्यावश्यक क्यों न हो. संभवतः उम्र के दबाव के कारण, इसी वक्त कुछ करना चाहती हूं. यहीं से शुरूआत करने की आकांक्षा है. कहीं ऐसा न हो कि आने वाले समय में मेरे और लेखन के बीच जमीन-आसमान की दूरी हो जाये.

कविताओं, गीतों, गज़लों वगैरह को तो मैं कल्पना के शिखर तक ले जाने की क्षमता रखती हूं. यथार्थ व जिन्दगी के कुछ छोटे अनुभव इनमें ढाले जा सकते हैं. पर साहित्य की अन्याय विधाओं, विशेषकर 'कहानी' हेतु यथार्थ का, अनुभव का सहारा चाहती हूं. यथार्थ में स्थायित्व है, कल्पना रेत का महल है. रेत के महल की अपेक्षा अनुभवी ईंटों की इमारत खड़ी करना चाहती हूं. अनुभव की कमी है, यही कारण है, आग्राज उलझनपूर्ण है, अनियमित है, अनिश्चित है. यूं इतने वर्षों में भी अनगिनत अनुभव संजोये हैं, सुखद भी, दुःखद भी, पर उन्हें किसी रचना का रूप में हिचकिचाहट महसूस होती है. □

आशा ही जीवन

प्रतिभा ठाकुर 'स्मृति'

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन: और यह अमिय, हृदय को, आत्मा को तृप्त करता हुआ, जीवन की सभी वेदनाओं का अति सहजता से विनाश कर देता है. किसी को कुछ देने की चाह मन में हिलोरे लेती है, उनके भावों को स्पंदित करने हेतु, कोई उसके हृदय के द्वारों पर थपकियां देती है, और जब वह उद्वेग लेखनी के माध्यम से कागज के मूल्य पन्नों पर बिखरता है, तो लगता है कर्म सार्थक हो गया. किंतु जब भाव-राशि, वर्तमान के आंकड़ों पर आधारित पुष्ठाशन-अप्रकाशन के विभेद की रेखा को तोड़ नहीं पाती तो हृदय भीग उठता है, एक बोझ को अनुभूत करते हुए.

लेखन तो एक तपस्या है, कठिन साधना के पश्चात ही सफलता प्रारित का विश्वास मन को दृढ़ बनाता है. अपनी निर्यात से अनभिज्ञ नहीं कि मैं नयी पौद हूं, जिसको सूर्य स्पर्श की चाहना में बढ़ने के लिए अविरत संघर्ष करना है. आत्मविश्वास व लगन को सहचर बनाते हुए— तत्पश्चात ही तो सफलता का वृक्ष, सुखों की पत्तियों को जन्म देगा, प्रेम के पुष्प होंगे और आनंद के फल, सत्य के बीजों को बिखराकर, जीवन की धरा पर पुनः नवीन अंकुरों को स्नेह देंगे और शुभाशीष भी. □

आत्माभिव्यक्ति

ज्योति भागिया

प्रत्येक व्यक्ति स्वयं को अभिव्यक्त करना चाहता है. इसके लिए साहित्य एक सर्वोत्तम साधन है.

मानव मन अथाह समुद्र है. उसमें अनगिनत हीरे-मोती रूपी विचार हैं. मैं मानव मन के भीतर झांकना चाहती हूं. मानव-मन की एक-एक परत खोलकर मनोवैज्ञानिक ढंग से समाज के सामने प्रस्तुत करना मेरा उद्देश्य है.

मानव-मन की भीतरी दुनिया के अतिरिक्त एक और भी दुनिया है, बाह्य दुनिया. कठोर, यथार्थ, कुरूप, घिनौनी दुनिया. ये दुनिया एक-दूसरे की जान की दुश्मन हैं, नित नवीन संहारक अस्त्रों का निर्माण किया जा रहा है. मानो समस्त मानव-जाति एक परमाणु के ढेर पर बैठी है और एक चिंगारी समस्त मानव जाति का विनाश करने में समर्थ है. साहित्य इसी आंतरिक व बाह्य दुनिया का प्रतिबिंब है. मैं इन्हीं विषयों पर लिखना चाहती हूं, क्योंकि साहित्य इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं.

लेखन कला के मूल में संभवतः आत्माभिव्यक्ति ही एक कारण रहा है. मैं भी शायद स्वयं को व्यक्त करने के लिए लेखनी का सहारा लेना चाहती हूं. मनुष्य का अस्तित्व व आत्माभिव्यक्ति एक सिक्के के दो पहलू हैं. जब व्यक्ति स्वयं के कटु-मृदु अनुभवों को व्यक्त करने में असमर्थ होता है, तब उसके अस्तित्व के सामने ही एक प्रश्न चिह्न लग जाता है.

मैं क्या व क्यों लिखना चाहती हूं ये वास्तविक समस्या नहीं है, लेकिन विचारणीय यह है कि क्या मैं लिखना चाहती हूं, क्या मैं लिख पाती हूं!

लिखने की इच्छा

राजेश शर्मा

कभी-कभी बहुत इच्छा होती है अपने भीतर की भावनाओं को कागज पर उतारने की. लंबे समय से कुछ भी मैं पढ़ता रहा हूं... उससे प्रभावित होता रहा हूं. धीरे-धीरे मुझमें भी लिखने की इच्छा प्रबल होती चली गयी. साहित्य के क्षेत्र में कुछ कर गुजरने की महत्वाकांक्षा लिए जब भी मैं कुछ लिखने बैठा.... हर बार यही मुसीबत आ खड़ी हुई कि शुरूआत कैसे की जाये!

लिखना मैं वही चाहता हूं जो हमारे चारों ओर घट रहा है... पर उस रूप में कर नहीं पाता. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कथा पहेली : जून, 1988 के पुरस्कार विजेता तथा सर्वशुद्ध हल.

इस बार प्रतियोगिता में केवल तीन ही ऐसे हैं जो एक-एक अशुद्धियुक्त हल भेज सके हैं. अधिकांश प्रतियोगियों के प्रयास सराहनीय रहे हैं. पुरस्कार राशी इन प्रतियोगियों में बराबर-बराबर बांटी जा रही है.

यह रहा कथा पहेली का सर्वशुद्ध हल

1. कछुआ और बंदर.
2. ललित मोहन गुरुरानी.
3. गुड़ियाघर, फेंसी ड्रेस, महाभियोग, प्रचार पंवाए.
4. ब्रजेश्वर मदान ने देवेंद्र इस्सर विद्यार्थी के संदर्भ में.
5. 18 और 19.
6. 'मधुमक्खी और हल' में मधुमक्खी.
7. छतरी.
8. गोलकुंडा.
9. भारतीय आख्यायिका परंपरा की अभिनव रूप सृष्टियां.
10. नाच चल रहा है.

.....और यह रहे इस बार के पुरस्कार विजेता

1. नमिता
   सी-49, हरमू कालोनी,
   रांची-834012 (बिहार)
2. प्रबोध दवे
   100 एच.आई.जी. (जूनि.)
   विजय नगर, इंदौर (म.प्र.)
3. मीना झा
   द्वारा श्री दीनानाथ ठाकुर, मिथिला क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक,
   प्रधान कार्यालय,
   बहेरियासराय, जि. दरभंगा,
   बिहार-846001.

सारिका कथा पहेली : अगस्त '88

कहानियां गौर से पढ़िये और 200 रुपये के पुरस्कार जीतिए

नये स्तंभ 'सारिका कथा-पहेली' में भाग लेने के लिए आप सभी आमंत्रित हैं. प्रतियोगियों को 'सारिका' के इसी पृष्ठ पर पूर्तियां भेजनी होंगी, पूर्तियां सादे कागज पर न भेजें, इस कथा-पहेली के सभी प्रश्न 'सारिका' जुलाई, 1988 अंक पर आधारित हैं. कार्यालय में डाक द्वारा हल प्राप्त होने की अंतिम तिथि 20 अगस्त 1988 है. पुरस्कार विजेताओं के नामों की घोषणा अक्तूबर, 1988 के अंक में दी जायेगी.

प्रतियोगियों के लिए विशेष

दूर-दराज के जिन इलाकों में पाठकों तक 'सारिका' देर से पहुंचती है वे 'सारिका कथा पहेली' में अपनी पूर्तियां 20 तारीख के बाद भी भेज सकते हैं. पूर्तियां भेजते समय यह उल्लेख अवश्य होना चाहिए कि 'सारिका' आप तक देर से पहुंची.

1. इस अंक का सर्वश्रेष्ठ लेख..है.
2. "वह जिसकी मदद करती उसे आभाष तक न होने देती कि वह उसके लिए कुछ कर रही है."
   यह टिप्पणी....... रचना की ....पर सटीक बैठती है.
3. वह पात्र जिन रचनाओं के हे. उनके पात्र कोष्ठक में लिखें.
   कामदमनी ( ), सिंथिया ( ), रश्मि ( ), हनीफा ( ), डिलमैन ( ).
4. अभिशप्त होकर अपने ही कुत्तों क शिकार हो जाना.................... चरित्र की नियति है.
5. इन पुस्तकों के लेखकों के नाम कोष्ठक में लिखें—
   मृच्छकटिकम् ( ), द प्रिजनर ऑफ सेक्स ( ), मुद्राराक्षस ( ), कला विकास ( ), कौमुदी महोत्सव ( ).
6. "आप इसमें जितनी रकम चाहें, भर सकती हैं. यह आपकी फीस होगी, मेरी आंखें खोलने के लिए."
   यह संवाद .... रचना में .... का है.
7. नाम उलटने का विवरण......................लेख में.................... के संदर्भ में आया है.
8. मिलर आजीवन स्त्रियों से घृणा क्यों करते रहे?
   ....
   ....
9. ....ने 14 वर्ष तक मिस्र के जेल में सजा काटी.
10. "अभी तक साहित्यकारों ने सांप्रदायिकता, जातिवाद और अलगाववाद को अहमियत नहीं दी है लेकिन इस समस्या ने हमारे सामने आज एक शैतानी शक्ल अख्तियार कर ली है."
    यह कथन .... का है.

पता..

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जमीन से जुड़ी कहानियों में ग्रामात्मा का साक्षात्कार

'क्रौंचबध तथा अन्य कहानियां' के प्रकाशन से तथा इसके भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा पुरस्कृत होने से प्रसिद्ध कथा लेखिका ऋता शुक्ल को हिंदी के सिद्ध कथाकारों के बीच पूर्ण प्रतिष्ठा प्राप्त हो गयी है. इस संकलन की कुल तेरह कहानियों का स्वर समवेत भारतीय ग्राम संस्कृति का भावविह्वल स्वर है जो भोजपुर अंचल की सांस्कृतिक स्वरलिपि के रूप में प्रस्तुत हुआ है. इस रचनात्मक सांस्कृतिक भाव कोष में प्राप्त हो गयी है औसत किसान-जीवन की अनेक स्तरीय आंतरिक पीड़ा को. इसके बीच से गुजरने के बाद निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि लेखिका ने गांव के दुःख को निकट से देखा है तथा उसे भोगा भी है. इतना होते हुए भी लेखिका में जनवाद की शोभा-चारिता नहीं है और न ही उसमें कहीं आरोपित आधुनिकता है. उसकी कहानियों में जो कुछ भी है, वह गांव की अपनी निजी यथार्थ पहचान को उसके प्रतिनिधि पात्रों में रेखांकित करने की सर्वथा मौलिक कहानी-कला है. ये समस्त मुख्य पात्र हमारे अत्यंत निकट के हैं, जाने-पहचाने हैं और प्रायः पुरानी पीढ़ी के हैं. काका पंडित रघुनाथ दुबे (समय की गति), असंधतो आजी और रामबचन बाबा (प्रतिक्रिया), कमला नानी और रघुवंश नाना (आइलि गवनवा की सारी), फूलमती दीदी (मोहताज), यदुनाथ बाबा (क्रौंचबध), छोटका काका और बड़का काका (सातवीं बेटी), भिरुगनाथ बाबा (चक्षुदाह), तिलकधारी बाबा (सरबहारा), कालिंदी बुआ (कदली के फूल) और सोनहुली काकी (प्रतीक्षा) आदि नाम स्वयं एक संपूर्ण संदर्भ हैं. काका-काकी, आजा-आजी, नाना-नानी, दीदी-बुआ और बाबा लोगों के पद और संदर्भ में जो एक पुरातन सांस्कृतिक रोमांच है उसकी पहचान ऋता शुक्ल में संपूर्णता के साथ उभरी हुई है. इनसे जुड़ी हुई घर-बार नैहर-सासुर की मनमोहक स्मृति चित्रावलियां कहानियों में एक ऐसे स्वाद का सृजन करती हैं जो हिंदी-कहानी साहित्य में अद्वितीय हैं. वैज्ञानिक बीसवीं शताब्दी के अंतिम चरण का आधुनिक पाठक इन चित्रों में उभरे हारे-थके और समय के धक्के से विथके अस्तमान जनों की अथाह मानवता देख स्तब्ध हो जाता है. इसके साथ ही वह आत्मालोचन के लिये विवश होता है. वह क्या है उस पुरानी पीढ़ी के भोले-भावुक और निष्ठा सम्पन्न लोगों में जो उन्हें भरा-भरा बनाता है और उनकी तुलना में भौतिक संपन्नता की जमीन पर खड़ा नया आदमी बहुत खोखला लगता है. इस प्रकार भावाच्छनन अनुरंजन के साथ लेखिका जो विचारोत्तेजकता के आयामों का सृजन कर देती है उससे कहानियों की मूल्यवत्ता बढ़ जाती है.

गंवई जीवन के लिये समर्पित ऋता शुक्ल की लेखनी में कहीं नाम मात्र के लिये भी बासीपन नहीं मिलेगा. नये और पुराने की समानांतर संवेदनाओं के सृजन में अपूर्व ताजगी होती है. कहानियां समकालीन चालू ढांचे से हटकर जब अत्यधिक सहजता के साथ फैलाव लेती हैं तो उनका आकर्षण और बढ़ जाता है. किसी बाबा के रेखाचित्र में त्याग, मानवीय मूल्य, न्याय और निष्ठा का गाढ़ा रंग भर कर लेखिका परदे के पीछे से आज की मूल्यहीनता को ललकारती है तो भी कहीं से ऐसा नहीं लगता है कि यह व्यामोहग्रस्तता या पुरातन का उच्चाटन है. ग्राम जीवन के सांस्कृतिक रस-गंध की पहचान लेखिका में बेजोड़ है. वह उसे आधुनिक के पास गिरवी रखने के लिये तैयार नहीं दीखती है. उसके लिये आधुनिकता कौंध जैसी नहीं, एक तड़पन जैसी है. इसलिये उसकी संवेदना पुरातनता के नरक में बजबजाती मोहक जिंदगियों के भीतर से व्यंग्य के रूप में फूटती है. किसी दर्शन, किसी कतार और किन्हीं नारों की तहत लेखिका कुछ नहीं लिखती. ऐसा लगता है कि उसके लेखन के पीछे जो कुछ भी है वह भीतर से जीवन की पुकार है और बाहर से जीवन का दबाव है.

हिंदी कथाकारों ने नये-पुराने संस्कारों की टकराहट का चित्रण विशेष मनोयोग के साथ प्रस्तुत किया है. विशेषकर ग्राम जीवन के संदर्भ में इसकी ज्वलती प्रश्नशीलता बारंबार सामने आती है. इस सनातन ग्राम संस्कार बनाम आधुनिक मध्यवर्गीय नागरिक संस्कार के संदर्भों को अपनी अधिकांश कहानियों में कुछ अतिरिक्त सहजता और गहरी पैठ के साथ ऋता शुक्ल ने भी उठाया है. पुस्तक की शीर्षक कथा 'क्रौंचबध' में भी स्थितियों की ऐसा ही समस्यात्मक जटिलतायें हैं. यहां लेखिका दोनों स्थितियों के बीच संतुलन की भांति साक्षी के रूप में दृष्टिगोचर होती है. इसके साथ उसमें अपने निजी भोग की पीड़ा भी है. यदुनाथ बाबा की इस कहानी के बहाने कथा-लेखिका सुपरिचित कथा-विषय के परदे के पीछे कहीं और ले चलना चाहती है. पाठक अनुभव करता है कि इस प्रकार की कहानियों की रचना करते-करते लेखिका बारंबार गांव-घर के बदलते माहौल में, उसकी अनंत स्फीत पीड़ाओं में, वहां फिंक जाती है जहां आजा-आजी आदि नामधारी जाति के जीव

क्रौंचबध तथा अन्य कहानियां,
रचनाकार : ऋता शुक्ल
प्रकाशक : भारतीय ज्ञानपीठ,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गल-गल रहे हैं. अपनी अथाह संवेदना का कोष लुटाती लेखिका उनकी मानवीयता, उनके स्वभाव को सहजता एवम् उनके ग्रामीण व्यक्तित्व की महानता को रेखांकित करती चलती है. उन सजीव चरित्रों में किसी महान चरित नायक-नायिका की फांका पाकर कहानी के पाठकों को असीम वृद्धि मिलती है. लेकिन ऐसा लगता है कि मात्र इस वृद्धि-सृजन के लिये लेखिका कथा में हाथ नहीं लगाती है. अपने पाठकों में असंगत के लिए गहरी पीड़ा और अभावों के लिए प्यास भरी छटपटाहट उत्पन्न करना उसका उद्देश्य होता है. इस उद्देश्य में सफल होना ही उसकी लोकप्रियता का रहस्य है.

अन्य कहानियों में से 'उपलब्धि', 'प्रतिक्रिया', 'समय की गति' और 'सरबहारा' में भी संस्कारों की टकराहट का चित्रण है. गांव में घुसे शहर के उपद्रव को इन कहानियों में लेखिका बहुत ही मर्मभेदी कथा-दृष्टि से देखती है. 'उपलब्धि' तो इस संदर्भ से जुड़ी बेजोड़ कहानी है. अत्याधुनिक पति राहुल के लिए परंपरा के प्रति समर्पित पत्नी एक समस्या है. समस्या संघर्ष बन जाती है और संघर्ष की इस विस्तृति करुण कथा में विजय परपरा की होती दीख रही है. लेकिन कहानी को पढ़ कर ऐसा नहीं कहा जा सकता है कि लेखिका पक्षपात कर रही है. वास्तव में यह उसकी अपनी दृष्टि है. वह आस्थाओं की जमीन को छोड़ कर खोखली आधुनिकता और फैशनी विद्रोह को ओढ़ने के लिए प्रयत्नशील नहीं होती है. ऐसा भी नहीं है कि उसमें आधुनिकता नहीं है. उसकी कहानियों के केंद्रीय ग्राम-संचार तथा उसकी आंचलिक और सांस्कृतिक छुवन को देखकर यह घोषित करना कि उसके शिल्प की यही सीमा है, नितांत भ्रामक होगा. जहां कहीं मूल्यों और मान्यताओं की टकराहट और टूटने के संदर्भ उपस्थित होते हैं लेखिका आधुनिक ही नहीं, अत्याधुनिक रूप में प्रस्तुत मिलती है. उसके रचनात्मक संसार में इन स्थितियों के सूक्ष्म-से-सूक्ष्म चित्र उपलब्ध हैं. लेकिन लेखिका की आश्वस्ति उसके प्रति नहीं होती है. वह अपनी भारतीयता की जमीन को छोड़ने के लिये तैयार नहीं होती है. उसमें 'पिता' का स्वर प्रधान होता है. वह 'उपलब्धि' में कहता है. ''यह झूठी स्पर्द्धा, यह खोखला स्तर-बोध, दिखावे से भरी यह जीवन व्यवस्था इसी जादू के कई रूप हैं. बहू!'' (पृष्ठ 149)

इस अपनी जमीन से जुड़े होने के शिल्प का एक स्वाभाविक परिणाम होता है आशीवादिता और रचनात्मक दृष्टि का सम्मान. इसे 'सरबहारा' शीर्षक कहानी में देखकर ऐसा लगता है कि ऋता की कहानियां लिखी नहीं जाती हैं बल्कि परिवेश के भीतर से कहानी का ढांचा तोड़कर स्वयं बढ़ जाती हैं. समय की तेज़ रफ़्तार का ज्ञान भी लेखिका को है. इसके भीतर जो कुछ भी पुराना है उसके प्रति सम्मान तो है परंतु उसे उसी रूप में बचाने का आग्रह नहीं है. अंतरविरोधों की कड़ी चट्टान के भीतर निहित जलस्रोत की भांति तरल मानवीयता के अन्वेषण में ही ऋता शुक्ल की कहानी-कला की ऋद्धि-सिद्धि है, उसी में तृप्ति और रोमांच है. वह जीवन के चित्रों को जो अधिकांश रूप में रेखाचित्र होते हैं कहानियों में इस प्रकार प्रस्तुत करती है कि वही अपने आप में जीवन का भाव्य भी होता है. नाना-नानी के अतिरिक्त खेत, बाग, मंड़ई, मकई, चिरई-चुनमुन नैहर-सासुर, चौपाल और चूल्हे-चौके के सजीव परिवेश को प्रस्तुत करने के पीछे उसकी अपरिसीम आत्मीयता और संवेदना होती है. लेखिका आधुनिकता के धक्के को बरदाश्त न कर सकने के कारण टूटती ग्राम संस्कृति और समाज के संदर्भ में एक ओर अकुलाहट से भर उठती है तो दूसरी ओर पारिवारिक जीवन के उस पक्ष के संदर्भ में जो परंपरागत होते हुए भी अत्यंत क्रूरता से परिपूर्ण है क्षोभ से भर उठती है.

अपनी जमीन से जुड़ी ग्रामात्मा के साक्षात्कार के रूप में सृष्ठ ऋता शुक्ल की कहानियां विभिन्न सामाजिक रिश्तों को बदलते संदर्भों में प्रस्तुत करती है. ये रिश्ते कभी-कभी ऐसा लगता है कि देश की कोख से जन्म ले रहे हैं. ऐसी स्थिति में लेखिका के भीतर उनके स्वागत का भाव नहीं बल्कि 'उस आदिम अंधेरे के प्रति मुष्ठि बद्ध' हो जाने का भाव होता है. (पृ. 165) लोकगीतों और लोककथाओं की कोमलता और तरलता के साथ अंतरसंघर्ष की बुनावट को भी प्रस्तुत करना कला का एक विशिष्ट कमाल है. 'प्रतीक्षा' 'सातवीं बेटी' 'कदली के फूल' और 'आइल गवनवा की सारी' शीर्षक कहानियों में ऐसी ही स्थितियां हैं. इनमें किस्सागोई के अंदाज उभरे हैं और पुराने लोकगीतों को नये जमीन की ताजगी देने के तेवर भी. कहीं कोई सोनहुला काकी जैसे मरदानी नारी है जो बहादुरी के साथ अकेलेपन से जूझ रही है. कहीं कोई छोटकी काकी है जिसकी सात उपेक्षिता बेटियां पूरे समाज के लिए एक चुनौती हैं. कहीं कोई कमला नानी है जो अपने आप में पिछली एक शताब्दी के सामाजिक इतिहास और संस्कृति के उतार-चढ़ाव की बोलती कहानी है. बेशक, कमला नानी के चित्रों वाली 'आइल गवनवा की सारी' कहानी इस संकलन की बेजोड़ कहानी है. इसे पढ़कर पाठक समज सकेगा कि ऋता में कोमलता ही नहीं, कठोरता भी है. वह सांस रोककर उभरते आतंक, आवेग, ओज, वीरत्व और जय-पराजय के चित्रों के बीच बहुत तेजी से आगे बढ़ता है. सबसे विचित्र बात तो यह कि इस लंबी कहानी में खड़ी बोली और लोकभाषा भोजपुरी की सीमा एक प्रकार से टूट गयी है.

वास्तव में भाषा शिल्प की दृष्टि से ऋता शुक्ल की कहानियों का विश्लेषण बहुत ही महत्वपूर्ण है और विस्तार तथा अवकाश की मांग करता है. बहुत गझिन बुनावट में रत्नों की टांकी की भांति लोकभाषा के शब्दों का प्रयोग पाठकों को बारंबार चमत्कृत करता चलता है. गांव की प्रकृति और गंवई जन की अंतःप्रकृति तथा उनके संपूर्ण परिवेश की जो चित्र भाषा कृति में उभरी है, अत्यंत हो ताजी और अनुरंजनकारी हैं. आठवीं बेटी पैदा हो जाने, पर छोटकी काकी 'चुपचाप बड़ी-बड़ी हांड़ियों में उबलते धान-सी सींझती और उबलती रहें.' (पृष्ठ 162) ऐसी ग्रामगंधी उपभायें थोड़ी नहीं हैं. इस भाषिकी वैभव के रोमांच को लेकर लेखिका समकालीन कथाकारों की कतार में अपनी पृथक पहचान लेती हैं. भोजपुरी भाषा का प्राण पिरोकर भोजपुर-प्रदेश की संस्कृति के बहाने लेखिका ने जो नये गांवों के बदलाव का दस्तावेज प्रस्तुत किया है उसमें यद्यपि आर्थिक और सामाजिक संघर्षों की खून से लिखी कहानियों की सनसनी नहीं है परंतु पारिवारिक जीवन के आंसुओं से लिखी इन कहानियों में जो सहज संवेदनीयता और ताजगी भरी प्रामाणिकता है वह एक उपलब्धि है. □

विवेकी राय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संकल्पा : सार्थक उपन्यास

रामदरश मिश्र

लेखक : रामदेव शुक्ल,
प्रकाशक : साहित्य संगम इलाहाबाद,
मूल्य - 25 रुपये.

शीर्षक से ही प्रकट है कि प्रस्तुत उपन्यास किसी संकल्पशील स्त्री की कहानी कह रहा है. हां, वह स्त्री है कमल. कमल पारंपरिक सोच और नियति ढोती स्त्रियों में खो जाने वाली स्त्री नहीं है बल्कि वह अनेक बिंदुओं पर अपनी उर्जा, तेज और विवेकपूर्ण निर्णयों से स्त्री की पारंपरिक जीवन पद्धति के विरुद्ध एक चुनौती रूप में उठती अस्मियता प्रदान करती हुई पुरुष निर्मित समाज-व्यवस्था को आहत करती है, क्षुब्ध करती है और उससे टकराकर स्त्रियों का अधिकार हासिल करना चाहती है.

कमल इकहरा पात्र नहीं है और न ही यह उपन्यास इकहरा है. कमल मातृपितृ विहीन लड़की है चाचा-चाची के आश्रय में पलती है और अपने साथ बलात्कार करने वाले लड़के को बड़े कौशल से पुरुषत्व विहीन कर देती है. केस चलता है, वह अडिग भाव से विरोधी वकील के गंदे सवालों से लड़ती है और वकील को हतप्रभ कर देती है. बलात्कारी लड़के की आत्महत्या और उसकी अपराध स्वीकृति मूल द्वंद्व के आधार पर कमल बरी हो जाती है किंतु सबसे बड़ा कठघरा तो समाज होता है. न्यायालय से निर्दोष साबित होने पर भी समाज स्त्री को निर्दोष कहां मानता है. कमल के साथ भी यही होता है. वह अपने परिवार से भाग कर अरुण की भाभी के पास आती है और उनके मानवीय साहचर्य में फलती-फूलती है. बार-बार शादी कर प्रस्ताव आनेपर उद्विग्न होती है. वह शादी के विरुद्ध नहीं है किंतु शादी को स्त्री को नियति मानने को तैयार नहीं है. स्त्री के जीवन का लक्ष्य किसी प्रकार शादी करके एक विशेष प्रकार के पारिवारिक ढांचे में जीते चलना ही तो नहीं है. उसे भी पुरुष के समान सपना देखने और सामाजिक परिप्रेक्ष्य में कुछ बड़ा काम करने का अधिकार होना चाहिए. वह अपनी बात अरुण और उसकी भाभी पर प्रकट कर लगातर उठने वाले शादी के प्रसंग को खत्म कर देती है. अरुण के साथ उसका रागात्मक लगाव है किंतु वह उस रागात्मक लगाव के वेग को भीतर-भीतर जीती हुई भी विवाह से मना कर देती है. कमल के जीवन का यह प्रसंग संवेदना से संश्लेष से गर्भित है. किसी को चाहकर भी उससे विवाह न करना और विवाह कर्म का सर्वथा निषेध कर उसे केवल स्थगित रखना और अपने जीवन विकास के लिए संघर्ष करना, अपने जीवन विकास को सामाजिक जीवन विकास के साथ जोड़े रखना, जीवन संघर्ष में अपने प्रिय व्यक्ति के सहयोग की भी उपस्थिति अनुभव करते रहना जीवन का जटिल अनुभव क्रम है.

किंतु यह केवल कमल की कथा कहने वाला उपन्यास नहीं है. यह अपने लघु कलेवर में आज के समाज के सही गलत न्यायं-अन्याय, मानवीयता अमानवीयता के संघर्ष की भी कथा बन गया. कमल की कथा एक बड़ी कथा से जुड़ती है. वह कथा है — अरुण उसके भाई वकील साहब और उसकी भाभी की. और वह कथा भी केवल इन तीन पात्रों की नहीं है वरन उन अनंत पात्रों की है जिनके ये प्रतिनिधि हैं. वकील साहब अर्थलोलुप पढ़े-लिखे नवधनाढ्य वर्ग के प्रतिनिधि हैं. विपरीत उनका छोटा भाई अरुण है जो अत्यंत सहृदय तथा मानवीय मूल्यों का पक्षधर है. भाभी अपने पति के विपरीत अत्यंत करुणाशील और ममतामयी है. वे अरुण को अपने बच्चे की तरह प्यार देती है. वे मानव मूल्यों के बिंदु पर अपने पति का विरोधी करती है और स्पष्टतया अपने देवर के साथ खड़ी मालूम होती हैं. इस पारिवारिक द्वंद्व के कई संदर्भ आते हैं. जिनमें प्रमुख हैं — दरवाजे पर के नीम का कटना, प्रधान का चुनाव, और सामाजिक हित में इस परिवार के खेतों का इस्तेमाल होने की समस्या. यानी लेखक ने सामाजिक संघर्ष की शुरुआत परिवार से ही की है.'

रामदव जी ने प्रगतिशीलता को एक खोखली और तेज बजने वाली अवधारणा के रूप में प्रयुक्त नहीं किया है बल्कि उसमें विवेक और रागात्मकता के संक्रांत दंग भरे हैं. वकील साहब अपने दरवाजे का नीम का पेड़ कटवा रहे हैं. अरुण विरोध करता है. आधुनिक दृष्टि से देखा जाये तो पेड़ के प्रति संसक्ति एक रुमानी वृत्ति है. पेड़ को काटकर एक बंगला बनवाया जाना है जिसमें लोग बैठेंगे, पंचायत संबंधी मंत्रणा होगी. आखिर आधुनिक-मूल में कल-कारखानों की स्थापना के लिए पेड़-पौधों के काटना ही होता है. करुण पेड़ के माध्यम से अतीत को देखता है.

अरुण पेड़ के माध्यम से उस रागात्मक मूल्य की पक्षधरता करता है जिसे काट फेंकने के लिए वकील साहब जैसे बुद्धि व्यवसायी तुले हुए हैं. अरुण प्रधान के चुनाव में वकील साहब का विरोध करता है. वह जानता है कि उसके धूर्त साहब अपने चमचे को प्रधान बनवाकर इस देहात के जीवन का शोषण करेंगे. अतः वह उनके उम्मीदवार के विरोध में भोला जैसे बोड़ को खड़ा करता है जो चुनाव के दिन लापता हो जाता है. कुर्सी पर जूता छोड़कर अरुण जानता है कि भोला का चयन बहुत आदर्श चयन नहीं है किंतु चुनाव की जिस गरीज स्थिति में अरुण फंस गया था उससे तात्कालिक राहत पाने के लिए उसे सामने भोला ही दिखाई पड़ता है. वास्तव में भोला का चयन अरुण के विवेक का नहीं बल्कि अन्याय का किसी भी प्रकार विरोध करने की बेचैनी का परिचायक है. प्रधान के चुनाव के समय होने वाले क्रूर गांठजोड़, अमानीवय हरकतों और बेईमानियों का थोड़े में अच्छा रेखांकन हुआ है.

उपन्यास अत्यंत पाठनीय है. उसकी पाठनीयता इस कारण तो है ही कि उसमें वस्तु और भाषा की कृत्रिम दुरूहता से बचा गया है.''

हिन्दी में पत्राचार द्वारा गृह सज्जा सीखिए

इन्टीरियर डेकोरेशन

(सर्टीफिकेट एवं हॉबी कोर्स)

- गृहसज्जा का तकनीकी ज्ञान प्राप्त करें
- सुविधानुसार घर बैठे खाली समय में अध्ययन करें
- आसान भाषा में विशेषज्ञों द्वारा तैयार पाठ्यक्रम
- मंहगी पुस्तकें खरीदने की जरूरत नहीं
- कोर्स फीस का आसान किश्तों में भुगतान
- कोई तकनीकी न्यूनतम योग्यता आवश्यक नहीं

विवरण के लिए जवाबी लिफाफा भेजें :-

AID **एकैडमी ऑफ इन्टीरियर डेकोरेशन**
10A / 14 शक्ति नगर, दिल्ली-110007.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ास

संबंधी मंत्रणा
मूल में कल-
लिए पेड़-पौधों
पेड़ के माध्यम

ध्यम से उस
रता करता है
ल साहब जैसे
अरुण प्रधान
म का विरोध
क उसके धूर्त
ान बनवाकर
ग करेंगे. अतः
रोध में भोला
है जो चुनाव
कुर्सी पर जूता
के भोला का
नहीं है किंतु
में अरुण फंस
ाहत पाने के
ाई पड़ता है.
रुण के विवेक
सी भी प्रकार
रिचायक है.
ने वाले क्रूर
कतों और
छा रेखांकन

है. उसकी
ही कि उसमे
हता से बचा

ेशन

डेकोरेशन
-110007.

डायमंड पाकेट बुक्स में

पेश करते हैं —
एक महान उपन्यासकार

विक्की आनन्द

का नया जासूसी उपन्यास

घुंघट

6/-

- लेखक का दावा है कि यह घुंघट उपन्यास आपको पसंद आयेगा।
- एक नई किस्म के जासूसी उपन्यासों की परम्परा इस उपन्यास से शुरू होगी।
- विक्की आनन्द के उपन्यासों में रहस्य, रोमांच और इन्वेस्टीगेशन का अनूठा समन्वय है कि आप उपन्यास को एक ही बार में पूरा पढ़े बिना नहीं छोड़ पायेंगे।

लाखों पाठकों के प्रिय उपन्यासकार

समीर

का नया उपन्यास

नकाब

6/-

सस्पैंस थ्रिल और एक्शन के जादूगर

राहुल

का नया रोमांचकारी उपन्यास

दोषी कौन

डायमंड पाकेट बुक्स प्रा.लि. 2715, दरियागंज, नई दिल्ली-110002

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अगला अंक

दुनिया भर को झूठ और फरेब के गुंजलक में फंसाकर भी क्या आप अपने आप से आंखे चुरा सकते हैं...?

अपराध और आत्म स्वीकृति के आइने में इंसान को समझने की रचनात्मक कोशिश...

अपराध और आत्मस्वीकृति

पर आधारित कथा-रचनाओं के विशिष्ट खंड के विश्वविख्यात रचनाकार हैं–
तुर्गनेव, पर्ल बक, जॉन ओ' हारा, सामरसेट मॉम, डेविड मार्शल, अल्बर्तो मोराविया, पीटर लैंग, थॉमस मस्तर, क्वोक चियो हो और एम. देलारु.

... और साथ में

प्रेमचंद की पुण्यतिथि पर विशेष... हिंदी में अब तक अप्राप्य तीन महत्वपूर्ण रचनाओं का धारावाहिक सिलसिला...

स्थायी स्तंभों सहित

द्विजेंद्र नाथ मिश्र 'निर्गुण', चंद्रकांता, हरिहर द्विवेदी और संगीता सिंह की ताजातरीन कहानियां.

अक्तूबर : 1988

हर महीने पत्रिका की कीमत पर
एक समूची किताब का भरा- पूरा संसार

सारिका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मधुमेह, हृदयरोग, एलर्जी या अल्सर जैसे भयानक रोगों से निबटने में डाक्टर से भी ज्यादा आपकी अपनी भूमिका आवश्यक है

अपने रोग का आधा इलाज आपके हाथ में है, बशर्ते--- इसके कारणों, लक्षणों, जटिलताओं, सावधानियों और रोकथाम के बारे में आपको जानकारी हो...

इसके लिए पढ़िए

इंग्लैंड के प्रसिद्ध डाक्टरों एवं विशेषज्ञों द्वारा लिखित लाखों की संख्या में बिकने वाली प्रसिद्ध ब्रिटिश

पॉकेट हैल्थ गाइड्स

(अब हिन्दी में भी उपलब्ध)

- पाकेट हैल्थ गाइड्स इन बीमारियों के कारणों, जटिलताओं, सावधानियों तथा रोकथाम के उपायों के बारे में आपका ज्ञानवर्द्धन करेंगी।
- चित्रों और तालिकाओं के माध्यम से दी गई तकनीकी जानकारी को सरल व सुबोध भाषा द्वारा आसानी से समझने योग्य बनाया गया है।

हिन्दी में 16 तथा अंग्रेजी में 18 पाकेट हैल्थ गाइड्स

1. **Allergies**—*Robert Eagle* .... एलर्जी
2. **Anaemia**—*Dr. Alexander D. G. Gunn* .... रक्तक्षीणता
3. **Arthritis & Rheumatism**—*Dr. Fernandes* .... संधिशोथ एवं गठिया
4. **Asthma**—*Robert Eagle* .... दमा
5. **Back Pain**—*Dr. Paul Dudley* .... पीठ का दर्द
6. **Children's Illnesses**—*Dr. Luke Zander* .... बच्चों के रोग
7. **Circulation Problems**—*J. A. Gillespie* .... रक्त-संचार की समस्याएं
8. **Cystitis**—*Diane Fernyhough* ....
9. **Depression & Anxiety**—*Dr. Arthur Graham* .... अवसाद और चिंता
10. **Diabetes**—*Dr. Alexander D. G. Gunn* .... मधुमेह
11. **High Blood Pressure**—*Dr. James Knapton* .... उच्च रक्तचाप
12. **Heart Trouble**—*Dr. Simon Joseph* .... हृदय रोग
13. **Hysterectomy**—*Wendy Savage* ....
14. **The Menopause**—*Dr. Margaret Thom* .... रजोनिवृत्ति
15. **Migraine**—*Dr. Finlay Campbell* .... आधासीसी का दर्द
16. **Peptic Ulcers**—*Dr. Finbarr Martin, Dr. Daniel Stiel* . पैप्टिक अल्सर
17. **Pre-Menstrual Tension**—*June Clark* .... रजोपूर्व तनाव
18. **Skin Troubles**—*Deanna Wilson* .... त्वचा-रोग

मूल्य 5/- प्रत्येक
डाकखर्च 2/- प्रत्येक

"I would not hesitate to recommend any of these books to patients suffering from the conditions they describe."
"इनमें से किसी भी रोग से ग्रस्त रोगी को मैं निस्संकोच संबंधित पुस्तक पढ़ने की सलाह दूंगा।" —BRITISH MEDICAL JOURNAL

Also available in English

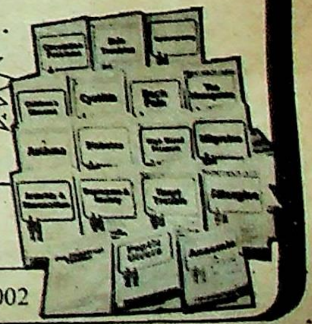

अपने निकट के बुक स्टाल एवं ए.एच. व्हीलर के रेलवे तथा बस अड्डों पर स्थित बुक स्टालों पर मांग करें या वी.पी.पी. द्वारा मंगाने के लिए लिखें

VAN PM 34 88

पुस्तक महल, खारी बावली, दिल्ली-110006

नया शो रूम: 10-B. नेता जी सुभाष मार्ग, दरिया गंज, नई दिल्ली-110002

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोकतंत्र,
समाजवाद, धर्मनिरपेक्षता,
एकता और अखंडता—
शांति और प्रगति के
सशक्त आधार

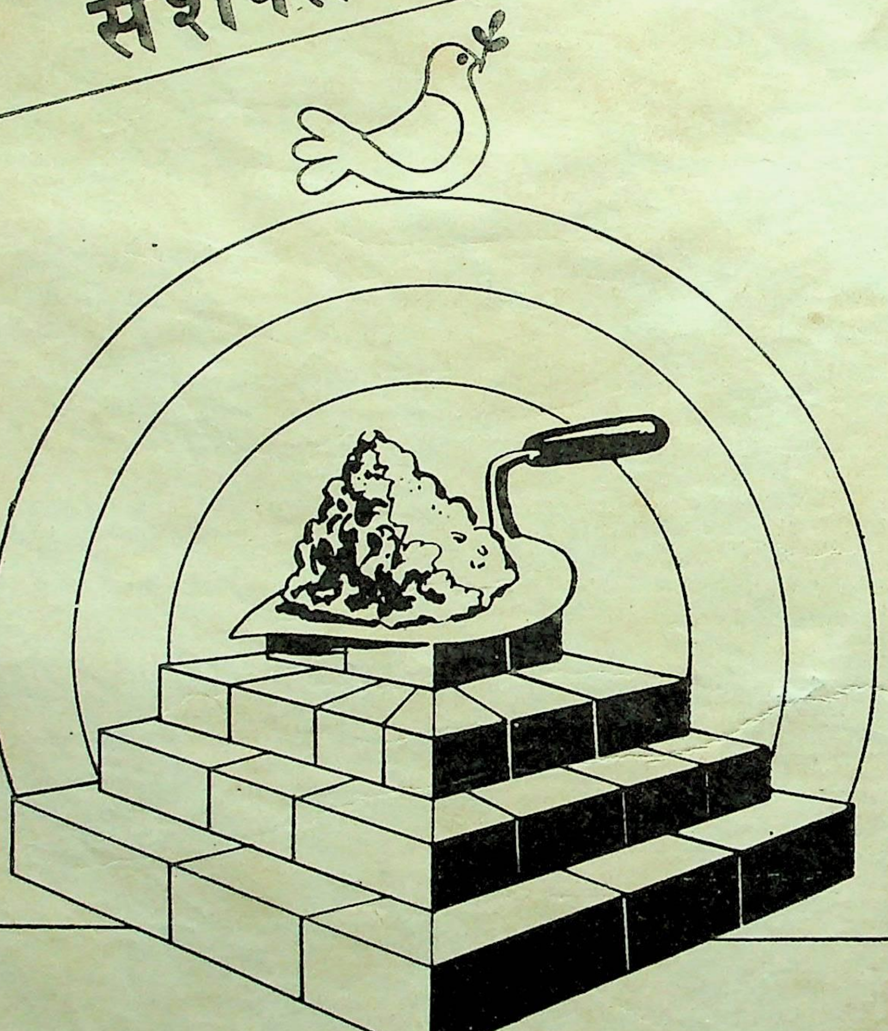

davp 88/243

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar